Vol. 3 No.1&2 YEAR- 2018 ISSN -: 2456-3579

संयुक्तांक

Impact Factor
4.584 SJIF

WRITERS VIEW

An Interdisciplinary, bilingual, bi-annual, a peer review or refereed,
Indexed & Open Accesses International Research Journal

http://www.gorakhpurjournals.in

Editor

DR. AJAY KUMAR SINGH

SUBODH KUMAR MISHRA

Vol. 3 No.1&2 YEAR- 2018 *ISSN -: 2456-3579*

संयुक्तांक

Impact Factor
4.584 SJIF

WRITERS VIEW

An Interdisciplinary, bilingual, bi-annual, a peer review or refereed, Indexed & Open Accesses International Research Journal

http://www.gorakhpurjournals.in

Editor

DR. AJAY KUMAR SINGH

SUBODH KUMAR MISHRA

GORAKHPUR (U.P)

Patron

Prof. Himanshu Chaturvedi (Gorakhpur)

ADVISORY BOARD

Prof. A. S. Rawat (Nainital)
Prof. V. K. Srivastava (Sagar)
Prof. C. M. Aggrawal (Almoda)
Prof. Ashok Kumar Singh (Varanasi)
Prof. Nidhi Chaturvedi (Gorakhpur)
Prof. Abha R. Pal (Raipur)
Prof. Vipula Dubey (Gorakhpur)
Prof. Kirti Pandey (Gorakhpur)
Prof. Geeta Srivastava (Meerut)
Prof. M M Pathak (Gorakhpur)
Prof. Sumitra Singh (Gorakhpur)
Prof. Sandeep Kumar (Gorakhpur)
Prof. Shikha Singh (Gorakhpur)
Prof. Ashish Srivastava (Gorakhpur)
Dr. Rajesh Nayak (Chapara)
Prof. Shushil Tiwari (Gorakhpur)
Prof. Vinod Kumar Singh (Gorakhpur)
Dr. Vimlesh Mishra (Gorakhpur)
Dr. Pragya Mishra (Faizabad)
Mr. Alok Kumar Yadav (HNB Central Unversity, Tihari Campus)
Dr. Dinesh Kumar Gupt (Aligarh)

EDITORIAL BOARD

Dr. Praveen Kumar Tripathi
Dr. Abhishek Kumar Singh
Dr. Sachin Rai
Dr. Arbind Kumar Gupta
Dr. Anjana Rai
Dr. karn kumar
Dr. Srikant Chaudhary
Dr. Parikshit Dubey
Dr. Pragyesh Kumar Mishra

"शोध प्रपत्र में व्यक्त विचारों, सिद्धांतों, तथ्यों एवं संकल्पनाओं की जिम्मेदारी स्वयं लेखक के है। सम्पादक मण्डल की कोई जिम्मेदारी नहीं होगी।"

"The Responsibility for the facts given and opinions expressed in Articles/Research paper/Review in this journal, is solely that of the individual Author and not of the editor"

Authors your Research Paper on Mail- editor.writersview@gmail.com

Printed in India
Printed, published and owned by **Gorakhpur Journals** Printed at COMSERVISCES Industrial Area Wazirpur, Delhi

Scientific Journal Impact Factor

CERTIFICATE OF INDEXING (SJIF 2017)

This certificate is awarded to

Writers View
(ISSN: 2456-3579 (E) / 2456-3579 (P))

The Journal has been positively evaluated in the SJIF Journals Master List evaluation process
SJIF 2017 = 4.584

SJIF (A division of InnoSpace)

SJIFactor Project Manager
International Advisory Services
INNOSPACE INTERNATIONAL

SJIFactor Project

CONTENT

क्रम	शोध पत्र, लेखक	पृष्ठ सं.
1	साम्प्रदायिकता और विभाजन शचीन्द्र मोहन	1-8
2	धर्म और गाँधी : एक ऐतिहासिक अध्ययन डॉ. रामा कान्त शर्मा	9-15
3	नक्सलवाद समस्या के समाधान के प्रयास डॉ अरुण श्रीवास्तव	16-23
4	हिन्दी सिनेमा में दलितों और पिछड़ों का प्रतिबिम्बन डॉ. प्रवीण कुमार त्रिपाठी	24-29
5	भारत की न्याय व्यवस्था : अतीत और वर्तमान डॉ. कृष्ण कुमार	30-35
6	प्रभा कृत अहल्या में वर्णित स्त्री की स्वाधीन चेतना सोनम सिंह	36-41
7	भारत में ब्रिटिश शिक्षा का विकास डॉ. अनुपम सिंह	42-50
8	जलियांवाला बाग नरसंहार और भारतीय राष्ट्रवाद का दशा और दिशा डॉ अजय कुमार सिंह	51-59
9	विष्णु पुराण में वर्णित ऐतिहासिक राजाओं की वंशावली सुबोध कुमार मिश्र	60-63
10	ब्रिटिश आगमन के आरम्भिक काल में भारत की राजनीतिक और आर्थिक स्थिति डॉ. कुमारी प्रियंका	64-67
11	भारत का इजरायल के साथ संबंध और ईरान डॉ. उपेन्द्र कुमार सिंह	68-72
12	चौरी चौरा की घटना : एक भ्रमित इतिहास अस्मित शर्मा	73-80
13	भगत सिंह का मुकदमा एवं उनके गवाह पंकज सिंह	81-83
14	भाई जी हनुमान प्रसाद पोद्दार और सनातन संस्कृति जयगोपाल मधेशिया	84-88
15	सयुंक्त प्रान्त में भूराजस्व व्यवस्था एवं कृषक संघर्ष सतीश चहल	89-93
16	पूर्वोत्तर भारत में उग्रवाद : एक अध्ययन परमजीत राम	94-106
17	दक्षिण एशिया का भू-स्त्रातजिक तथा सामरिक महत्व डॉ. शुभ्रांशु शेखर सिंह	107-119
18	Philosophy of Non-Dualism in Raja Rao's The Serpent and The Rope Dr. Meeta	120-128

verify UGC API

Table 2

Methodology for University and College Teachers for calculating Academic/Research Score

(Assessment must be based on evidence produced by the teacher such as: copy of publications, project sanction letter, utilization and completion certificates issued by the University and acknowledgements for patent filing and approval letters, students' Ph.D. award letter, etc,.)

S.N.	Academic/Research Activity	Faculty of Sciences /Engineering / Agriculture / Medical /Veterinary Sciences	Faculty of Languages / Humanities / Arts / Social Sciences / Library /Education / Physical Education / Commerce / Management & other related disciplines
1.	**Research Papers in Peer-Reviewed or UGC listed Journals**	08 per paper	10 per paper
2.	**Publications (other than Research papers)**		
	(a) Books authored which are published by ;		
	International publishers	12	12
	National Publishers	10	10
	Chapter in Edited Book	05	05
	Editor of Book by International Publisher	10	10
	Editor of Book by National Publisher	08	08
	(b) Translation works in Indian and Foreign Languages by qualified faculties		
	Chapter or Research paper	03	03
	Book	08	08
3.	**Creation of ICT mediated Teaching Learning pedagogy and content and development of new and innovative courses and curricula**		
	(a) Development of Innovative pedagogy	05	05
	(b) Design of new curricula and courses	02 per curricula/course	02 per curricula/course
	(c) MOOCs		
	Development of complete MOOCs in 4 quadrants (4 credit course)(In case of MOOCs of lesser credits 05 marks/credit)	20	20
	MOOCs (developed in 4 quadrant) per module/lecture	05	05
	Content writer/subject matter expert for each module of MOOCs (at least one quadrant)	02	02
	Course Coordinator for MOOCs (4 credit course)(In case of MOOCs of lesser credits 02 marks/credit)	08	08
	(d) E-Content		
	Development of e-Content in 4 quadrants for a complete course/e-book	12	12
	e-Content (developed in 4 quadrants) per module	05	05
	Contribution to development of e-content module in complete course/paper/e-book (at least one quadrant)	02	02
	Editor of e-content for complete course/ paper /e-book	10	10
4	**(a) Research guidance**		

WRITERS VIEW
An Interdisciplinary, bilingual, bi-annual, a peer review or refereed International Journal
Vol. 3 No. 1&2 APRIL & OCTOBER Year 2018

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

1

साम्प्रदायिकता और विभाजन

शचीन्द्र मोहन
शोध छात्र, इतिहास विभाग
दीनदयाल उपाध्याय, गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

भारत का विभाजन एक दिन में घटित होने वाली घटना नहीं थी अपितु यह एक एक दीर्घ कालखण्ड में घटित होने वाली क्रमिक घटनाओं, स्वार्थी एवं नीतिगत मूल्यों का समग्र परिणाम था। यह सत्य है कि 14 अगस्त 1947 को भारत का विभाजन कर भारत एवं पाकिस्तान नाम से दो राष्ट्र निर्मित कर दिए गए किन्तु इस विभाजन की दरारें बहुत पहले दिखनी शुरू हो गई थी जिस पर अपेक्षित ध्यान न दिए जाने के कारण इसने एक ऐसी वृहद खाई का रूप धारण कर लिया जिसे चाहकर भी न पाटा जा सका और भारत विभाजित हो गया।

इस बात पर विद्वानों के बीच विवाद हो सकता है कि अंग्रेजों के आने के पूर्व हिन्दुओं और मुसलमानों में कितनी एकता एवं सहिष्णुता थी किन्तु इस बात को लेकर प्रायः आम सहमति है कि अंग्रेजों ने भारत आने के बाद निरन्तर हिन्दुओं व मुसलमानों के बीच अविश्वास बढ़ाने का प्रयत्न किया। यह साम्राजवादी दृष्टिकोण से आवश्यक एंव उचित भी था क्योंकि भारत अंग्रेजों की सत्ता की स्थापना के समय नाम के सही मुसलमान ही शासक थे। अंग्रेजों ने उन्हीं से औपचारिक रूप से सत्ता छीनी थी। इस कारण अपने शासन के प्रारम्भ से ही ईस्ट इण्डिया कम्पनी मुसलमानों से भय खाती थी। फलतः ब्रिटिश शासकों ने हरसंभव मुसलमानों का दमन करने की चेष्टा की तथा प्रशासन में हिन्दुओं की सहायता और राजभक्ति पाने की ओर अधिकाधिक उन्मुख हुए। यह भारतवर्ष में ब्रिटिश शासन का प्रथम आंग्ल–हिन्दू सहयोग का युग था।

ब्रिटिश शासन ने मुसलमानों के लिए सरकारी नौकरियों का द्वार बन्द कर दिया, इससे उनकी गरीबी में तीव्र वृद्धि होने लगी। ऊंचे पद यूरोपियनों को प्रदान किये गये और छोटे पद हिन्दुओं को। अंग्रेजी शिक्षा पद्धति के सूत्रपात ने मुसलमानों के आर्थिक और सांस्कृतिक अधःपतन को और भी तीव्र कर दिया।

यद्यपि 1857 का विद्रोह भारतीय जनता की ओर से ब्रिटिश शासन को सबसे पहली भयंकर चुनौती थी। इस विद्रोह में हिन्दू और मुसलमान कन्धे से कन्धा मिलाकर

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

लड़े, परन्तु साम्राज्यवाद सदैव ही जन–भावनाओं को समझने में असमर्थ रहा है और इसी कारण 1857 का विद्रोह अंग्रेजों की दृष्टि में एक राष्ट्रीय विद्रोह न होकर एक मुस्लिम विद्रोह था जिसके माध्यम से मुलसमानों ने मुगल शासन की पुनर्स्थापना करने की चेष्टा की थी।

1870 ई0 के पश्चात् ब्रिटिश नीति में परिवर्तन आया और भविष्य में मुसलमानों की ओर से किसी संकट का भय नहीं रह गया क्योंकि अब वे केवल अपनी शक्ति के बल पर विद्रोह करने में असमर्थ थे किन्तु अब भी वे पर्याप्त शक्तिशाली थे। 1870 ई0 के बाद ब्रिटिश नीति में परिवर्तन हुआ और अब आंग्ल–मुसलमान मित्रता की नींव पड़ी। भारत में आंग्ल–मुस्लिम मित्रता की दिशा में कार्य करने वालों में प्रसिद्ध नेता सर सैय्यद अहमद और अलीगढ़ कॉलेज में प्रिंसिपल मिस्टर बैक का नाम प्रमुख रूप से लिया जाता है।

प्रारम्भ में सर सैय्यद अहमद कट्टर राष्ट्रवादी होने के साथ–साथ राजनेता भी थे। भारतीयों के प्रति ब्रिटिश अधिकारियों की कटु निन्दा करते थे, और हिन्दू–मुस्लिम एकता के भी प्रबल समर्थक थे। इन दोनों जातियों को भारत माता की दो ऑखें बताते थे। सर सैयद अहमद के उपयुक्त राष्ट्रवादी विचारों के आधार पर कांग्रेस की स्थापना के बाद देश के एक बहुत बड़े वर्ग की आशा थी कि सर सैय्यद अहमद अखिल भारतीय कांग्रेस जैसे राष्ट्रीय संगठन के कर्णधारों में से एक होंगे, परन्तु अलीगढ़ कॉलेज के तत्कालीन यूरोपियन प्रिंसिपल मिस्टर बैक की कूटनीति का परिणाम था कि सर सैय्यद को बहका कर उनके हृदय में विश्वास जमा दिया कि आंग्ल–मुस्लिम गठबन्धन से मुसलमानो की स्थिति सुधरेगी और राष्ट्रवादियों के साथ मिलने से मुसलमानों के दुःख और कष्ट बहुत अधिक बढ़ जायेगें। मि.बैक सर सैय्यद पर इतने हावी हो गये कि उनकी राष्ट्रीयता अचानक साम्प्रदायिकता में परिवर्तित हो गयी और वे सरकार के खिलौने की भाँति आचरण करने लगे।

लार्ड कर्जन के शासनकाल में ब्रिटिश शासन द्वारा और अधिक स्पष्टता से मुस्लिम समर्थक और हिन्दू विरोधी नीति अपनायी गयी और इस नीति के प्रतीक के रूप में 1905 ई0 में बंगाल का विभाजन किया गया। बंगाल का विभाजन हिन्दुओं और मुसलमानों को एक दूसरे से दूर करने और बंगाल में 'राष्ट्रीयता' के बढ़ते हुए वेग पर आघात करने के उद्देश्य से ही किया गया था। इसके बाद लोकमान्य तिलक, लाला लाजपतराय और विपिनचन्द्र पाल जैसे नेताओं के नेतृत्व में काँग्रेस जैसे–जैसे उग्र संगठन बनती गयी, उसी अनुपात में ब्रिटिश शासन द्वारा मुस्लिम समर्थक और हिन्दू विरोधी नीति अपनायी जाती रही और 1911 तक यह प्रवाह अबाध रूप से जारी रहा।

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

1906 ई0 में एक ऐसी घटना घटित हुई जिसने हिन्दू–मुस्लिम संबंधों पर दूरगामी प्रभाव डाला और कालान्तर में भारतीय इतिहास को ही परिवर्तित कर दिया। अक्टूबर 1906 को सर आगा खाँ की अध्यक्षता में एक मुस्लिम प्रतिनिधिमंडल वायसराय से शिमला मे मिला। इस प्रतिनिधिमंडल ने वायसराय के सम्मुख यह माँग रखी कि आगामी संवैधानिक सुधारों में मुसलमानो के लिए साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व स्वीकार किया जाना चाहिए। वायसराय तो प्रतिनिधिमंडल की माँग को स्वीकार करने के लिए तैयार बैठे ही थे। वायसराय ने प्रतिनिधिमंडल को शिमला में अपने भवन में ही एक पार्टी दी तथा साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व का आश्वासन भी दे दिया।

1906 का मुस्लिम प्रतिनिधिमंडल का सम्पूर्ण आयोजन ब्रिटिश नौकरशाही द्वारा ही किया गया था। अपनी पृथकतावादी माँगों के प्रति ब्रिटिश सरकार के प्रोत्साहन और 1906 के शिष्टमंडल की सफलता से मुस्लिम नेताओं का उत्साह बढ़ा और वे मुस्लिम जाति के अखिल भारतीय संगठन की स्थापना की दिशा में तेजी से प्रयत्न करने लगे। ढाका के नवाब सलीमुल्ला खाँ ने 'आल इण्डिया मुस्लिम संघ' के नाम से एक राजनीतिक संगठन 30 सितम्बर 1906 को बनाया।

सन् 1909 के मिन्टो मोर्ले सुधार द्वारा हिन्दुओं तथा कांग्रेस के प्रभाव को कम करने के लिए विधान मण्डल में मुसलमानों को उनकी संख्या के अनुपात में अधिक स्थान दिया गया। सन् 1905 से सन् 1911 ई0 तक मुस्लिम लीग साम्प्रदायिक नीति पर ही चलती रही परन्तु कुछ समय के लिए मुस्लिम लीग के दृष्टिकोण में परिवर्तन हुआ और ब्रिटिश शासन से दूर हटकर काँग्रेस के निकट आ गयी, इसका कारण यह था बंगाल के विभाजन को पुनः रद्द करना। सन् 1911 से सन् 1922 ई0 तक लीग व काँग्रेस साथ–साथ चलती रही, परन्तु अचानक सन् 1923 ई0 के बाद लीग की नीति में परिवर्तन आ गया।

काँग्रेस–लीग समझौता 1916 के अनुसार काँग्रेस ने लीग के प्रति जो तुष्टीकरण नीति का आरम्भ किया, वह भारत के विभाजन के लिए जमीन तैयार कर दी। क्योंकि इस समझौते में काँग्रेस द्वारा स्वंय अपने सिद्धान्तों तथा राष्ट्रीयता की आहुति दे दी गयी थी। काँग्रेस द्वारा मुसलमानों की प्रतिनिधि संस्था के रूप में मुस्लिम लीग का अस्तित्व, साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व और मुसलमानों के लिए प्रतिनिधित्व में गुरूता को स्वीकार कर लिया गया था, जो काँग्रेस के अब तक के घोषित संकल्पों और सिद्धान्तों के नितान्त विरूद्ध था। इस समय काँग्रेस लीग के साथ समझौता करने के लिए इतनी अधिक उत्सुक थी कि '' काँग्रेस ने परिणामों का किंचितमात्र भी विचार न करते हुए कार्य किया।''

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

हिन्दू–मुस्लिम का यह सहयोग क्षणिक सिद्ध हुआ, क्योंकि दोनों मे अपना–अपना स्वार्थ था। साम्प्रदायिक विद्वेष की भावना हिन्दुओं में भी उग्र रूप धारण कर लिया था और मुस्लिम साम्प्रदायिकता को उग्र रूप देने का ही कार्य किया। साम्प्रदायिक विद्वेष की अग्नि इतनी तीव्र हो गयी कि अब इसने दंगों और उपद्रवों का रूप ग्रहण कर लिया। मालाबार में तो मोपला मुसलमान अपने हिन्दू पड़ोंसियों की पहले ही निर्ममतापूर्वक हत्या कर चुके थे। ब्रिटिश सरकार 'फूट डालो और राज्य करो' की नीति में संलग्न थी ही।'' मुस्लिम लीग ने अपनी पूरी शक्ति के साथ हिन्दुओं के अत्याचारों का ढ़िढोरा पीटना आरम्भ कर दिया। काँग्रेस को पद ग्रहण किये हुए मुश्किल से आठ महीने बीते होंगे कि मार्च 1938 में लीग ने पीरपुर के राजा की अध्यक्षता में एक समिति नियुक्ति की, जिसका उद्देश्य मुसलमानों व लीग के कार्यकर्ताओं पर किये गये अत्याचार की शिकायतों की जाँच करना था। 15 नवम्बर 1938 को समिति ने मुसलमानो के कष्टो की एक लम्बी सूची के रूप में अपनी रिपोर्ट पेश की और निष्कर्ष निकाला कि बहुमत के अत्याचार से बढ़कर और कोई अत्याचार नहीं हो सकता। 'पीरपुर रिपोर्ट' की तरह एक और रिपोर्ट जारी की गयी, जिसे शरीफ रिपोर्ट कहते हैं। इसमें भी साम्प्रदायिक भावनाओं को उत्तेजित करने वाली अनेक बातें थी।

परन्तु लीग का आरोपों की सच्चाई से कोई संबंध नहीं था, उसे तो मुसलमान वर्ग का समर्थन प्राप्त करना थ और इसमें उसे पूरी सफलता मिली। इन दुष्कर्मो के माध्यम से लीगियों ने मुसलमानों से कहा कि अगर तुम मुसलमान हो तो मुस्लिम लीग में आओ और मुसलमान लीग में इस तरह आये, जैसे यह उनका धार्मिक कर्तव्य हो। लीग की शक्ति का प्रमाण यह था कि 1937 और 1942 के बीच जो 61 उप निर्वाचन हुए, उनमें लीग ने 47 और काँग्रेस ने केवल 14 स्थान प्राप्त किये। मुसलानों में जिन्ना की प्रतिष्ठा 1937 से ही तेजी से बढनी प्रारम्भ हो गयी थी।

सन् 1937 और 1939 ई0 के बीच जिन्ना भारतवर्ष के सबसे बड़े मुसलमान नेता बन गये। जिन्ना अपने निरक्षर मुसलमान अनुयायियों में तिरंगे झण्डे, वन्दे मातरम और हिन्दू प्रचार आदि बातों के आधार पर इस बात का व्यापक प्रचार करने लगे कि काँग्रेस उसी प्रकार से केवल हिन्दुओं की प्रतिनिधि संस्था है, जिस प्रकार से मुस्लिम लीग मुसलमानों की। अब जिन्ना ने हठधर्मी नीति अपना लिया और 1939 तक लीग का काँग्रेस विरोध इतना बढ़ चुका था कि जब द्वितीय विश्वयुद्ध से उत्पन्न परिस्थितियों के कारण 8 प्रान्तो के काँग्रेस मंत्रिमण्डल ने त्यागपत्र दे दिया तो लीग ने 22 दिसम्बर 1939 को मुक्ति दिवस मनाया। 1939 में काँग्रेस द्वारा किये गये पद त्याग से ब्रिटिश शासन और

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

लॉर्ड लिनलिथगो ने लीग समर्थक और कांग्रेस की उपेक्षात्मक प्रवृत्ति अपना ली और शासन से प्रोत्साहन प्राप्त हो जाने पर लीग की शक्ति में और अधिक वृद्धि हो गयी।

1937 तक मुस्लिम लीग के द्वारा वह सब प्राप्त कर लिया गया जो पृथकतावादी प्रवृत्ति को अपनाकर प्राप्त किया जा सकता था। लीग एक प्रतिक्रियावादी संस्था थी और उसके पास सामाजिक और आर्थिक सुधार का कोई कार्यक्रम नहीं था, फिर वह मुस्लिम जनता पर किस प्रकार अपना प्रभाव बनाये रखती। पृथक मत, पृथक निर्वाचक मण्डल, पृथक प्रान्त और रक्षा कवच सबकी माँग की जा चुकी थी। अगला तर्कसंगत कदम पृथक राज्य की मांग करना था। पाकिस्तान की माँग चाहे तार्किक दृष्टि से मूखर्तापूर्ण, भौगोलिक दृष्टि से दुर्बल, आर्थिक दृष्टि से विनाशकारी और अल्पसंख्यक वर्गो की समस्या के समाधान के रूप में सर्वथा अस्वीकार्य क्यों न रही हो, मुस्लिम लीग को शक्तिशाली बनाये रखने में समर्थ थी।

सन् 1930 ई0 के लीग के इलाहाबाद अधिवेशन के अध्यक्षीय भाषण में सर मुहम्मद इकबाल ने 'पाकिस्तान' शब्द या राष्ट्र की माँग की थी। इसके बाद कैम्ब्रिज के कुछ मुस्लिम छात्र इकबाल के विचारों से प्रभावित हुए। 1933 में रहमत अली ने पाकिस्तान की स्थापना की एक योजना बनायी, जिसमें पंजाब, कश्मीर, सिन्ध, बलोचिस्तान और उत्तर–पश्चिम सीमा प्रान्त सम्मिलित किये जाने थे। 19 जनवरी 1940 को जिन्ना ने लिखा कि भारत में दो राष्ट्र हैं और दोनों को अपनी मातृभूमि के शासन में अलग–अलग दो राष्ट्र होना चाहिए। अन्ततः तीन महीने बाद ही जिन्ना ने पाकिस्तान का राग अलापना प्रारम्भ कर दिया।

मार्च 1940 के मुस्लिम लीग के लाहौर अधिवेशन में जिन्ना ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा– ''हिन्दू धर्म और इस्लाम धर्म शाब्दिक अर्थ में धर्म नही है, वरन् ये दो पृथक और स्पष्ट सामाजिक व्यवस्थाएँ हैं। हिन्दू और मुसलमान कभी एक संयुक्त राष्ट्र के रूप में रह सकते हैं यह एक कोरा स्वप्न है। राष्ट्र की किसी भी परिभाषा के अनुसार मुसलमान एक राष्ट्र है, अतः उनका अपना प्रदेश तथा राज्य होना चाहिए। जिन्ना द्वारा प्रतिपादित इसी सिद्धान्त के आधार पर लीग के लाहौर अधिवेशन में ही पाकिस्तान की स्थापना संबंधी प्रस्ताव द्विराष्ट्र सिद्धान्त के आधार पर स्वीकृत हुआ। जिन्ना के द्विराष्ट्र सिद्धान्त तथा लीग के पाकिस्तान प्रस्ताव से विभाजन की दिशा में सोचने वाली सभी शक्तियों को नया आधार मिला।

जिन्ना का 'द्विराष्ट्र सिद्धान्त' सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दोनों ही दृष्टिकोण से नितान्त त्रुटिपूर्ण था। मुस्लिम लीग समझती थी कि पाकिस्तान का निर्माण अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा का श्रेष्ठ उपाय होगा परन्तु वह धारणा दूरदर्शितापूर्ण नहीं थी। लीग

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

ने कभी यह विचार नहीं किया कि पाकिस्तान की स्थापना के बाद भी भारत में कुछ मुसलमान और पाकिस्तान में कुछ गैर मुस्लिम अल्पसंख्यक रह जाएँगे और अल्पसंख्यकों की समस्या पहले से भीषण रूप धारण कर लेगी।

मुस्लिम लीग अलग राष्ट्र के लिए अपनी माँग को दृढ़तापूर्वक अपनाये रही तथा जब कभी भी संवैधानिक गतिरोध को दूर करने के लिए कोई प्रयत्न किये गये तब पाकिस्तान की माँग ने उन्हें हमेशा ही असफल कर दिया। इन असफल प्रयत्नों में क्रिप्स प्रस्ताव, राजगोपालचारी योजना और कैबिनेट योजना प्रमुख है।

द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति पर प्रान्तों में चुनाव हुए, जिसमें 495 मुस्लिम स्थानों में से 446 स्थान प्राप्त करने में मुस्लिम लीग सफल रही। चुनाव परिणामों से मुसलमानों पर लीग का प्रभाव स्पष्ट हो गया था। ब्रिटेन के नये प्रधानमंत्री एटली ने भारतीय समस्या के हल के लिए मार्च 1946 में कैबिनेट मिशन भेजा, जिसने 16 मार्च 1946 को अपने प्रस्ताव प्रकाशित किये। मिशन ने लीग की पाकिस्तान संबंधी माँग के विषय में कहा कि साम्प्रदायिक समस्या के लिए पाकिस्तान एक स्वीकार्य हल नहीं है। लेकिन इसके साथ ही लीग को संतुष्ट करना भी जरूरी था और इस हेतु प्रान्तों के समूहीकरण की व्यवस्था की गयी। प्रान्तों के समूहीकरण की यह व्यवस्था कैबिनेट योजना का अनिवार्य अंग थी और लीग से इस बात के आधार पर ही कैबिनेट योजना को स्वीकार किया था।

परन्तु काँग्रेस से कुछ नेता प्रान्तों के समूहीकरण को एक ऐच्छिक बात मानते थे। इसी प्रकार का दृष्टिकोण अपनाते हुए काँग्रेस के प्रमुख नेता पं0 जवाहर लाल नेहरू ने 10 जुलाई 1946 को बम्बई में एक संवाददाता सम्मेलन में कहा कि संविधान सभा में जाकर हम जो कुछ करेगें, उसके लिए पूर्ण स्वतंत्र होगें। बड़ी संभावना यह है कि प्रान्तों के इस प्रकार के कोई वर्ग नहीं बनेगें। जिन्ना ने इस वक्तव्य पर शीघ्र ही अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कर दी। उसने कहा कि लीग ने पाकिस्तान की माँग को छोड़कर भारी त्याग किया था, किन्तु काँग्रेस ने प्रान्तों के अनिवार्य समूहीकरण को नहीं माना है। काँग्रेस संविधान सभा मे अपने बहुमत के बल पर मनमाना करना चाहती है इसलिए मुस्लिम लीग इस योजना को अस्वीकार करती है। लीग के द्वारा संविधान सभा की बैठकों में भी भाग लिया और लीग के इस बहिष्कार के साथ ही कैबिनेट योजना का अन्त हो गया। कैबिनेट योजना का यह अन्त दुर्भाग्यपूर्ण था, क्योंकि यदि इस योजना के आधार पर कार्य किया जाता तो भारत की एकता की रक्षा संभव थी।

सन् 1945 तक जब संवैधानिक उपायों से लीग को अपने लक्ष्य की प्राप्ति में सफलता नहीं मिली तो लीग ने मुसलमानों को साम्प्रदायिक उपद्रवों के लिए उत्तेजित करना प्रारम्भ कर दिया। कलकत्ता के समाचार पत्र 'दि स्टेट्समैन' ने 5 अगस्त,1946 के

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

अंक में मुस्लिम लीग के एक प्रमुख नेता शाहिद सुहरावर्दी ने लिखा–''रक्तपात और अव्यवस्था अनिवार्य रूप से अपने आप में बुराई नहीं है, यदि इनका प्रयोग श्रेष्ठ लक्ष्य के लिए किया जाये। मुसलमानों के सम्मुख इस समय कोई भी लक्ष्य पाकिस्तान से श्रेष्ठतर नहीं हो सकता।'' इसके बाद अब साधारण मुसलमान भी गली–कूची में नारे लगाने लगे– लड़कर लेगें पाकिस्तान, बँट के रहेगा हिन्दुस्तान।

राष्ट्रीय काँग्रेस और मुस्लिम लीग भारतीय राजनीति की दो बडी शक्तियाँ थीं और जब लीग को काँग्रेस की तुलना में असफलता प्राप्त हुई तथा मुसलमानों ने भी जब बहुत बड़े पैमाने पर लीग का समर्थन नहीं किया तो लीग ने मुस्लिम सहयोग प्राप्त करने के लिए झूठे और मजहबी प्रचार का आश्रय लिया। मुसलमान हिन्दुओं को काफिर तो कहते ही थे, अब उन्होंने इस्लाम खतरे में है ओर 'काफिर' का वध करना धार्मिक आदेश है, जैसी बातें कहनी शुरू कर दी। इसी बीच आग में घी का काम अंग्रेजों ने किया, क्योंकि पाकिस्तान का विचार, जिसने 1940 ई0 के बाद बड़े पैमाने पर साम्प्रदायिक उपद्रवों को जन्म दिया जो अर्ग्रेजों के मस्तिष्क की ही उपज थी। ब्रिटिश प्रशासन ने साम्प्रदायिक दंगों की रोकथाम के लिए उस चुस्ती और फुर्ती, उस सक्रियता और कुशलता का परिचय नहीं दिया जिसके लिए प्रसिद्ध था।

मुस्लिम लीग ने 16 अगस्त 1946 को प्रत्यक्ष कार्यवाही दिवस निश्चित किया। बंगाल की लीगी सरकार ने इस दिन सार्वजनिक छुट्टी कर दी। इस दिन कलकत्ता और सिलहट में गम्भीर उपद्रव हुए और अकेले कलकत्ते के नरमेध में लगभग 7000 व्यक्ति मारे गये। हिंसा की आग पूर्वी बंगाल जा पहुँची। नोआखाली और त्रिपुरा मे जो अत्याचार और रक्तपात हुआ, उसने चारों ओर आतंक पैदा कर दिया। बिहार, गढ़मुक्तेश्वर, लाहौर तथा रावलपिंडी में भी भीषण दंगे हुए। मुसलमानो ने हलाकू तथा चंगेज खाँ के दिन फिर से लाने की धमकी दी। बंगाल और पंजाब की सरकारों ने उपद्रवों को दबाने का कोई प्रयत्न नहीं किया। इस प्रकार कानून भंग के वातावरण में 20 फरवरी, 1947 को ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने घोषणा की कि ब्रिटिश सरकार जून 1948 के पूर्व ही भारतीयों के हाथों में शक्ति हस्तांतरण कर देगी।

स्थिति बद से बदतर होती जा रही थी और ऐसा प्रतीत हो रहा था कि भारत के विभाजन का एकमात्र विकल्प गृह–युद्ध ही है। इस पृष्ठभूमि में 3 जून 1947 को लार्ड माउण्टबेटन ने अपनी योजना पेश की जिसमें भारत तथा पाकिस्तान इन दो पृथक उपनिवेशों की स्थापना की व्यवस्था की गयी थी। काँग्रेस सहित मुस्लिम लीग ने इस योजना को स्वीकार कर लेना ही बुद्धिमत्तापूर्ण समझा। इस योजना के आधार पर ब्रिटिश संसद ने जुलाई 1947 में भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम स्वीकार किया। 14 अगस्त, 1947

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

को मि0 जिन्ना को पाकिस्तान का गवर्नर–जनरल घोषित कर दिया गया और इसी दिन पाकिस्तान ने एक वास्तविकता का रूप धारण कर लिया।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:

1. रामलखन शुक्ला, ''आधुनिक भारत का इतिहास,'' हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, संस्करण वर्ष–1995
2. डॉ0 पुखराज जैन, ''भारत में स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास'', साहित्य भवन, आगरा, संस्करण वर्ष–1993
3. विपिन चन्द्र अमलेश, त्रिपाठी वरूण डे, ''स्वतंत्रता संग्राम'', नेशनल बुक ट्रस्ट इण्डिया, नई दिल्ली, संस्करण वर्ष–1961
4. डॉ0 पुखराज जैन, ''भारत में स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास'', साहित्य भवन, आगरा, संस्करण वर्ष–1993
5. जी0एन0सिंह, ''भारत का वैधानिक एवं राष्ट्रीय विकास''
6. सुमित सरकार,''आधुनिक भारत'', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण वर्ष–1996
7. बी.एल. ग्रोवर, आधुनिक भारत का इतिहास, एस.चन्द एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली 2000
8. एल.पी.शर्मा, आधुनिक भारत, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा 2000

WRITERS VIEW
An Interdisciplinary, bilingual, bi-annual, a peer review or refereed International Journal
Vol. 3 No. 1&2 APRIL & OCTOBER Year 2018

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

2

धर्म और गाँधी : एक ऐतिहासिक अध्ययन

डॉ. रामा कान्त शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास विभाग
रामकृष्ण द्वारिका महाविद्यालय, पटना

महात्मा गाँधी भारत ही नहीं विश्व के महान विभूतियों में से एक थे, जिनका आविर्भाव एक युगान्तकारी परिघटना है, जिससे उन्हें 20वीं शताब्दी का सबसे महान व्यक्ति कहा गया। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में यदि उनकी महती भूमिका नहीं होती तो भारत आज किस स्थिति में होता यह एक ऐसा प्रश्न है जिसका उत्तर नहीं दिया जा सकता है। महात्मा गाँधी एक विशिष्ट एवं जटिल व्यक्तित्व के मालिक थे जिन्हें समझना और विश्लेषित करना एक दुरूह कार्य है। वे एक साथ ही स्वतंत्रता सेनानी, राजनीतिज्ञ और समाज–सुधारक आदि विशिष्ट गुणों से सम्पन्न सन्त थे'।[1]

महात्मा गाँधी का भारतीय जीवन दर्शन, धर्म, संस्कृति एवं धर्म ग्रन्थों के प्रति गहरा लगाव था। एक तरफ वे जहाँ विश्व के महान दार्शनिकों से प्रभावित थे तो दूसरे तरफ उनके जीवन पर भारतीय धर्म एवं दर्शन का बड़ा ही सुस्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। गाँधी जी जहाँ एक तरफ हिन्दू धर्म के बाह्य आडम्बरों को दूर करना चाहते हैं तो दूसरी तरफ उसके 'वसुधैव कुटुम्ब' के अवधारणा में पूर्णतः विश्वास रखते थे। गाँधी जी धर्म के आधार पर आदर्श समाज को स्थापित करना चाहते थे जिसे उन्होनें 'रामराज्य' के नाम की संज्ञा दी थी जो एक ऐसी स्वयं संचालित सुव्यवस्था होगी जिसमें किसी पर किसी तरह का समाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक दबाव नही होगा। महात्मा गाँधी वर्ण–व्यवस्था को हानिप्रद नहीं मानते थे। वर्ण व्यवस्था कार्य एवं प्रवृति पर आधरित एक सामाजिक वर्गीकरण था और धर्म से उसका कोई लेना देना नहीं था। इस व्यवस्था में सभी स्त्री–पुरूष और सभी धर्मों को आदर की दृष्टि से देखा जायेगा।

गाँधी मनुष्य से यह अपेक्षा करते थे कि वह सदा अपनी स्वार्थ पूर्ति को ही अपना लक्ष्य न बनाये बल्कि ब्रिटिश उदारवादी विचारक मिल की तरह वह मनुष्य के लिए यह भी संभव मानते थे कि वह सामाजिक हित के सामने अपने स्वार्थ को त्याग सकता है। जब गाँधी को अपने समय के समाज की व्यवस्थाओं से साक्षात्कार होता था तो अपने अन्य देशवासियों तथा अपने समय के अन्य विचारकों की तरह, वह उनके गुण–दोषों को

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

समझते समझाते थे तथा सामाजिक उद्देश्यों की छानबीन भी करते थे। इसलिए समाज के चरम उद्देश्य के रूप में सर्वोदय के सिद्धांत को उन्होंने आवश्यक माना। 'वास्तव में सर्वोदय संस्कृत भाषा के दो शब्दों 'सर्व तथा उदय' की संधि है। सर्वोदय का शाब्दिक अर्थ है, सबकी भलाई, सबका कल्याण सबका उत्थान।[2]

गाँधी के अनुसार समाज का आदर्श होना चाहिए, प्रत्येक व्यक्ति के जीवन के सभी क्षेत्रों में भलाई, उन्नति, विकास अथवा कल्याण। चाहे वह सामाजिक हो या सांस्कृतिक, धर्मिक हो या शैक्षिक, आर्थिक हो या राजनीतिक। ''गांधी के अनुसार समाज का सच्चा आदर्श होना चाहिए हर एक का जीवन के सभी क्षेत्रों में कल्याण।''[3]

गाँधी न केवल नागरिकों से समाज के प्रति ऐसे सभी दायित्व निबाहने के लिए कहते थे, बल्कि उनसे एक–दूसरे के प्रति अनेक सामाजिक दायित्व निबाहने के लिए भी कहते थे। गांधी यह भी मानते थे कि ''वर्तमान परिस्थिति में मनुष्य का जीवन इतना पूर्ण नहीं है कि वह पूरी तरह स्वयं संचालित हो सके।''[4] उनकी मान्यता थी कि बूढ़े लोगों के द्वारा चलाई जाने वाली सरकार भी बूढ़ी ही होती है, उसमें गतिशीलता कम होती है और उसमें राष्ट्र के दिशा–निर्देशन की योग्यता नहीं रह जाती है। इतना ही नहीं, उनकी यह भी मान्यता थी कि ''जनतांत्रिक समाज के शासन व्यवस्था में प्रत्येक विभाग योग्य तथा अनुभवी लोगों के हाथों में हो, जिससे शासन सुचारू रूप से चल सके।''[5] इसके अलावा कुछ ऐसे कार्य भी हैं, जो सत्ता के अभाव में संभव ही नहीं है। लेकिन इस दिशा में वे चाहते थे कि सत्ता का अधिकतम विकेंद्रीकरण कर दिया जाय। ''नागरिकों को साम्प्रदायवाद, जातिवाद, क्षेत्रवाद तथा अलगाववाद जैसी सामाजिक बुराइयों से दूर रहना चाहिए तथा सामान्य हित के पक्ष में जनमत जागृत करना चाहिए। साथ ही समाचार–पत्रों तथा विचार–पत्रों की निगरानी भी करनी चाहिए जिससे कि वे जनता को घृणा वैमनस्य अथवा हिंसा के लिए न उकसा सकें।''[6]

गाँधी जी का करिश्मा तथा इनके विशिष्ट स्वरूप को समझने के लिए गाँधी के जीवन–दर्शन का सम्यक् अवबोध आवश्यक है। उनके विविध कार्यों की विशिष्टता उनके जीवन–दर्शन से ही उद्भूत होती है। टॉयनबी ने उन्हें ''एक हिन्दू राजनीतिज्ञ संत''[7] कहा है। गाँधी जी जन्मतः हिन्दू थे और हिन्दू होने में वे गर्व का अनुभव करते थे किन्तु उनका यह भी दृढ़ विश्वास था कि हिन्दू धर्म किसी संकुचित पंथ अथवा आस्था का नाम नहीं है, अपितु यह सम्पूर्ण व्यक्तित्व को दिव्य बनाता है ईश्वर और सत्य पर्यायवाची शब्द हैं। उनके अनुसार सत्य और अहिंसा आदिकाल से प्रतिस्थापित मूल्य हैं और कोई भी व्यक्ति जो इनके अनुरूप अपने जीवन को ढाल कर चलता है उसे सच्चा हिन्दू कहा जा सकता है। इस प्रकार, हिन्दू धर्म की गाँधीजी की अवधारणा धर्म के आभ्यंतरिक पक्ष से

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

सम्बद्ध थी तथा उनलोगों से भिन्न थी जो धर्म को एक व्यापारिक कृत्य के रूप में ग्रहण करते हैं। ''गाँधीजी गीता को हिन्दू धर्म की बाइबल मानते थे। गीता में श्रीकृष्ण ने कहा है कि जो भी ईश्वर को जिस रूप में भजता है उसकी आस्था ईश्वर के उसी रूप विशेष में प्रबल होती है। गीता में यह भी कहा गया है कि भक्ति–भावना के साथ जिस मार्ग का भी अनुसरण करते हुये मनुष्य ईश्वर को पूजता है वे सभी मार्ग ईश्वर तक पहुँचते हैं।''[8] अतः एक सच्चे हिन्दू के लिए ईश्वर को अन्य रूपों और नामों से पूजने वाले लोगों के साथ द्वेष अथवा झगड़े का कोई कारण हो ही नहीं सकता।

इनके अनुसार ईश्वरपरायणता कष्ट में पड़े मानव की सेवा का ही दूसरा नाम है। अपने जीवन के अन्तिम दिनों में उन्होंने एक नास्तिक से कहा, ''वह मैत्री–भाव जिसके कारण तुम अपने भाई के कष्ट से दुःखी होते हो, ईश्वरपरायणता है। तुम अपने को नास्तिक कह सकते हो किन्तु जब तक तुमने अन्य मनुष्यों के साथ एकात्मकता का भाव विद्यमान है तुम व्यवहार में ईश्वर को स्वीकार करते हों।''[9] गाँधीजी का धर्म कभी भी उनके तर्क–बुद्धिपरक चिन्तन में रूकावट नहीं बना और न ही उन्हें इसके कारण भारतीय स्त्रोतों से इतर स्त्रोतों से विचारों को ग्रहण करने में कोई संकोच होता था। वे तर्क–बुद्धिपरकता को महत्व देते थे। तर्क बुद्धि की कसौटी पर खरा न उतरने पर शास्त्रों की उक्तियों को भी अमान्य करने में उन्हें कोई हिचकिचाहट नहीं थी। पूजा की अपनी अवधारणा को व्याख्यायित करते हुये गाँधी जी ने इस बात पर बल दिया कि यदि पूजा कर्म में प्रतिफलित नहीं होती है तो उसका कोई अर्थ नहीं है। ''गीता की पूजा इसे तोते की तरह रटने से नहीं हो जाती, अपितु इसमें निहित शिक्षाओं के अनुपालन से होती है। इसका पाठ करना अच्छा तथा श्लाध्नीय है किन्तु तभी जबकि इसकी शिक्षाओं के अनुरूप कर्म करने में यह सहायक उपादान बने।''[10]

गाँधी की परमात्मा संबंधी अवधारणा भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। उन्होंने परमात्मा का वह रूप देखा, जो सर्वगुण सम्पन्न है, एक ऐसी चरम वास्तविकता जो सबको जन्म देती है। सबका संचालन करती है और ऐसा सब करने के बावजूद वह निराकार है। इसलिए परमात्मा, सर्वशक्तिमान तथा सर्वत्र विराजमान होने के बावजूद, एक ऐसी शक्ति है, जो न दिखाई देती है, न सुनाई देती है और न महसूस होती है, लेकिन फिर भी जो अजर तथा अमर है। परमात्मा रूपी शक्ति का अंश हमारी आत्मिक शक्ति के रूप में हमारे जीवन का संचालन करती है। ''वास्तव में गाँधी ने परमात्मा के साकार रूप को स्वीकार न कर उसे निराकार ही माना। परमात्मा निराकार है, इसलिए आत्मा भी निराकार है। उन्होंने परमात्मा को एक ऐसी वाह्य शक्ति के रूप में देखा, जो सारे ब्रह्माण्ड का संचालन

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

करती है और आत्मा को एक ऐसी आंतरिक शक्ति के रूप में, जो हमारे निजी जीवन का संचालन करती है।''[11]

गाँधी धर्म को मानव और परमात्मा के बीच की एक कड़ी मानते थे। आत्मा का परमात्मा से एक ऐसा सीध संबंध है, जिसमें किसी बिचौलिये की आवश्यकता नहीं होती। धर्म हर व्यक्ति का निजी मामला है। राज्य को धर्म के मामले में दखल नहीं देना चाहिए। उसे तो सब धर्मों को समान समझना चाहिए, क्योंकि सभी धर्मों का आधार नैतिकता है। इसलिए, सब धर्म और सब धर्मों के अनुयायी समान हैं। जब ऐसा है तो राज्य उनके बीच भेद–भाव क्यों करे, क्यों किसी धर्म विशेष को राज्य–धर्म का स्थान दे और क्यों बाकी सब धर्मों को द्वितीय स्थान पर रखे, ऐसा करने से अनुचित भेदभाव होगा, इसलिए गाँधी धर्म प्रधान राज्य के पक्षधर नहीं थे। गाँधी एक ऐसे धर्म निरपेक्ष राज्य की कल्पना करते थे, जिसमें राज्य का व्यवहार सर्वधर्मसमभाव का होगा, जिसमें सभी धर्मों और उसके अनुयायियों का बिना किसी भेदभाव के समान दर्जा होगा। साथ ही हर व्यक्ति को आत्मा की अभिव्यक्ति का तथा किसी भी धर्म को मानने या न मानने का अधिकार होगा और राज्य धर्मिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेगा।

इस प्रकार हर नागरिक को चाहिए कि वह अपनी आत्मा का अनुसरण करे, असत्य और अन्याय का प्रतिकार करके सत्य और न्याय के रास्ते पर चले। अहिंसा और शांति का रास्ता अपनाये तथा हिंसा से जितना परे रह सके, ब्रह्मचर्य का पालन करे, ईश्वर के अलावा किसी और से न डरे। अपनी संस्कृति, सभ्यता, नैतिक मूल्यों तथा सभी सामाजिक संस्थाओं तथा व्यवस्थाओं को स्वीकार करे, जो उसे प्रासंगिक लगती हो। अपने देश में बनी वस्तुओं से प्रेम करे और उन्हें सादर स्वीकार करे। अपने धर्म का पालन करे तथा अन्य सभी धर्मों और उसके अनुयायियों के प्रति समान रूप से आदर भाव रखे। गाँधी के अनुसार 'गांधीवाद' नाम की कोई वस्तु है ही नहीं, और न मैं अपने पीछे कोई धर्म या सम्प्रदाय छोड़ जाना चाहता हूँ मेरा यह दावा भी नहीं है कि मैंने किसी नये सिद्धांत या शिक्षा का आविष्कार किया है मैंने तो जो शाश्वत सत्य है उनको अपने नित्य के जीवन पर और प्रतिदिन के प्रश्नों पर अपने ढंग से सिर्फ घटाने का प्रयास किया है। हमारे शास्त्रों में यह कहा गया है कि 'न हि सत्यात्परो धर्मः'। सत्य से परे कोई धर्म नहीं। किन्तु उनका कहना यह भी है कि 'अहिंसा परमो धर्मः'। गाँधीजी की राय में 'धर्म' शब्द का उपर का इन दो सूत्रों में भिन्न अर्थ है।

आज हम जिस दौर से गुजर रहे हैं, वह बहुत ही विचित्र दौर है। इस दौर में हम पाते हैं कि प्रायः अच्छे विचारों की उपेक्षा की जाती है, भुला दिया जाता है और हम ठीक उल्टे रास्ते पर चलने लगते हैं तब पिफर उन विचारों या व्यक्तियों से जुड़ा कोई

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

पर्व, तिथि या दिवस आता है तो हम उसको बड़े ही उत्साह के साथ मना लेते हैं और प्रायः ऐसे ही अवसरों पर हम उनकी प्रासंगिकता की बात करते हैं। इस दौर में मूल को विस्मृत कर दिया जाता है और प्रासंगिकता की याद की जाती है। यह भी एक बड़ी चिन्ता का कारण है। दहेज से सती जैसे प्रसंगों तक, अयोध्या के राम मंदिर से बाबरी मस्जिद तक, समाज की घुटन, जाति व्यवस्था के कारण फैले वैमनस्य एवं परिवार के दरकते रिश्ते जैसे समस्या का निराकरण नहीं हो पा रहा है। ऐसे विविध संकट से गुजर रहे समाज में गाँधी की प्रासंगिकता की बात 'दुःख में सुमिरण सब करें, सुख में करे न कोय' जैसी लगती है। देश पर आये ऐसे संकट में गांधी की प्रासंगिकता खोजनी हो तो सबसे पहले यही लगता है कि गांधी आज होते तो क्या करते, के बदले में यही सोचना चाहिए कि आज हम इन परिस्थितियों में क्या कर सकते हैं? यह हमारा सौभाग्य है कि उन्होंने हमें सीधा–साधा एवं साफ–सुथरा रास्ता दिखाया है, हर संकट से निपटने का एक दृढ़ लेकिन विनम्र धर्मिक एवं सामाजिक क्षेत्र में रास्ता दिखाया है। अगर हम वर्तमान संकट के इस दौर में अपनी प्रासंगिकता भूल गये तो गांधी की प्रासंगिकता भी किसी को याद नहीं रहेगी और यदि याद आएगी भी तो समारोहों, पर्वों और दिवसों पर जिनकी अपने आप में कोई सार्थक प्रासंगिकता नहीं है।

गाँधी जीवन भर सत्य की साधना और 'पीड़–पराई' के निदान के सतत् कोशिश में लगे रहे। उस जुस्तजू में उन्हें अपनों की बेरूखी भी सहनी पड़ी तथा सुकरात, गैलेलियो और ईसा मसीह की परम्परा में शहादत ही उनके हिस्से भी आई। गाँधी ने एक बार कहा था कि ''मुझे शहीद बनने की तमन्ना नहीं है। लेकिन अगर अपने धर्म की रक्षा का उच्चतम कर्त्तव्य पालन करते हुये मुझे शहादत मिल जाये, तो मैं उसका पात्रा माना जाऊँगा''[12] समाज के परिपेक्ष में गांधी ने इन्सान की जिन्दगी को टुकड़ों में बाँटकर नहीं देखा। अपनी अच्छाइयों और बुराइयों के साथ व्यक्ति उनकी कल्पना के केन्द्र में थे। व्यक्ति अपने पुरुषार्थ के बल पर ओसियानिक सर्किल में फैलता हुआ एक समाज बनता है। इसी क्रम में व्यक्ति और समाज एक–दूसरे पर निर्भर इकाइयाँ बनती है। अतः मूल्यों पर आधरित समग्रता की अवधारणा कभी भी उनके सपनों के ब्लूप्रिंट से ओझल नहीं हुई। धर्म के परिप्रेक्ष्य में उनकी अवधारणा इस उक्ति से परिलक्षित होता है कि मेरा हमेशा यह ख्याल रहा है कि मैं मुसलमानों को ज्यादा अच्छा मुसलमान, हिन्दुओं को ज्यादा अच्छा हिन्दू, ईसाइयों को ज्यादा अच्छा ईसाई और पारसियों को ज्यादा अच्छा पारसी बनाऊँ। शायद यही कारण है कि सहज संभावनाओं, इतिहास, परम्परा और तमाम दार्शनिक व्याख्याओं से बहुत आगे के एक अधनंगे फकीर गांधी ने अपने जिस हथियार, अहिंसा और सत्याग्रह से ब्रिटिश साम्राज्य की चूलें हिला दीं, आज फिर पूरी दुनिया के

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

लिए प्रासंगिक हो गया है। गांधी ने कहा था ''अगर मैं लम्बी बीमारी से नहीं, एक छोटे से फोड़े या फुंसी से भी मरूँ, तो लोगों की नाराजी मोल लेकर भी दुनिया के सामने यह जाहिर करना तुम्हारा फर्ज होगा कि मैं सच्चा महात्मा नहीं था, जिसका मैं दावा करता था। अगर तुम ऐसा करोगे तो मेरी आत्मा को शांति मिलेगी, फिर वह कहीं भी रहे। यह भी याद रखना कि अगर कोई गोली से मुझे मारना चाहे जैसी कि पिछले हफ्ते बम फोड़कर किसी ने कोशिश की थी–और मैं उफ् किये बिना उसकी गोली को खुली छाती पर झेल लूँ तथा ईश्वर का नाम रटते हुये देह छोडूँ, तभी यह कहा जायगा कि मैंने अपना दावा सच्चा साबित कर दिखाया है।''[13]

संयुक्त राष्ट्रसंघ की आमसभा में गत 16 जून को गाँधी के जन्म दिवस 2 अक्टूबर को विश्व अहिंसा दिवस के रूप में मनाये जाने का फैसला लिया गया है। वैश्विक समुदाय द्वारा भारत के राष्ट्रपिता को दिया गया यह एक सामूहिक सम्मान है। इस संदर्भ में लुई फिशर की एक टिप्पणी बहुत उपयुक्त है–अगर मानवता को जिन्दा रहना है, अगर सभ्यता को फलना–फूलना है, सत्य और अच्छाइयों को बरकरार रहना है तो बीसवीं सदी के बचे वर्ष और उसके बाद के दिन न लेनिन या ट्राटस्की के हों न माओ या होची के बल्कि महात्मा गाँधी को समर्पित हों...। महात्मा गाँधी ने भारत में नवराष्ट्रवाद एवं सत्याग्रह का पहला सफल प्रयोग किया था। यह नया राष्ट्रवाद सत्य, अहिंसा, मानवीयता और विश्व प्रेम पर आधरित होने के कारण विशिष्ठ था।

संदर्भः

1. द्र० एन० सुब्रमनियम ''गांधी : ऐन इन्टलेक्चुअल असेसमेंट''–क्वेस्ट नवम्बर–दिसम्बर, 1975, पृ० 47
2. शारदा शोभिका, पूर्वोक्त सं० 5, 267–268
3. वी० पी० वर्मा, दि पोलिटिकल फिलॉसफी ऑफ महात्मा गांधी ऐंड सर्वोदय, आगराः लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, 1972, 88
4. बी० एल० फाड़िया, आधुनिक भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक चिंतन, आगराः साहित्य भवन, 1989, 328
5. यंग इंडिया, (अहमदाबाद), 26–12–1924, 423
6. रामरतन, पूर्वोक्त संख्या 4, 80–81
7. टॉयनबी, पूर्व, पृ० 251
8. डी० एस० शर्मा द्वारा एसेन्स ऑफ हिन्दुइज्म, पृ० 61 पर उद्धृत
9. गोरा, ऐन अथेइस्ट विद गांधी, पृ० 29

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

10. हरिजन, दिनांक 03–03–1946
11. रामरतन पूर्वोक्त सं० 33, 5–6
12. दि माइन्ड ऑफ महात्मा गांधी, पृ० 9, आर० के० प्रभु और यू० आर० राव, 1945, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, लन्दन
13. महात्मा गांधी, दि लास्ट फेज, खंड–2, पृ० 766, प्यारेलाल, प्रकाशकः नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद–14 (ये उद्‌गार 29 जनवरी, 1948 के दिन–गोली लगने के बीस ही घंटे पहले प्रकट किये गये थे)

WRITERS VIEW
An Interdisciplinary, bilingual, bi-annual, a peer review or refereed International Journal
Vol. 3 No. 1&2 APRIL & OCTOBER Year 2018

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

3

नक्सलवाद समस्या के समाधान के प्रयास

डॉ अरुण श्रीवास्तव
प्राचार्य, श्री मुरलीधर भागवत लाल महाविद्यालय, मथौली, कुशीनगर

नक्सलवाद के जन्म से अब तक विचारधारा और रणनीति के आपसी मतभेदों के चलते उनमें अनेक गुट बने। लेकिन 21 सितम्बर 2004 को पिपुल्स वार ग्रुप और भारतीय माओवादी कम्युनिस्ट सेंटर में आपसी समन्वयक से एक नयी पार्टी कम्युनिस्ट पार्टी आफ इण्डिया (माओवादी) गठित की। नक्सलवादी भारतीय संविधान को नही मानते। वे भारत की पूरी राजनीतिक व न्याय व्यवस्था को साम्राज्यवाद और सामंतवाद की कठपुतली और भारत के लोकतंत्र छदम लोकतंत्र कहते है। नक्सलवादी नेपाल से बिहार, उड़ीसा, झारखण्ड, छत्तीसगढ़ होते हुए आंध्र प्रदेश तथा तमिलनाडु तक एक 'सघन लाल गलियारा' बनाने का प्रयास कर रहे है। पश्चिम बंगाल के लालगढ क्षेत्र में जब 2009 में माओवादी ने एक बहुत बड़े क्षेत्र पर कब्जा कर लिया था तब नक्सलवाद की समस्या के विकराल स्वरूप से देश का सामना हुआ और सरकार को सेना की मदद लेनी पड़ी। पुनः 6 अप्रैल 2010 को हुई दांतेवाड़ा की घटना ने नक्सलियों के क्रूरतम चेहरे को बेनकाब किया है। नक्सलवादी समस्या से प्रभावी रूप से निपटने के लिए एक पूर्णतया पुलिस एवं सुरक्षा उन्मुखी नीति पर्याप्त नही है। केन्द्र सरकार का दृष्टिकोण एवं नीति है कि उग्रवादियों के विरूद्ध प्रो–एक्टिव एवं सतत अभियान चलाना आवश्यक है और इसके लिए सभी उपाय किये जाने चाहिए साथ ही विकास एवं सुशासन मुद्दों पर विशेषकर निचले हिस्सों पर (स्तरों पर) विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। इस उद्देश्य के लिए नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में समयबद्ध कार्यवाही योजना के अनुरूप सार्वजनिक विवरण प्रणाली का प्रभावी कार्यान्वयन करने, पेयजल सुविधाओं एवं अन्य आवश्यकताओं की व्यवस्था करने, स्वास्थ्य शिविर लगाने तथा साथ ही साथ समग्र विकास के माध्यम से दीर्घावधि उपाय करने की आवश्यकता है। इस सन्दर्भ में सरकार द्वारा चलाई जा रही राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना, पिछड़ा क्षेत्र अनुदान निधि, पिछड़ा जिला पहल, राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन योजना, सर्वशिक्षा अभियान, प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना और आदिवासियों से

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

सम्बन्धित योजनाओं के प्रभावी कार्यान्वयन से नक्सली क्षेत्रों का विकास कर नक्सलवाद को कमजोर किया जा सकता है।

नक्सली हिंसा के प्रसार एवं प्रवृत्ति के एक विस्तृत विश्लेषण के आधार पर 8 राज्यों के 34 गंभीर रूप से नक्सल प्रभावित जिलों का विकास योजनाओं के नियोजन, कार्यान्वयन एवं मानिटरिंग पर विशेष ध्यान देने के लिए चुना गया है। नक्सली समस्या से एकीकृत ढंग से निपटने की नीति के तहत विकास एवं सुरक्षा उपायों को समन्वित ढंग से आगे बढ़ाने के लिए कैबिनेट सचिव के अधीन एक उच्च स्तरीय कार्यबल का गठन किया। प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने नक्सली हिंसा की वृद्धि को देखते हुए इसे देश की आंतरिक सुरक्षा के लिए सबसे बड़ा खतरा बताया है। देश को नक्सली हिंसा से मुक्त कराने के लिए गृह मंत्रालय ने 2009 के आरंभ में 'नई पहल' (New Initiative) नामक एक योजना लागू की है। जिसके तीन प्रमुख अंग है–1. विशेष अध्ययन 2. सशस्त्र बलों की तैनाती और 3. विकास की पहल।

नई पहल योजना के तहत सभी माओवाद प्रभावित क्षेत्रों को विशेष अध्ययन के द्वारा सर्वाधिक संवेदनशील एवं कठिन क्षेत्रों का मानचित्रण कर लिया गया है। नई पहल योजना के तहत पहले चरण में महराष्ट्र, आंध्रप्रदेश, छत्तीसगढ़ से जुड़ने वाली सीमा पर स्थित महाराष्ट्र के गढचिरौली जिलों को चुना गया। गृहमंत्रालय द्वारा नवम्बर, 2009 में गढ़चिरौली क्षेत्र से ही 'आपरेशन ग्रीन हंट' की शुरूआत की गई। दो वर्षो की समयसीमा वाले इस आपरेशन के अन्तर्गत कमांडोज नक्सल प्रभावित क्षेत्र में जायेगें, वहॉ से नक्सलियों को पकड़ेंगे और वहीं पर डेरा डालेगें ताकि सरकारी मशीनरी क्षेत्र के विकास के लिए योजना बना सके। इस आपरेशन में कमांडो बटालियन फार रिज्योल्यूट एक्शन (कोबरा) को भी शामिल किया गया है। इस आपरेशन की बदौलत सुरक्षा बलों में 6 महीनों में लगभग 4000 वर्ग किमी का क्षेत्र नक्सलियों के कब्जे से मुक्त करवा लिया है। इस आपरेशन से नक्सली गुट भयभीत प्रतीत हो रही है। यहीं कारण है कि इस दौरान उनके हिंसक गतिविधियां बढ़ी है।

नक्सलवादी का खूनी संघर्ष गरीबों के नाम पर भलें ही खेला जाता हो, वास्तव में भारत की सम्पूर्ण अखण्डता, संविधान तथा लोकतंत्र के विरूद्ध है। इस दृष्टि से प्रधानमंत्री द्वारा नक्सल प्रभावित राज्यों के मुख्यमंत्रियों की बैढ़क में इस घिनौने आतंक से निपटने के लिए संयुक्त कमान और प्रयासों का 10 जुलाई, 2010 को लिया गया फैसला सर्वथा उचित है। नक्सलियों द्वारा कब्जाए गए इलाकों में हवाई हमलों को कोई भी नही मानता, क्योंकि इससे क्षेत्र के साधारण आदिवासियों के मारे जाने का खतरा है। फिर भी माओवादियों के खतरनाक ठिकानों का पता लगाने के लिए केन्द्र सरकार अधिक

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

संख्या में हेलिकाप्टरों तथा आधुनिक उपकरणों से मदद करेगी। नक्सल प्रभावित घने जंगलों में इसी प्रकार की छानबीन और गोपनीय अड्डों की जनकारी मिलने पर अर्द्धसैनिक तथा राज्यों के पुलिस बल इस क्षेत्र की सम्पदा तथा मासूम आदिवासियों की रक्षा कर सकेंगे। नक्सल प्रभावित राज्यों के सभी मुख्यमंत्रियों ने केन्द्र सरकार के साथ मिलकर नक्सली हिंसा रोकने और विकास कार्यो को आगे बढ़ाने पर सहमति व्यक्त की है। जिन कारणों से देश में नक्सलवाद को बढ़ावा मिला, दुर्भाग्य से वे सभी आज भी मौजूद है।

समाज में व्याप्त वर्गभेद के साथ गरीबी और बेरोजगारी भी इसका एक प्रमुख कारण है। भूमि सुधार कार्यक्रमों को ईमानदारी से लागू नहीं किया गया तथा आदिवासियों को आज भी सम्मानित नागरिक की तरह नहीं देखा जाता है। जब तक भूख, उत्पीड़न, दबाब, दहशत, पीड़ा एवं रोजगार वंचित आबादी रहेगी, तब तक असंतोष और विरोध ऐसे आंदोलनों को जन्म देते रहेंगे। इसलिए अत्यधिक गंभीर रूप ले चुकी नक्सलवादी–माओवादी हिंसा को कुचलने के साथ–साथ नक्सल प्रभावित आदिवासी क्षेत्रों के विकास के कार्यो को सर्वोच्च प्राथमिकता देना अति आवश्यक है।

नक्सलवाद की समस्या से निजात पाने के लिए सरकार विभिन्न उपायों का प्रयोग कर रही है जैसे 'सशस्त्र ऐरियल वैहकिल' जिसमें कैमरा, वीडियों, डाटा लिंक और अन्य आधुनिकीकृत खोजी हथियार लगे होगें। हिन्दुस्तान ऐरोनाटिक्स द्वारा निर्मित इस एक मशीन की कीमत 18 लाख रूपये है। भारत में नक्सल गतिविधियों से 10 राज्य और 90 जिले प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित है, जैसे आंध्रप्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, बिहार, झारखण्ड, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश, पं0 बंगाल, छत्तीसगढ़। इनकी भौगोलिक स्थिति से पता चलता है कि समस्या किसी एक क्षेत्र विशेष से संलग्न नही है, यह भौगोलिक, पारम्परिक और भाषायी सभी रूपों में भिन्न है। 20 राज्यों में कम से कम 6 प्रकार की भाषाएं बोली जाती है। इन भिन्नताओं के साथ वहॉ के रहने वालों में कुछ समानताएं भी है–एक सर्वेक्षण के अनुसार भारत के 100 गरीब जिलों में से 85 गरीब जिले उन्हीं 10 राज्यों में से 7 राज्यों में बसते है। नक्सल प्रभावित जिलों में रहने वाली जनसंख्या का 32 प्रतिशत निरपेक्ष रूप में गरीबी रेखा के नीचे है।

इन क्षेत्रों में राज्य सरकारों वस्तुऍ और सेवाऍ पहुचने में बहुत अच्छे मानक नही प्राप्त कर सकी है। मात्र 8.6 प्रतिशत घर ही ऐसे है जहॉ स्वच्छ पेयजल उपलब्ध हो पाता है। इन क्षेत्रों में रहने वाली जनसंख्या मुख्यतः जनजातीय है, जिन्हें हमारे कार्यालय के दस्तावेजों पर तो विशेष सुविधा व अधिकार दिये जाते है किन्तु वास्तविक रूप में ये अमानवीय व्यवहार और रूढ़िवादी जाति प्रथा के शिकार होते है। पश्चिम बंगाल जो अपने

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

को सामजवादी आदर्शवादी चोले वाला राज्य कहता है, वहॉ जनजातिय लोग पानी भरने के लिए खड़े लोगों में अंतिम स्थान में होते है।

सरकार और प्रशासन के सभी लोगों का सम्बन्ध समाज के अभी जन से होता है और उनके अधिकांश कार्य उन्हीं को ध्यान में रखकर किये जाते है। जनजातीय क्षेत्र अपनी दयनीय अवस्था में घूमता रहता है। ऑकड़ों के अनुसार कुल जनजातीय महिलाओं में से मात्र 43 प्रतिशत महिलाएं ऐसी है जो नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में सुरक्षित प्रसव सुविधा व अन्य मेडिवल सुविधा प्राप्त कर पायी है। जबकि अन्य स्थानों पर 51 प्रतिशत महिलाएँ लाभान्वित है।

योजना आयोग ने प्रस्तावित समग्र विकास योजना पर देश भर की एक दर्जन से अधिक गैर–सरकारी संगठनों के प्रतिनिधियों के साथ चर्चा ही। इसमें राष्ट्रीय सलाहकार परिषद के सदस्य दीप जोशी ने भी भागीदारी की। बैठक में इस बात को लेकर सहमति रही कि केन्द्रीय योजनाओं के शत–प्रतिशत क्रियान्वयन के लिए ग्राम पंचायत व ग्राम सभाओं की क्षमता का विकास करना होगा। बैठक की अध्यक्षता करने वाले आयोग के सदस्य मिहिर शाह ने कहा, ''बैठक में यह आम सहमति थी कि ग्राम पंचायत व ग्राम सभाओं के प्रतिनिधियों को योजना क्रियान्वयन की अधिक जानकारी नही होती है। ऐसे में, वे पूरी तरह सरकारी अधिकारियों व ठेकेदार पर ही आश्रित रहते है। ऐसे में जरूरत महसूस की गई कि उनकी योजना क्रियान्वयन क्षमता का विकास किया जाए। उन्हें पेशेवर लोग उपलब्ध कराए जाएं। उन्हें विशेष ट्रेनिंग दी जाए जिससे वे योजना क्रियान्वयन में सक्रिय साझीदार बन पाएं।'' शाह ने कहा कि पंचायत स्तर पर योजनाओं की निगरानी निष्पक्ष तरीके से हो इसके लिए नए तरह के पीपीपी मॉडल को भी क्रियान्वित करने पर सहमति रही। इसके तहत स्थानीय ग्राम पंचायत ग्राम सभा प्रतिनिधियों के अलावा विश्वविद्यालयों, नागरिक संगठनों और सक्रिय सामाजिक व मीडिया समूह के प्रतिनिधियों को भी योजना क्रियान्वयन में साझीदार बनाने पर सहमति रही।

अखिल भारतीय पुलिस विज्ञान कांग्रेस में गृहमंत्री पी0 चिदम्बरम ने सुरक्षाबल की कमी बताते हुए कहा कि देश में जवानों की उपलब्धता मानक से कहीं कम है। आतंकवाद और नक्सलवाद से जूझ रहे देश में पुलिस को मजबूत करने की जरूरत है। गृहमंत्री ने सुरक्षा बल की कमी को मानते हुए कहा कि 110 करोड़ की आबादी वाले मुल्क में सुरक्षा प्रबन्ध कर पाना मुश्किल है। उन्होंने पुलिस प्रशिक्षण संस्थान की क्षमता को बढ़ाने पर जोर दिया। केन्द्र सरकार की ऑकड़ों के अनुसार पुलिस बलों में आज लगभग 3,35,000 पद खाली है हमारे यहॉ एक लाख व्यक्तियों पर मात्र 160 पुलिसकर्मी है जो अन्तर्राष्ट्रीय मानकों से कही कम है।''

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

भारत के मानचित्र में देश के खनिज संसाधन वाले क्षेत्रों को देखें और दूसरी ओर नक्सल प्रभावित क्षेत्र देखें तो हम पायेंगे कि दोनों एक दूसरे पर छायांकित है। देश का जो सबसे गरीब क्षेत्र है, वह कोयला, लौह अयस्क और बॉक्साइट के भण्डार में देश का सबसे धनी क्षेत्र है, किन्तु खनिज के अभिशाप ने इन क्षेत्रों को जकड़ रखा है। 1970 के दौरान जैसे ही कोयला खादानों का राष्ट्रीयकरण हुआ, इसके आसपास के जूडे सभी निजी भागीदारी वाले माफिया ने इससे जुड़ी प्रत्येक गतिविधियों पर अपना नियंत्रण जमा लियज्ञं सबसे पहले नक्सल प्रभावित क्षेत्र की स्थिति में सुधार करते हुए वहॉ के लोगों के जीवन स्तर में सुधार करना राज्य व उद्योग का प्राथमिक दायित्व है। हरि भारकिया ने कहा कि उन प्रभावित क्षेत्रों में उद्योगों का प्राथमिक उद्देश्य व्यापार करना नही बल्कि सबसे पहले विश्वास निर्मित करना है। यह उद्योग जगत व सरकार दोनों की ही नेक भावना व्यक्त करता है। किन्तु दुर्भाग्यवश समस्या विकट है क्योंकि उन लक्षित 6 राज्यों की भौगोलिक स्थिति जैसे–छत्तीसगढ़, उड़ीसा, झारखण्ड, पश्चिम बंगाल, आन्ध्रप्रदेश, बिहार की भौगोलिक स्थिति अत्यंत जटिल है अकेले उद्योग ही इस क्षेत्र में कोई बड़ा सराहनीय कार्य करने में सक्षम नही है। मौलिक रूप से लोक सत्ता का दायित्व है कि वह किस प्रकार से उद्योग और अन्य संगठनों जैसे गैर सरकारी संगठनों की सहायता से मशीनरियों से वहॉ की स्थिति में सुधार लाए, एवं सुगम विश्वसनीय रोजगार की परिस्थिति निर्मित करें।

C.I.I. की वर्ष 2010 की रिपोर्ट 'भारत में निवेश की सुरक्षा नक्सल प्रभावित क्षेत्रों का निकट परिदृश्य'' में कहा गया है कि इस निकट व गतिशील सम्बन्धों के विभिन्न बलों का अध्ययन करने के बाद हम यह स्पष्ट रूप से कह सकते है कि इन क्षेत्रों में आंतरिक आर्थिक विकास की विशेष आवश्यकता है और यही इनका हल है। यह तथ्य बिल्कुल स्पष्ट है कि जैसे ही इन नक्सल क्षेत्रों में अलगाव, वंचना, अन्याय दूर होंगे और न्याय व समान अवसर वहॉ प्राप्त होंगे नक्सलवाद स्वतः समाप्त हो जाएगा। यह रिपोर्ट स्पष्ट करती है कि बेराजगार युवकों के हितों में वृद्धि का पूरा ख्याल राज्य द्वारा रखा जाएगा और यहॉ उद्योग एक बहुत ही निर्णायक व सफल भूमिका निभाएगा। ग्रामीण विवादों को तभी दूर किया जा सकेगा जब उन्हें संवृद्धि व विकास की प्रक्रिया में पूरी तरह सहभागी बनाया जाएगा। यह भी आवश्यक है कि एक ऐसे वैकल्पिक मानक का निर्माण करना जो लोगों और उद्योगों दोनों के हितों का ख्याल रखें। वास्तव में इस समस्या से निपटने हेतु कहना सरल किन्तु क्रियान्वयन करना कठिन है। सम्भवतः एक नया प्रशासकीय समूह इसे प्रेरणा देने में सफलता हासिल करे जिससे कि उन सकरात्मक लक्ष्यों को विकास की ओर पूर्ण करता पाया जाए।

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

नक्सलवादियों पर अधिकांश बहस मानवाधिकार समूहों और सरकार के बीच इस प्रश्न पर कि पहले विकास आता है अथवा शांति के इर्द–गिर्द सक्रिय रहा है। मानवाधिकार समूह इस बात पर जोर देते है कि विकास का अभाव नक्सलवाद का स्रोत है और सरकार इस बात पर समान रूप से दृढ़ है कि शांति के बिना विकास नही हो सकता है। यद्यपि इन दोनों आधारों में पर्याप्त सच्चाई है लेकिन नक्सलियों के प्रभाव वाले क्षेत्रों में उपयुक्त रणनीति विकसित करने की चर्चा पर कभी भी उचित तरीके से बहस नही हुई है। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि नक्सलवाद से निपटने में गम्भीर मुद्दों जैसे जनजातियों की आकांक्षाओं को छोड़ दिया जाता है।

इस सन्दर्भ में विकास व शांति की समस्या का उपयुक्त सटीक समाधान खोजना जरूरी है। मानवाधिकार समूहों की सुरक्षा बलों में कमी का मशविरा और अधिक संसाधन उपलब्ध कराने का तर्क उत्तर पूर्व के अनुभवों की उपेक्षा करता है। उस क्षेत्र में सशस्त्र समूहों ने अपने प्रभुत्व को साधन के रूप में लेकर विकास के संसाधनों को लूटना शुरू किया और उन्होंने वसूली की एक व्यवस्था बना डाली जिसे करारोपण का नाम दिया। नक्सलियों के ऐसे साधनों के उपयोग से उनके प्रभाव व शक्ति में अत्यधिक वृद्धि होने की बात स्वीकार की गयी है। नक्सलियों से निपटने के लिए पी0 चिदम्बरम द्वारा उच्च स्तर पर सशस्त्र शक्ति के उपयोग का विकल्प भी नक्सलियों पर फिट बैठता है। बंदूक के माध्यम से शांति लाने की बात प्रत्यक्ष रूप से नक्सली विचारधारा में पनपती है। इस विचारधारा के केन्द्र में विवाद यह है कि लोकतांत्रिक मूल्यों के नाम पर एक सशक्त सरकारी मशीनरी जनजातियों की कीमत पर पूंजी के हितों का संरक्षण करती है। तब जनजातियों के लिए किसी भी प्रकार की सशक्त कार्यवाही नैतिक अधिकार का विषय बन जाती है। नक्सली नेतृत्व मौत से जूझने के क्रम में अत्यंत कठोर हो गया है। इस सन्दर्भ में राज्य द्वारा अतिरिक्त सैन्य शक्ति का प्रयोग जनजातियों के साथ विचारधारागत मामलों में कई सम्भावनाएँ खोलता है। ऐसा तर्क दिया जाता है कि नक्सली आम नागरिकों को निशाना बनाकर सरकार को अनेक माध्यमों से बाध्य करते है और अपने प्रोपेगेंडा को मजबूत करते हैं।

नक्सल चुनौतियों से निपटने में राज्य अभिकरणों की सीमितता के सन्दर्भ में कुछ अवसरों पर नक्सलियों से निपटने हेतु स्थानीय विरोधियों को बढ़ावा मिला है। सलवा जुडुम नक्सलियों से निपटने के लिए ऐसी ही एक शक्ति के रूप में निर्मित किया गया था। लेकिन उनके द्वारा एक समान हिंसा पद्धतियों का प्रयोग करने के चलते नक्सलियों के लिए उन्हें उच्च वर्ग अवपीड़न हेतु दूसरे यंत्र के रूप में प्रोजेक्ट करने में कठिनाई है और जो केवल सशस्त्र संघर्ष के द्वारा ही लड़ा जा सकता है। इस सन्दर्भ में कोई नैतिक

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

औचित्य नही दिया जा सकता और भारतीय राजनीति में नैतिक प्रतीकों को बचाने के लिए गॉधीजी के मॉडल पर विचार किया जा सकता है, गांधी जी द्वारा बताया गया था कि जनजातियों के मन में चलने वाली विचारगत लड़ाई समाप्त नही हो सकती। अतः नक्सलियों का समर्थन करने वाले लोगों का यह कर्तव्य है कि वे गांधी के सुझावों पर चले। इस बात पर संवेदनशील ढंग से विचार किया जाना जरूरी है कि जनजातियों द्वारा इन क्षेत्रों के विकास हेतु लिए गए निर्णयों को किस प्रकार क्रियान्वित किया जाय, और इन क्षेत्रों में बड़ी निजी कम्पनियों के निवेश के माध्यम से जनजातियों के प्राकृतिक संसाधनों को कैद करने की उदारीकरण पश्चात की रणनीतियों का अंधानुकरण नही किए जाए।

औद्योगिकरण या बड़ी कम्पनियों का इन क्षेत्रों में निवेश का चाहे जो तर्क हो, लेकिन इससे जनजातियों को बहस का मुद्दा अवश्य मिल जाता है कि उनके समृद्ध संसाधनों का वास्तविक लाभ बाहरी व्यक्तियों को ही मिलता है। आचार (अनैतिकता) एवं वर्गीय हितों के मध्य यह सम्बन्ध उन्हें एक मजबूत भावनात्मक अपील करने पर विवश करता है कि नौकरियों के अवसरों के सृजन पर सम्यक रणनीति बनानी जरूरी है। जनजातियों के मन मस्तिष्क में भी तीव्र गति से पहुचने की आवश्यकता है और मुद्दा केवल उनकी वर्तमान आर्थिक अवस्था से निपटने का ही नही बल्कि उनकी आकांक्षाओं के साथ न्याय का भी है। एक महत्वपूर्ण कारण कि हमारे वृहद असमान शहरों, जो विश्व के सर्वाधिक असमान शहरों में है अपने आक्रोश पर नियंत्रण करते है क्योंकि निर्धन समृद्धों का भाग बनने की आकांक्षा रखते है। झुग्गी झोपड़ी में रहने वाला एक व्यक्ति मूवी स्टार बनने के सपने देखता है। इनमें से भी कुछ व्यवहारिक स्वप्न देखने वाले अपने बच्चों को शिक्षित करना चाहते है। ताकि वे सूचना प्रौद्योगिकी क्रान्ति का भाग बन सकें।

जनजातीय क्षेत्रों में इन आकांक्षाओं को अर्थपूर्ण भ्रष्ट राजनीतिज्ञों के चलते उनकी समस्याएँ बनी हुई है। तथ्य यह है कि ऐसे राजनीतिज्ञ अपने भ्रष्टाचार को छिपाते हुए चुनाव जीतने का प्रयास करते है और युवा जनजातियों को अपने अनुगमन हेतु आने की आकांक्षा रखते है लेकिन ऐसे दोषपूर्ण अनैतिक मॉडल एक ऐसे वातावरण का निर्माण कर सकती है जिसमें नक्सली हिंसक अनैतिक साधनों का प्रयोग करने हेतु विवश होते है। इस दिशा में एक जनजातीय उद्यमी वर्ग का अभ्युदय होना जरूरी है। केन्द्र व राज्य सरकारें ऐसे वर्ग के उदय हेतु विभिन्न विशिष्ट पहलों पर विचार कर सकती है। यदि ऐसी पहलें जल्द ही कोई सफल परिणाम न दे सके तो भी ये नक्सलियों के विकास के प्रोपेगेंडा की धार को कम कर सकती है। इस पर भी उन्हें उनके प्राकृतिक संसाधनों के दोहन का वाजिब अधिकार मिलना जरूरी है।

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

अगर मूल रूप से देखा जाए तो निजी संगठनों को पुनर्गठित कर विशेषतः उन लक्षित क्षेत्रों में स्थापित करे क्योंकि अधिकांश क्षेत्रों में जनसंख्या बढ़ी है और अधिकांश समूह आय उत्पादन क्षेत्रों में संलग्न रहता है। क्योंकि वे अपनी स्थायी आय की व्यवस्था नही कर पाते और जिन क्षेत्रों में अन्हें आय व संसाधनों की सुविधा प्राप्त होती है तो वे उस ओर ही रूख करते है और उनकी आवश्यकताएँ पूर्ण होती नजर आती है। वे संतुष्ट महसूस करते है क्योंकि उस क्षेत्र में उद्योग आदि की स्थापना से अन्य आधुनिक सुविधाएँ जैसे टेलीविजन, फोन, शिक्षा आदि की पहुँच सुगम हो जाती है और धीरे–धीरे अनैतिक–असुरक्षित कार्यो से अलगाव होना प्रारम्भ हो जाता है जो एक सकारात्मक परिवर्तन की ओर इशारा करता है।

Work Cited

- Biplab Dasgupta, The Naxalite Movement, Allied Publishers, Bombay, 1974
- Sumanta Banerjee, In the Wake of Naxalbari: A History of the Naxalite Movement in India, Subarnavekha, Calcutta, 1980
- Samer & Sen, Naxalbari and after, a frontier anthology, vol-182, Kathashilpa, Calcutta, 1978
- Sachidanand Pandey, Naxal violence, A Socio-Political Study, 1985
- Manoranjan Mohanty, Revolutionary Violance, New Delhi, Sterling, 1977

WRITERS VIEW
An Interdisciplinary, bilingual, bi-annual, a peer review or refereed International Journal
Vol. 3 No. 1&2 APRIL & OCTOBER Year 2018

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

4

हिन्दी सिनेमा में दलितों और पिछड़ों का प्रतिबिम्बन

डॉ. प्रवीण कुमार त्रिपाठी
प्रवक्ता (इतिहास विभाग) गनेश राय पी.जी. कॉलेज,डोभी, जौनपुर

20वीं सदी के तीसरे व चौथे दशक में जब भारत में स्वाधीनता संग्राम बेगमय ढंग से चल रहा था उसी समय 'प्रभात', 'न्यूथियेटर्स' एवं 'बाम्बे टाकीज' सरीखी फिल्म कम्पनियों ने सामाजिक चेतना से लैस फिल्मों का निर्माण शुरू कर दिया था। सिनेमा की यह धारा राष्ट्रीय आन्दोलन के कारण उपजी विभिन्न सामाजिक सांस्कृतिक आन्दोलनों के उतार चढ़ाव को रिकार्ड ही नहीं कर रही थी बल्कि उसे गति भी दे रही थी। इस धारा का नैरन्तर्य हम नितिन बोस, चंदूलाल शाह, महबूब खान, बी0एन0 रेड्डी, विजय भट्ट, सोहराब मोदी, मास्टर विनायक, गजानन जागीरदार, विमल राय, के0ए0 अब्बास और चेतन आनन्द की फिल्मों के रूप में 1947 ई0 के पहले और आगे तक भी पाते हैं।

कहने का मतलब है कि सामाजिक सरोकारों को लेकर स्वाधीनता संग्राम और उसके बाद नेहरू की मौत तक भारत में ढेरों फिल्में बनी। पर भारत में शदियों से चली आ रही वर्ण एवं जाति व्यवस्था का चित्रण नहीं के बराबर हुआ है। सवर्ण हिन्दू समाज ने दलितों को कभी भी अपने बराबर का मनुष्य नहीं माना। ये बात और है कि 1950 में लागू भारत का संविधान भारत के सभी नागरिकों को समानता का स्तर प्रदान करता है परन्तु संविधान के प्रावधान के चलते एकाएक भारत में सदियों से चली आ रही ऊँच–नीच वाली सामाजिक व्यवस्था को झटके से समाप्त नहीं किया जा सकता। यह समता और बन्धुता का भाव ही है कि गरीबी, भूखमरी या आर्थिक उत्पीड़न और गैर बराबरी के विरूद्ध मुखरित होने वाला भारतीय समाज जाति के प्रश्न पर मौन साध लेता है। यह कम विडम्बना पूर्ण नहीं है कि भारतीय समाज में चिन्तन की हर गाड़ी जाति के स्टेशन से बच कर निकलती है जबकि दलितों के समस्याओं के मूल में सबसे बड़ा कारण जाति ही है। भारतीय सिनेमा का नजरिया भी इससे भिन्न नहीं है। दलितों के प्रति करूणा दिखाकर वह 'अछूत कन्या', (1936) 'आदमी', (1968) सुजाता (1960) बूट–पालिस (1954) अंकुर और सद्गति जैसी फिल्मों का निर्माण तो करता है किन्तु

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

जिस तल्खी और सिद्दत से जाति के प्रश्न को उठायें जाने की जरूरत है उस तरीके से नहीं उठाता।

इसमें कोई दो मत नहीं है कि हिन्दी फिल्मो ने प्रेम के क्षेत्र में जाति के विरूद्ध एक रूमानी मानसिक वातावरण तैयार किया है लेकिन वहीं दूसरी ओर सामाजिक स्तर पर वह जाति व्यवस्था के विरूद्ध वातावरण तैयार नहीं कर सका है। भारतीय फिल्मकारों ने नस्लवादी दृष्टिकोण के अनुरूप कुछ जाति विशेष को हमेशा सूरवीर और आन–बान के लिये जीवन न्यौछावर करने वाले व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत किया है जबकि ऐसे कथानक गिन–चुने ही मिलेगे जिसमें कोई महान कार्य निम्न जाति के व्यक्ति ने किया है तो भी वह भावना पर आधारित है तर्क पर नहीं। उदाहरण के लिये विमल राय की फिल्म सुजाता में नायिका निम्न वर्ग की है। नायक की मॉ उसका अस्तित्व तभी स्वीकार करती है जब सुजाता अपना रक्त देकर उसके जीवन की रक्षा करती है। वस्तुतः ऐसा करने से फिल्म का तात्कालिक प्रभाव निःसन्देह बढ़ जाता है लेकिन उसका वास्तविक व दीर्घकालिक स्तर पर समाप्त हो जाता है। इसी के साथ इस बात पर भी गौर किया जाना चाहिये कि हिन्दी फिल्मों में अन्तर्जातीय विवाहों को मान्यता दी गयी किन्तु अन्तधार्मिक विवाहों पर बहुत कम कहा गया। विशेष कर हिन्दू– मुस्लिम विवाह के बारे में। (1996 में प्रदर्शित मणिरत्नम की फिल्म बाम्बे, 2004 में प्रदर्शित वीर–जारा और यहॉ इसके रूमानी अपवाद है।)

सवाल यह है कि जाति व्यवस्था जो आजादी के बाद भारतीय राजनीति में एक निर्णायक तत्व बन चुकी है, चुनावों के समय प्रत्येक चुनाव क्षेत्र में मतदाताओं का जातीय गणित अखबारों में प्रमुखता से छपता है और राष्ट्रीय से लेकर क्षेत्रीय पार्टियॉ तक मतदाताओं के किसी क्षेत्र विशेष में जातिगत समीकरणों को देखकर ही जाति विशेष के प्रत्याशियों का चयन करती है। ऐसे में सिनेमा में क्यों नहीं जाति व्यवस्था या जातिगत राजनीति का प्रतिबिम्बन हो रहा है। कुछ एक फिल्में जाति के प्रश्न को सुगमता में तो नहीं किन्तु आंशिक रूप से छूती हैं। ऐसी फिल्मों में हमें 'गाडफादर' जो गुजरात के एक महिला माफिया के जीवन पर आधारित थी अथवा हासिल जो इलाहाबाद विश्वविद्यालय में छात्र राजनीति के जातीय राजनीति के घाल–मेल अथवा गोविन्द निहलानी की फिल्म अर्द्धसत्य एवं आक्रोश में दलित वकील अमरीशपुरी को जाति सम्बाधनों से फोन पर गाली देने जैसे दृश्य याद आते हैं। हालिया वर्षों में सुपरिचित स्वाधीनता संग्राम सेनानी और भारतीय संविधान के मुख्य

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

निर्माता डा0 भीम राव अम्बेडकर पर 'भीम गर्जना' नाम से एक फिल्म और मराठी फिल्मकार जब्बार पटेल द्वारा ''डा0 अम्बेडकर शीर्षक'' से बनी फिल्म प्रदर्शित हुई है। यहॉ कुछ ऐसी फिल्मों का जिक्र कर देना ही समीचीन होगा। जिनमें दलित प्रश्न को हल्क से ही सही छूआ गया है और जिनकी चर्चा हमनेपूर्व में नहीं की है । ऐसी फिल्मों में सावन कुमार की फिल्म सौतन (1983) का जिक्र किया जा सकता है जिसमें फिल्म की हिरोइन पद्मिनी कोल्हापुरी को दलित की भूमिका में दिखाया गया है और उसके पिता की भूमिका में डा0 श्री रामलागू ने दलित की पीड़ा को ग्राफिक अभिव्यक्ति दी है। 1942 ए लव स्टोरी (1994) में मसक से पानी छिड़कता पात्र दलित है तथा गुलजार की हूतूतू (1999) में नानापाटेकर को लोक कवि और महार जाति का दिखाया गया है। गौतम घोष की फिल्म 'पार' (1984) प्रकाश झा की 'दामुल' (1985), 'आरक्षण' (2001) यू आर अनन्त मूर्ति की कहानी घटश्राद्ध पर 'दीक्षा'' (1991) नाम से बनी फिल्म बंग्ला से हिन्दी में अनुदित फिल्म 'अन्तर्जलीय यात्रा' तथा प्रेमचन्द की कहानियों गोदान, कफन, दो बैलों की कथा, सद्गति और गबन पर बनी फिल्मों में दलित प्रश्न को यथासम्भव इन कृतियों के अनुरूप प्रस्तुत किया गया है।

तत्कालीन प्रधानमंत्री बी0पी0 सिंह ने विहार के पूर्व मुख्यमंत्री विन्देश्वरी प्रसाद मण्डल के द्वारा प्रस्तुत भारत के पिछड़े वर्गों से संबंधित रिपोर्ट को जब आनन–फानन में 7 अगस्त 1990 को लागू किया और पिछड़े वर्गों के लिये सरकारी सेवाओं में 27 प्रतिशत आरक्षण का ऐलान किया तो सवर्ण भारतीय मध्यवर्ग आग–बबूला हो गया था। ऐसा लग रहा था कि मानो मण्डल रिपोर्ट भारतीय समाज के ताने–बाने को नष्ट कर देगी। आज इस रिपोर्ट को लागू हुये 25 वर्ष बीत चुके हैं । इस चौथाई सदी में हिन्दी सिनेमा जो भारत की हिन्दी पट्टी सहित अखिल भारतीय या यूॅ कहें कि अन्तर्राष्ट्रीय पहुंच रखता है उसमें दलितों–पिछड़ों का प्रतिनिधित्व व्यक्ति के रूप में अथवा कथानक के रूप में कितना बढ़ा है यह देखना रोचक होगा। इन 25 वर्षों में बनी फिल्मों का एक ऐतिहासिक सर्वेक्षण हमें यह बताता है कि अभी भी हिन्दी सिनेमा में दलित और पिछड़ा विमर्श हाशिया पर ही है। हालांकि हालियॉ वर्षों में फिल्मों में पहले की तुलना में यह विमर्श थोड़ा आगे बढ़ा।

यदि 1990 के बाद बनी हिन्दी फिल्मों का दलित, पिछड़ा प्रतिनिधित्व के दृष्टिकोण से अन्वेषण करे तो चाची 420 (1997), समर (1999), 'लगान' (2001), मंगल पाण्डेय (2005), ओंकारा (2006) एकलव्य (2007), वेलकम टू सज्जनपुर (2008), आक्रोश

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

(2010), राजनीति (2010), आरक्षण (2011) , मंजूनाथ (2014), हाइवे (2014) कोर्ट (2014), मसान (2015), गुड्डू रंगीला (2015) इत्यादि का उल्लेख किया जाता है । चाची चार सौ बीस (1997) का नायक जय प्रकाश पासवान (कमल हसन) एक दलित वर्ग से सम्बन्ध रखने वाला है जिसका विवाह एक ब्राह्मण लड़की (जानवी भारद्वाज) (तब्बू) से हुआ रहता है। एकलव्य (2007) में संजय दत्त अभिनित दलित पुलिस अधिकारी पन्नालाल चोहर की भूमिका सराहनीय रही। राजनीति (2010) का एक प्रमुख पात्र सूरज कुमार (अजय देवगन) दलित वर्ग से है और राजनीति में अपना प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने हेतु संघर्षरत है। गुलाबी गैंग (2012) बुन्देलखण्ड की महिला कार्यकर्ता संपतपाल के संघर्षों की कहानी है। प्रकाश झा निर्देशित फिल्म आरक्षण (2011) फिल्म यद्यपि आरक्षण के मुद्दे को उठाया गया है किन्तु यह नाम के अनुरूप यह आरक्षण व्यवस्था केन्द्रित फिल्म नहीं है। यह शिक्षा व्यवस्था की कमियों को प्रकट करने के मुद्दे पर उलझ कर अपने मूल मुद्दे से भटक जाती है। फिर भी इस बात के लिये प्रकाश झा को बधाई दी जा सकती है कि इन्होंने आरक्षण के मुद्दे को फिल्म विमर्श में स्थान देने की हिम्मत दिखाई। इण्डियन ऑयल के एक ईमानदार दलित अधिकारी मंजूनाथ शडमुगम की भ्रष्ट तेल माफिया द्वारा हत्या पर आधारित मंजूनाथ फिल्म इस दृष्टि से उल्लेखनीय है कि इसमें एक दलित को केन्द्रिय पात्र बनाया गया है

2014 में प्रदर्शित चैतन्य तम्हाने निर्देशित और बहुचर्चित फिल्म 'कोर्ट' ने दलित मुद्दे को काफी गम्भीरता से उठाया है। इस फिल्म में दलितों को जागरूक करने वाले दलित कवि नारायण कांवले (वीरा साथीदार) के माध्यम से यह प्रदर्शित किया गया है कि किस प्रकार दलित उत्थान की दिशा में कार्य करने वालों को पूरी व्यवस्था यहाँ तक कि न्यायपालिका से संघर्ष करना पड़ता है और उन्हें अनावश्यक रूप से प्रताड़ित होना पड़ता है। 2015 में प्रदर्शित नीरज घेवन की बहुचर्चित फिल्म मसान में यद्यपि दलित पिछड़े मुद्दे को यद्यपि प्रत्यक्ष रूप से नहीं उठाया गया है किन्तु उसका एक नायक दीपक चौधरी (विक्की कौशल़) श्मशान घाट पर मुर्दे जलाने वाले पारम्परिक डोम जाति का है उसकी खासियत यह है कि वह अपना पारम्परिक कार्य करने के साथ पढ़ाई भी करता है और रेलवे में नौकरी भी हासिल करता है। वह निश्चित ही अपने वर्ण (डोम) हेतु एक प्रेरणाश्रोत है। 2015 में प्रदर्शित गुड्डू रंगीला फिल्म के दोनों नायकों की जाति का यद्यपि स्पष्ट उल्लेख नहीं है किन्तु फिल्मांकन व सम्वादों से यह प्रतीत होता है कि वह दोनों दलित वर्ग के हैं। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि इस फिल्म में

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

नायकों को एक अपराधी के रूप में प्रदर्शित किया गया है, भले ही नेक दिल के हैं। ऐसी फिल्में दलित पिछड़ा वर्ग के प्रति एक नकारात्मक सोच ही पैदा करती हैं।

कहने का मतलब यह है कि जिस तरह इतिहास के दलित नजरियॉ अभी भी लगभग अनुपस्थित है बावजूद इसके कि सब अल्टर्न स्टडीज के कई वाल्यूम आ चुके हैं उसी तरह सिनेमा में भी दलित और पिछड़ा विमर्श हाशिये पर ही है। सिनेमा द्वारा जातीय प्रश्न की उपेक्षा के पीछे जो कारण नजर आता है वह यह है कि सिनेमा एक महंगा कला माध्यम है और जाहिरा तौर पर उसके पूंजी लगाने वालों के वर्ग हितों की उपेक्षा सम्भव नहीं है। हिन्दुस्तान में पूंजीपतियों का निर्णायक हिस्सा सवर्ण है और वह सचेत अथवा अचेत तौर पर जातीय भावना से ग्रस्त है। इसलिये सम्भवतः ऐसे कथानक नहीं चुने जाते। दूसरे फिल्म बनाने वाले निर्माता – निर्देशक, लेखक एवं कलाकार भी ज्यादातर उच्च जातियों, अथवा वर्गों के ही है। जाहिरा तौर पर इनके जातिहित या वर्ग हित ही सिनेमा के विषय बनते है। इस कारण भी दलित/पिछड़ा प्रश्न सिनेमा के सिद्दत से नहीं आ पा रहा है।

मण्डल रिपोर्ट के लागू होने के बाद जातिगत शोषण और अन्याय का प्रतिकार करने वाली अभी तक की सबसे सशक्ति फिल्म बेंडिट क्वीन (1995) ही दिखाई देती है जो साधारण दलित स्त्री से दस्यु सुंदरी और फिर सांसद बनी फूलन देवी के जीवन पर आधारित थी। परन्तु इन 25 वर्षों में सिनेमा के क्षेत्र में कोई दलित पिछड़ा आन्दोलन दिखाई नहीं देता। न ही कोई उल्लेखनीय फिल्मकार इन वर्गों से उभरकर सामने आया है। किन्तु सिनेमा के साथ एक आम बात यह है कि सिनेमा मास मीडिया और मास मनोरंजन है उसका मास होना उसकी प्रकृति में है। वह एक साथ समाज के विविध लोगों को, बच्चों–बूढ़े, धनी–गरीब, औरत–मर्द, हिन्दू–मुसलमान, ब्राह्मण –शुद्र सबको एक साथ उपलब्ध होता है सिनेमा हाल के अंधेर में व्यक्ति अनाम हो जाता है, यानि मास हो जाता है और यही तय करता है कि फिल्म सफल होगी या असफल। इसलिये यह कला उद्योग मास को कितना भी मैनिपुलेट करे मास की निर्णायकता पूरी तरह कभी समाप्त नहीं हो सकती। जैसे साहित्य में पाठक निर्णायक होता है वैसे ही या उससे भी अधिक सिनेमा में दर्शक (बाक्स आफिस ही निर्णायक होता है)। पाठकों की ही तरह दर्शकों को भी भटकाया बरगलाया जाता है पर पुरस्कारों और भ्रष्ट खरीद के लिये साहित्य तो लंगड़ा हो सकता है पर सिनेमा जैसा महंगा कला माध्यम दर्शकों की विमुखता नहीं झेल सकता। दलित और पिछड़ा वर्ग भारतीय समाज का बहुसुंख्यक हिस्सा

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

है इसलिये वह ही बाक्स आफिस का निर्णायक बनेगा और तब दलित पिछड़ा प्रश्न को सिनेमा में भी डाला नहीं जा सकेगा।

संदर्भ

1. होम पालिटिकल, ए, मार्च 1916
2. महेन्द्र मित्तल , भारतीय चलचित्र, मेरठ, 1974
3. वी0पी0 साठे, सिनेमा ऑफ वी शांताराम, संपा0–टी0एन0 रामचन्द्रन, 70 ईयर्स ऑफ इण्डियन सिनेमा, बम्बई–1984
4. चन्द्रभूषण गुप्त अंकुर 'आजादी की लड़ाई में भारतीय सिनेमा (1930–47) संपा एस0एन0आर0 रिजवी स्टडीज इन इण्डियन हिस्ट्री, नई दिल्ली–1999
5. जय प्रकाश कर्दम, 'मुंह चुराता है, वर्तमान साहित्य : सदी का सिनेमा, अगस्त –दि0 2002
6. विजय अग्रवाल, हिन्दी फिल्मों में वर्ग हित' इतिहास बोध, 1995
7. सुभी धुसिया, बौद्धिक क्षेत्र में उभरती नवीन जातिगत प्रवृत्तियॉ, राधाकमल मुखर्जी

WRITERS VIEW
An Interdisciplinary, bilingual, bi-annual, a peer review or refereed International Journal
Vol. 3 No. 1&2 APRIL & OCTOBER Year 2018

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

5

भारत की न्याय व्यवस्था : अतीत और वर्तमान

डॉ. कृष्ण कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग
महाराणा प्रताप पी.जी. कॉलेज, जंगल धूसड़, गोरखपुर

कुछ उतार–चढ़ावों के साथ भारत में न्याय व्यवस्था की एक समृद्ध परम्परा अतीत से वर्तमान तक रही है जिसे समझने के लिए न्याय व उसकी अवधाारणा को समझ लेना आवश्यक है। न्याय को अत्यन्त सहज शब्दों में रेखांकित करते हुए हम यह कह सकते हैं कि जो सबका भला करे, वह न्याय है। यह परिष्कृत व्यवस्था से जुड़ा वह अपरिहार्य अवयव है जो समाज में विश्वास को जाग्रत करता है। न्याय की उजली डगर का सम्बन्ध बुद्धि अथवा शरीर से नहीं, बल्कि मन से होता है। न्याय की अवधारणा आत्मा से प्रसूत होती है और आत्मा को सुनती है। तभी तो बापू ने कहा, "There is a higher Court and Courts of justic and that is the Court of conscience. It spercedes all other Courts." यकीनन सच्चा न्याय तो आत्मा की आवाज ही है जिसका सम्बल सत्य है।

न्याय की मान्यता उतनी ही पुरानी है जितनी कि मानवता। न्याय की धारणा आध्यात्मिकता की धारणा है। यह धर्म का मूल है। हमारे शब्दकोशों में 'धर्म' जैसा कोई दूसरा समानार्थी शब्द तो नहीं है, किन्तु न्याय और सत्य इसके करीबी शब्द हैं। हमारे यहाँ सत्य को शिव से भी सुन्दर बताया गया है जो कि हमारी न्याय व्यवस्था का आधार है। इसीलिए कठोपनिषद् में कहा गया है– 'सत्यमेव जयते', अर्थात् सत्य ही जीतता है। यह हमारे देश का 'ध्येय वाक्य' भी है। कुछ संक्रमणकालों को छोड़ दें तो प्राचीन भारत से लेकर वर्तमान समय तक हमारी न्याय व्यवस्था सत्य पर ही केन्द्रित रही। यही कारण है कि हमारी न्याय व्यवस्था का स्वरूप उज्ज्वल रहा और इसने सदैव सत्य की परख की, सत्य को ही बरता।

भारतीय न्याय व्यवस्था के अतीत एवं वर्तमान के विश्लेषण हेतु हम भारतीय न्याय व्यवस्था को चार चरणों में विभक्त कर सकते हैं। इसका प्रथम चरण है प्राचीन भारत की न्याय व्यवस्था जिसे हम हिन्दू न्याय परम्परा भी कह सकते हैं। भारतीय न्याय व्यवस्था का दूसरा चरण मध्यकाल में शुरू हुआ जिसे हम मुस्लिम न्याय व्यवस्था कह सकते हैं। भारतीय न्याय व्यवस्था का तीसरा चरण ब्रिटिश काल में शुरू हुआ और चौथा चरण

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

आजादी के बाद की वर्तमान न्याय व्यवस्था से सम्बद्ध है। अतीत से लेकर वर्तमान तक भारतीय न्याय व्यवस्था को समझने के लिए इन चारों चरणों का विश्लेषण आवश्यक है।[1]

वस्तुतः प्राचीन भारत में अस्तित्व में रही न्याय की हिन्दू परम्परा उतनी ही पुरानी है जितनी कि मानवता। भारत की समृद्ध एवं उज्ज्वल न्याय परम्परा की नींव इसी काल में पड़ी। यही वह समय था जब सत्य को न्याय की आत्मा माना गया। धर्मनिष्ठा को न्याय व्यवस्था से जोड़ा गया और धार्म इस काल में सत्य, न्याय एवं नैतिकता का पर्याय बन गया जो हमें यह बताता है कि क्या उचित है, क्या अनुचित, क्या करना चाहिए, क्या नहीं करना चाहिए।[2]

प्राचीन भारत की न्याय व्यवस्था का मंथन करने पर यह तथ्य उभर कर सामने आता है कि तब न्याय व्यवस्था धर्म से आबद्ध थी और इसी के अनुरूप भारत की न्याय परम्परा का विकास भी हुआ। तब न्यायालयों के लिए 'धर्माधिकरण' एवं 'धर्मसभा' जैसे शब्द प्रयुक्त होते थे, तो न्यायाधीशों को 'धर्माधिकारी' कहा जाता था। न्यायाधीश के आसन को 'धर्मासन' कहा जाता था। इन तथ्यों से ध्वनित होता है कि प्राचीन भारत की न्याय व्यवस्था पर धर्म का नियंत्रण था तथा न्याय के द्वारा समाज में विश्वास को बढ़ाना, न्याय को सत्य के रक्षक के रूप में स्थापित करना तथा समाज में अनैतिकता–अन्याय को रोककर लोगों को 'मत्स्य न्याय' की स्थिति से बचाना तत्कालीन न्याय व्यवस्था के प्रमुख उद्देश्य थे।[3]

प्राचीन भारत की न्याय व्यवस्था में अनेक खूबियाँ भी थीं। न्याय सस्ता और सुलभ था। 'न्याय आपके द्वार' एवं 'त्वरित न्याय' की अवधारणा इसी काल में अस्तित्व में आई। तब पंचायतें न्याय की प्रारम्भिक इकाइयाँ हुआ करती थीं। इनका उल्लेख 'ऋग्वेद' में मिलता है। तब न्याय के लिए लोगों को दूर–दूर तक भटकना नहीं पड़ता था और पंचायत स्तर पर ही उन्हें न्याय मिल जाता था। दुर्लभ से दुर्लभतम मामले ही सम्राटों तक जाते थे। उस समय न्याय तो अमूल्य था, किन्तु न्याय के लिए कोई मूल्य नहीं चुकाना पड़ता था जिसके पीछे सम्भवतः यह कारण निहित थी कि न्याय को गरीब तक पहुँचना ही चाहिए (Justice must reach the poor.)। न्यायाधीशों की भूमिका पंच निभाते थे जिनमें परमेश्वर की छवि देखी जाती थी। इन पंचों को न तो आज के न्यायाधीशों की तरह मोटी तनख्वाहें दी जाती थीं और न ही ढेर सारी सुविधाएँ। न्यायप्रियता इनकी आत्मा में रची–बसी होती थी और परमेश्वर रूपी ये पंच पारदर्शी न्याय के लिए जाने जाते थे। तब 'जो न्यायाधीश करे, वह न्याय है' जैसी विसंगतियाँ नहीं थीं, बल्कि 'जो न्याय करे, वो न्यायाधीश' जैसी स्वस्थ व्यवस्था थी। यही कारण है के किया गया न्याय मामलों के सभी पक्षकारों को संतुष्ट करता था। वस्तुतः प्राचीन भारतीय न्याय व्यवस्था

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

को हम न्याय का स्वर्णिम काल मान सकते हैं। तब न्याय आत्मा से प्रसूत होता था जो परमात्मा की अनमोल सौगात मानी जाती है।[4]

मध्यकाल में भारतीय न्याय व्यवस्था का दूसरा चरण शुरू हुआ औद देश में मुस्लिम न्याय व्यवस्था अस्तित्व में आई। इस काल में न्याय व्यवस्था पर मुस्लिम प्रभाव भले ही दिखा, किन्तु भारतीय न्याय की समृद्ध परम्पराओं का क्षरण नहीं हुआ। इसके पीछे मुख्य कारण यह था कि मुस्लिम सम्प्रदाय में समानता एवं लोकतंत्र को सर्वोच्च वरीयता दी जाती है। इसी समानता और लोकतंत्र की पैरोकारी कर हजरत मोहम्मद साहब मात्र 40 वर्ष की अवस्था में पैगम्बर बन गए थे। मुस्लिम न्याय व्यवस्था में समानता एवं समाजवाद को खास तरजीह दी गई जिससे न्याय की उज्ज्वल परम्परा कायम रही। मुस्लिम शासकों को यह भी भलीभाँति मालूम था कि हुकूमत का वजूद इंसाफ पर निर्भर करता है, अतएव इसकी सर्वोच्च वरीयता यह होनी चाहिए कि किसी को कानून तोड़ने और दुर्बल को सताने का मौका न दिया जाए। इस कारण से भी इस काल में न्याय का स्वरूप अक्षुण्ण रहा। हालाँकि न्याय व्यवस्था में शासन–प्रशासन के सम्मिलित होने के कारण कुछ आपवादिक स्थितियाँ निर्मित होती रहीं, किन्तु सामान्य स्तर पर न्याय व्यवस्था का उजला पक्ष खण्डित नहीं हुआ। मध्यकाल के अकबर, जहाँगीर एवं शेरशाह सूरी जैसे सम्राटों की न्यायप्रियता को इतिहास कभी विस्मृत नहीं कर पाएगा। मध्यकाल में भी न्याय का सस्ता एवं सुलभ स्वरूप कायम रहा। न्याय का गला घोटे जाने जैसे दृष्टान्त इस काल में नहीं मिलते हैं। पंचायती न्याय के रूप में प्राचीन भारत की न्याय व्यवस्था का निर्वाह भी इस काल में होता रहा।[5]

भारत में ब्रिटिश हुकूमत की जड़ें जमने के साथ भारतीय न्याय व्यवस्था के तीसरे चरण की शुरुआत मानी जाती है। यह तीसरा चरण न्याय के नए रुझान लेकर आया जिनसे भारतीय न्याय व्यवस्था का परम्परागत स्वरूप परिवर्तित एवं खण्डित हुआ। यह न्याय व्यवस्था में बदलाव का चरण था। भारतीय परिवेश पर विदेशी न्याय व्यवस्था को थोपा गया। यही वह समय था जब न्याय न तो सस्ता रहा और न ही सुलभ। न्याय क्षेत्र में मध्यस्थों की भूमिका बढ़ी, न्याय में विलम्ब बढ़ा, साथ ही न्यायिक प्रक्रिया में पेचीदगियाँ भी बढ़ीं। फलतः न्याय गरीब और अशिक्षितों की पहुँच से दूर होता चला गया। इस चरण की न्याय व्यवस्था में 'त्वरित न्याय' व 'न्याय आपके द्वार' जैसी अवधारणाएँ निहित नहीं थीं। लोगों को न्याय के बजाए तारीखें मिलने की परम्परा का श्रीगणेश इसी काल में हुआ। नतीजतन समय सीमा के भीतर न्याय मिल पाना टेढ़ी खीर साबित होने लगा। वकीलों द्वारा मुवक्किलों के शोषण की शुरुआत भी इसी काल में हुई। न्याय पाने के

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

लिए भागदौड़ बेइंतहा बढ़ी। दीवानी के मामलों में तो पहली पीढ़ी मुकदमा लड़ती और न्याय दूसरी पीढ़ी को मिलता।[6]

भारतीय न्याय व्यवस्था के इस तीसरे चरण को हम न्याय के क्षरण का चरण कह सकते हैं। इसके पीछे कुछ कारण भी थे। ब्रिटिश काल के साधन चाहे जैसे भी रहे हों, किन्तु उद्देश्य पवित्र नहीं थे। इस न्याय व्यवस्था का उद्देश्य न्यायिक शुचिता एवं पारदर्शिता नहीं था, बल्कि मुख्य उद्देश्य ब्रिटिश शासन को अक्षुण्ण बनाए रखना था। अंग्रेज भारतीय सम्पत्ति से ब्रिटेन को समृद्ध बनाना चाहते थे। ऐसे में न्याय का गला घोटा जाना एवं अनीति का बढ़ना स्वाभाविक ही था जो न्याय क्षेत्रा में सामने भी आया। यही वह दौर था जब भारतीय न्याय व्यवस्था में 'जो न्यायाधीश करे वो न्याय' तथा 'जो अपना भला करे वो न्याय' जैसी विकृतियाँ आनी शुरू हो गईं। भारतीय न्याय व्यवस्था में 'न्याय जो सबका भला करे' जैसे पवित्र भाव तिरोहित हो गए। न्याय और अन्याय के बीच का पफर्क कम होने लगा। यह वह दौर था जब तत्कालीन न्याय व्यवस्था से आम आदमी का विश्वास उठ गया था और न्यायिक क्षेत्रा में तनिक भी जनास्था नहीं रह गई थी।[7]

इसे दुर्भाग्य ही कहा जाएगा कि आजादी के बाद ब्रिटिशकालीन न्याय व्यवस्था ही हमें विरासत में मिली, जिसे हम भारतीय परिवेश एवं भारत की परम्परागत न्याय व्यवस्था के अनुरूप नहीं ढाल पाए और न ही न्याय के नए मानक ही निर्धारित कर पाए। हमने अपना संविधान तो गढ़ लिया, किन्तु इसमें निजता एवं मौलिकता का नितान्त अभाव रहा तथा विदेशी प्रभाव का प्रभुत्व कायम रहा। न्याय व्यवस्था में वे सारी विकृतियाँ भी कायम रहीं जो ब्रिटिशकालीन न्याय व्यवस्था की देन थी।

बहरहाल, आजादी के बाद हमारे देश का अपना संविधान अस्तित्व में आया। इस संविधान में धर्म को न्याय का स्रोत नहीं माना गया। फलतः आजादी के बाद की चौथे चरण की संवैधानिक न्याय व्यवस्था में हम प्राचीन भारतीय न्याय व्यवस्था के उन मृतप्राय न्यायिक अवयवों को पुनर्जीवित नहीं कर पाए जिन्होंने न्याय को उच्च प्रतिमान दिए थे।[8]

चौथे चरण की भारतीय न्याय व्यवस्था की बाध्यता यह रही कि उसे ब्रिटिशकालीन न्याय व्यवस्था का ही अनुसरण करना पड़ा। साधन वही थे, फर्क बस इतना था कि उद्देश्यों में बदलाव आ गया था। उद्देश्यों के इसी बदलाव ने आजादी के बाद की भारतीय न्याय व्यवस्था जिसे हम चौथे चरण की वर्तमान न्याय व्यवस्था कह सकते हैं, को नई दिशा एवं धार दी। इस वर्तमान न्याय व्यवस्था का उद्देश्य है 'न्याय की सर्वोच्चता' जिसमें सत्य के रक्षण एवं न्यायिक पारदर्शिता की भावना निहित है। इस प्रकार भारतीय न्याय व्यवस्था में 'जो सबका भला करे वह न्याय' की अवधारणा की वापसी हुई है जो एक शुभ संकेत है। जब उद्देश्य पवित्रा हों, तो साधनों की अपवित्राता भी प्रभावहीन हो जाती

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

है। यह स्थिति भारतीय न्याय व्यवस्था में देखने को मिल रही है। भारतीय लोकतंत्रा के तीन स्तम्भों में से एक, न्यायपालिका ने अपनी मुखरता का परिचय देते हुए अनीति एवं अन्याय को पनपने का कोई मौका नहीं दिया, फिर चाहे यह अनीति व अन्याय सरकारी स्तर का ही क्यों न हो।[9]

न्यायपालिका द्वारा दबावमुक्त होकर एक से एक ऐतिहासिक एवं जनहितकारी न्यायनिर्णयन की जिस समृद्ध परम्परा का आगाज हो चुका है, उसकी वजह से भारत की वर्तमान न्याय व्यवस्था जनास्था का केन्द्र बन गयी है। वर्तमान में न्याय की सर्वोच्चता कायम है और 'सत्यमेव जयते' के मुखर भाव वर्तमान न्याय व्यवस्था में दिख रहे हैं। वर्तमान में दबावमुक्त भारतीय न्याय व्यवस्था जहाँ मौका पड़ने पर सरकार को फटकारने से नहीं चूकती, वहीं राजनेताओं को आईना दिखाकर लोकतांत्रिक मूल्यों की श्रीवृद्धि भी कर रही है। अभी हाल ही में हमारी न्यायपालिका ने जिस तरह से अपने पैफसले से 'राइट टू रिजेक्ट' का रास्ता खोलकर लोकतंत्र को समृद्ध बनाने का काम किया, वह श्लाघ्य है। एक अन्य फैसले में राजनीति के अपराधीकरण को रोकने के लिए सर्वोच्च न्यायालय ने अपने फैसले के द्वारा बंदियों व सजायाफताओं को जिस प्रकार चुनाव लड़ने से बेदखल किया, उसकी जितनी प्रशंसा की जाए कम है। ये तो दो नजीरें मात्रा हैं। ऐतिहासिक फैसलों की फेहरिस्त काफी लम्बी–चौड़ी है। यह अकारण नहीं है कि आज देश की जनता न्यायपालिका की 'जय–जयकार' कर रही है। न्यायपालिका संविधन की व्यवस्थाओं के अनुरूप क्या सही है, क्या गलत है, का बोध करवा रही है। यही वजह है कि न्याय की सर्वोच्चता के साथ–साथ संविधान की सर्वोच्चता भी देश में बरकरार है।[10]

भारतीय न्याय व्यवस्था में हालिया सुधार की जो प्रवृत्तियाँ देखने को मिल रही हैं, उनसे यही ध्वनित होता है कि वर्तमान में ब्रिटिशकालीन न्याय व्यवस्था की विकृतियों को दूर करने के यथेष्ट प्रयास किये जा रहे हैं। न्याय में त्वरितता लाने के लिए जहाँ 'फास्ट ट्रैक अदालतों' का गठन किया गया है, वहीं कम्प्यूटरीकरण से कार्यों के निष्पादन में तेजी आई है। न्यायिक सुधारों पर व्यापक ध्यान दिया जा रहा है तथा मुकदमों के बोझ में कमी लाने के कारगर उपाय सुनिश्चित किये जा रहे हैं। यह एक शुभ संकेत है कि प्राचीन भारतीय न्याय व्यवस्था की 'न्याय आपके द्वार' की अवधारणा को अंगीकार करते हुए वर्तमान न्याय व्यवस्था के तहत ग्रामीण अदालतों की स्थापना की प्रक्रिया शुरू हो चुकी है, ताकि न्याय के लिए भागदौड़ व व्यय कम हो तथा न्याय प्राप्ति में गति आए। इससे न्याय की पहुँच गरीब एवं अशिक्षितों तक बढ़ी है। जनहित याचिकाओं के रूप में वर्तमान न्याय व्यवस्था का उज्ज्वल एवं लोक–कल्याणकारी स्वरूप सामने आया है।[11]

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि भारतीय न्याय व्यवस्था के तीसरे चरण (ब्रिटिशकाल) में न्यायिक क्षरण की जो प्रक्रिया शुरू हुई थी तथा उसके फलस्वरूप जो विसंगतियाँ एवं विकृतियाँ भारतीय न्याय व्यवस्था से जुड़ गई थीं, वर्तमान न्याय व्यवस्था के तहत उन्हें दूर करने की पुरजोर कोशिशें की जा रही हैं, ताकि न्याय की सर्वोच्चता कायम रहे एवं इसका स्वरूप उज्ज्वल बना रहे। भारत की वर्तमान न्याय व्यवस्था का उज्ज्वल स्वरूप हमारे सामने है। हमारा अतीत तो गौरवशाली रहा ही है। आशा है कि आने वाले दिनों में न्याय का और उजला स्वरूप हमारे सामने आएगा जिससे भारतीय लोकतंत्र की जड़ें मजबूत होंगी। यह कहावत है कि 'जो भूतकाल को याद नहीं रखते, वे वर्तमान में उसे दोहराने को अभिशप्त रहे हैं।' यह सुखद है कि वर्तमान भारतीय न्याय व्यवस्था को अपना भूतकाल (ब्रिटिशकाल) याद है तथा वह लोकतंत्र के महत्त्व को समझती है। यही कारण है कि वह भूतकाल की विकृतियों का निवारण कर अभिशप्त अतीत से उबरने के प्रयास तो कर ही रही है, लोकतंत्रा की मान–मर्यादा को कायम रखने के काम को भी बखूबी अंजाम दे रही है। निःसन्देह भारतीय न्याय व्यवस्था का अतीत एवं वर्तमान नमन करने योग्य है।

सन्दर्भ-ग्रन्थः

1. सेन, अमर्त्य, आर्थिक विकास और स्वातंत्रय, राजपाल प्रकाशन, दिल्ली; 2004
2. सेन, अमर्त्य, भारतीय अर्थतंत्र, इतिहास और संस्कृति, राजपाल प्रकाशन, दिल्ली; 2005
3. नारंग, ए.एम., भारत में लोकतंत्र : समस्याएँ एवं चुनौतियाँ
4. अग्रवाल, बीना, कैपेबिलिटी, फ्रीडम, इक्वेलिटी, अमर्त्य सेन, वर्क्स फॉम ए जेण्डर पर्सपेक्टिव; 2006
5. जालान, विमल, 21वीं सदी में भारतीय अर्थव्यवस्था, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली; 2005
6. पालखीवाला, नानी, आज का भारत, राजपाल प्रकाशन, दिल्ली, 2006
7. इकॉनॉमिक पॉलिटिकल वीकली
8. इण्डिया, 2018
9. इण्डिया टुडे; साप्ताहिक
10. सेन, अमर्त्य, भारत : विकास की दिशाएँ, राजपाल प्रकाशन, दिल्ल, 2000
11. सेन, अमर्त्य, न्याय का स्वरूप राजपाल प्रकाशन, दिल्ली, 2010

WRITERS VIEW
An Interdisciplinary, bilingual, bi-annual, a peer review or refereed International Journal
Vol. 3 No. 1&2 APRIL & OCTOBER Year 2018

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

6

प्रभा कृत अहल्या में वर्णित स्त्री की स्वाधीन चेतना

सोनम सिंह
शोध अध्येता, हिंदी विभाग
भूपेंद्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा, बिहार

'होना हैं मुक्त हमें...
देह और मन पर, लगातार थोपी गई हिंसा से'

संघर्ष जब स्वयं का हो, तो उससे निकलने की कोशिश भी स्वयं की ही होनी चाहिए, किसी अन्य की नहीं। संकट में सहारे खोजते–खोजते व्यक्ति को सहारों की अभ्यस्तता हो जाती है। इस स्थिति से मुक्ति एवं स्वनिर्भरता ही व्यक्ति (चाहे वह स्त्री हो या पुरुष) की वास्तविक जीत है और सही मायने में मुक्ति की अनिवार्य शर्त भी। मुक्ति की इसी अवधारणा को पुष्ट करती प्रतिनिधि काव्य रचना है– प्रभा खेतान की अहल्या। नौवें दशक के प्रारंभ में काव्य–कृतियों के माध्यम से साहित्य में विधिवत् पदार्पण करने वाली प्रभा की वैचारिक परिपक्वता और नारी चेतना, संवेदना एवं उसकी मुक्ति की जागृति से संबंधित यह उत्कृष्टतम काव्य संग्रह है। छठवीं और काव्य रूप में अंतिम यह रचना यद्यपि नारी जागृति की एक महाकाव्यात्मक गाथा है, किंतु प्रभा इसे एक लंबी कविता ही मानती हैं जिसका प्रकाशन सन् 1988 में सरस्वती विहार, दिल्ली से हुआ। इससे पूर्व का मिथकीय काव्य 'कृष्णधर्मा मैं' जहां कृष्णधर्मा के रूप में स्त्री की साझेदार सत्ता एवं सृष्टि निर्माण तथा उसके संचालन में उसकी महत्ता को स्थापित करती है, वहीं गौतम पत्नी अहल्या का मिथक ग्रहण करती यह रचना शताब्दियों से उपेक्षित, अभिशप्त एवं उत्पीड़ित स्त्री की मुक्ति का संघर्ष करती प्रतीत होती है।

यूं तो अहल्या पर असाहित्यिक एवं विचारणीय लेखन तो बहुतायत से हुए हैं, साहित्यिक पात्र के रूप में भी अहल्या काफी महत्वपूर्ण रही है। प्राचीन काल में तो इस पात्र पर लेखनी चली ही, आधुनिक काल में भी आधुनिक विचारधारा के अनुरूप यह पात्र अनेकानेक कवियों के मर्म को मथती रही है। चाहे वह चंद्रिका प्रसाद दीक्षित कृत 'अभिशप्त शिला' हो या रामकुमार वर्मा कृत 'ओ अहल्या', बल्देव वंशी कृत 'आत्मदान' हो या रमेशचंद्र कृत 'स्वर पाषाण शिला के', रश्मि मल्होत्रा कृत 'शिलाखंड' हो या प्रभा खेतान कृत 'अहल्या', चाहे विगत वर्षों में प्रकाशित स्त्री–पुरुष मिलन की इस घटना को

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

उदारवादी दृष्टि से जाँचती मथुरादत्त पांडे कृत 'अहल्या'। इन ग्रंथों के माध्यम से प्रायः सभी ग्रंथकारों ने अहल्या के दर्द, उसकी असहायावस्था पर सर्वथा नवीन दृष्टिकोण से विचार किया है। प्रायः सभी उसको शोषित और उपेक्षित मानते हुए उसकी मुक्ति संबंधी भिन्न–भिन्न मत प्रस्तुत करते हैं। प्रभा खेतान अहल्या के माध्यम से स्त्री के चिर शोषण पर प्रकाश ही नहीं डालती, शोषण से स्वयं मुक्ति की जागृति भी पैदा करती हैं। पूर्व में अधिकांश विचारकों ने स्त्री रूपी अहल्या की मुक्ति राम रूपी उदारमना पुरुष द्वारा दिखाई है किंतु प्रभा इन सब में भिन्न मत प्रस्तुत करती हैं। वह राम द्वारा दी गई मुक्ति के उपरांत भी स्त्री की मुक्ति उसके स्वयं के संघर्ष, उसकी जागृति और शोषण से मुक्ति के लिए उसके स्वयं के उद्यम से मानती हैं।

इसकी रचना की प्रेरणा एक अत्यंत ही साधारण, किंतु सर्जक प्रभा के लिए असाधारण, घटना से हुई– रास्ते में काले पत्थर से प्रभा का टकराव। 'ओह! यह पत्थर! किंतु क्या यह पत्थर है?' विचार कौंधा, पत्थर का मानवीकरण होते ही मानसिक उद्वेलन बढ़ा, परिणाम स्वरूप इस रचना का जन्म। प्रभा कहती हैं, 'अहल्या, इस दर्द को शब्दों में उतारना बड़ा कठिन है, पर मुझे चेष्टा तो करने दो। कविता पनपती है जब वह एक चाह की शिकार होती है। एक गहरी प्यास! जो घट रहा है, केवल उसका वर्णन कविता नहीं होती।'[1]

यह चाहना ही इस कृति–निर्माण के लिए कवयित्री को बाध्य करती है। अनजाने में या जान बूझकर किसी भी कारण सर्वगुण संपन्न कुलीन अहल्या एवं इंद्र का संसर्ग उन्हें 'अक्षम्य शाप' का भागी नहीं बनाता। हिंदू धर्माख्यानों में पुरुषों द्वारा परस्त्री–संसर्ग के सैकड़ों उदाहरण भरे पड़े हैं, किंतु कहाँ उनमें से किसी को भी इस प्रकार प्रताड़ित किया गया? फिर उसके पति के रूप में उससे प्रणय याचना करने वाले पुरुष के संसर्ग से वह इतनी घोर पाप की भागी कैसे हो गई कि हजारों वर्षों तक उसे प्रताड़ना सहने एवं जड़ जीवन को ढोने को विवश कर दिया गया। दूसरी बात, वस्तु के रूप में स्त्री को भोगने का आदी पुरुष मानसिकता ने उसके अन्य भूमिकाओं एवं रूपों को क्यों बिसरा दिया? क्यों वह भूल गया कि पत्नी के अलावा भी उसकी अन्य कई जिम्मेदारियाँ हैं, जिनका वह सफलतापूर्वक निर्वहन करती आयी है! प्रभा मानती हैं कि नारी सिर्फ शरीर या भोगनीय नहीं है। व्यक्ति के रूप में उसकी स्वतंत्र चेतना है। परंपरागत मानसिकता की जकड़बंदियों में जकड़ी नारी शोषण और पीड़ा से तब तक मुक्त नहीं हो सकती, जब तक उसमें इसके खिलाफ जागृति पैदा नहीं होती, और इससे मुक्ति के लिए वह स्वयं उद्यम नहीं करती। इस प्रकार नारी मुक्ति की यह महाकाव्यात्मक गाथा तीन चरणों से होकर गुजरती है –

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

1– स्त्री उत्पीड़न
2– उत्पीड़न के प्रति मूक सहमति
3– प्रभा द्वारा उसकी शक्ति जागृति का

स्त्री उत्पीड़न

अहल्या, इस संपूर्ण ब्रह्मांड में सर्वगुणसंपन्न, अद्वितीय, अपूर्व, सौन्दर्य–प्रतिमूर्ति। इस रूप और गुण के कारण ही पिता ब्रह्मा ने नामकरण किया 'अहल्या'। हल अर्थात् कुरूपता, और कुरूपता रहित अर्थात् अहल्या। सौंदर्य और गुणों की प्रतिमूर्ति अहल्या, जिसमें असुंदरता की कल्पना भी नहींय गौतम–वेशी इंद्र के संपर्क से दोषी, गुणहीन, असुंदर ही नहीं बनी, अपितु अपराधी घोषित कर चिरकाल तक के लिए पददलित बना कष्ट भोगने के लिए बाध्य कर दिया गया। फिर श्रीराम द्वारा उसकी मुक्ति दिखा उसे पंचकन्याओं में स्थापित कर प्रशंसनीय, अनुकरणीय या उदाहरणीय माना गया। विडंबना या मजाक जो कहें, किंतु निर्दोष होते हुए भी हजारों वर्षों तक खुद पर हुए अत्याचार या श्राप को अविचलित हो मौन स्वीकृति देती अहल्या को देवी बना दिया गया। किंतु अगर वह प्रतिरोध करती तब? अगर वह गौतम द्वारा दिये गये शाप को मानने या उसे ढोने से इंकार करती तब? क्या तब भी उसे दैवीय माना जाता? इस संदर्भ में लेखिका मीना केलकर का मत समीचीन प्रतीत होता है कि, ष्अहल्या को इसलिए श्रद्धेय बना दिया गया क्योंकि वह पुरुष प्रधान समाज के लिंग भेद के आदर्शों को स्वीकार कर लेती हैय वह शाप को बिना किसी प्रतिरोध के स्वीकार कर लेती है। साथ ही मानती है कि उसे दंडित किया जाना चाहिए था। दैवीय महानता का दूसरा कारण है– उसको दिए गये शाप द्वारा स्त्रियों को चेतावनी देना या उन्हें निरुद्ध किया जाना।'[2]

वास्तव में अहल्या एक ऐसे दर्द का नाम है जो संपूर्ण स्त्री जाति का प्रतिनिधित्व करती है, जो स्त्री उत्पीड़न एवं उसकी दयनीय स्थिति की पहचान है। इस दर्द को महसूस करती प्रभा अहल्या की बेबसी पर लिखती हैं–'मुक्त प्रस्तर से भयभीत/परित्यक्त/ शिलाखंड–सी /पड़ी राह के किनारे!'[3] 'पत्थरों के भीतर भी/ कांपती अग्निशिखा!/ बूंद–बूंद आंसू/ निःशब्द।'[4]

अहल्या– पुरुष के छलावे एवं अंध उत्पीड़न का जीता जागता प्रमाण। इंद्र छली था, किंतु महान ज्ञानी ऋषि गौतम ने एक निर्दोष को अति कठोर दंड देकर किस महानता और ज्ञान का परिचय दिया?– 'चेतना को/ पत्थरों का नग्न शरीर बना/ गौतम ने किया/ आदमीयत का आखिरी अपमान।'[5]

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

प्राचीन काल से आज तक सामान्य ही नहीं गौतम सरीखे बुद्धिजीवी वर्ग ने भी नारी को हाशिए पर ही रखा है– 'युग युग के आईने/ मगर हर आईने में/ मुझे नजर आती रही/ सिर्फ तुम/ स्थितिग्रस्त अभिशप्त।'[6]

उत्पीड़न के प्रति मूक सहमति

स्त्री अपने ही पुरुषों द्वारा शोषित होती है, किंतु इस शोषण में उसके मौन की भी कम भागीदारी नहीं। 'पंचकन्या : दि फाइव वर्जिंस ऑफ इंडियन एपिक्स' के लेखक भट्टाचार्य की मान्यता है कि, 'शाप की अविचलित होकर मौन स्वीकृति ही वह कार्य है जो रामायण को इस पात्र की प्रशंसा करने को विवश कर देता है और उसे प्रशंसनीय एवं अनुकरणीय चरित्र के रूप में स्थापित कर देता है।'[7]

अहल्या रूपी स्त्री की उसके शोषण में मौन सहभागिता पर प्रश्नचिन्ह लगाती प्रभा पूछती हैं– 'दिखाओ मुझे रक्त रंजित हृदय!/ कहो मुझसे शाप गाथा/ किस आकाश से टपका/ वह दुर्दैव/ जिसके सामने/ आत्मसमर्पण किया।'[8]

यह उसका मौन ही है जो उसके अंतर की व्यथा को व्यक्त नहीं करने देता जिसके परिणाम स्वरूप स्वयं के ऊपर हो रहे अत्याचार, शोषण एवं पीड़ा को नारी निःशब्द, मूक हो सहने को बाध्य है– 'सदियों से पड़ी हुई/ सीपियों के अंधेरे जगत में हम/ कभी नहीं समझा सकीं किसी को/ अपने अंतर का त्रास।'[9]

मानवी के रूप में खुद को स्थापित करने के लिए प्रतिबद्ध स्त्री के लिए यह आवश्यक है कि वह शोषण के खिलाफ अपने इस मौन को तोड़े। ऐसा करके उसकी परिस्थितियों में चमत्कारिक बदलाव हो, न हो, किंतु उसके व्यक्तित्व में परिवर्तन और शोषण के विरुद्ध आवाज उठाने की आत्म संतुष्टि अवश्य मिलेगी और वैचारिक परिवर्तन व मुक्ति की शुरुआत यहीं से तो होती है!

प्रभा द्वारा उसकी शक्ति जागृति का प्रयास

इस संग्रह में प्रभा प्रारंभ से ही स्त्री की इस परंपरागत मौन स्वीकृति के विरुद्ध मुक्ति का आह्वान करती दिखाई पड़ती हैं– 'ओ मेरी अस्मिता!/ मेरी आत्मजा!/ कहां भटक गई हो तुम/ अंधेरी अवचेतन गुफाओं में?/ चलो मन के पार चलें अहल्या/ पहचाने आत्मरूप।'[10]

इस आत्म रूप को पहचानने के लिए प्रभा नारी के अंतर्निहित अपार ऊर्जा एवं शक्ति को जागृत करते हुए कहती हैं कि सृष्टि में ऐसा कोई कार्य नहीं जिसे नारी अपनी चाहना से हासिल न कर सके– 'प्रकृति की हम बेटियां/ तूफानों के बीच भी/ कविता लिख सकती हैं/ देती हुई चुनौती, त्रासदी को/ आदमी को प्यार कर सकती हैं/ टकराती हुई हिंसा की लहरों से/ भय कैसा?/ तूफान तो हमारी भाषा है।'[11]

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

स्त्री की शोषण के विरुद्ध मौन स्वीकृति उसकी चेतना को जड़ता में बदल देती है। उसकी जड़ होती चेतना को जगाते हुए प्रभा इस स्थिति ग्रस्तता से मुक्ति की विप्लवी घोषणा करती हैं– 'मुक्त हो काल की अवधि से/ चाहती मैं/ चूर–चूर कर देना/ शाप से स्थिर हुई/ तुम्हारी प्रस्तरता/ चाहती मैं/ मुक्त कर बिखेर देना/ पवित्र भस्म/ हिमालय के शिखरों पर/ दिशा–दिशा।'[12]

प्रभा मानती हैं कि आज की अहल्या परंपरागत अहल्या से भिन्न है। उसे स्वयं की मुक्ति के लिए किसी पुरुष के सहारे एवं दया की आवश्यकता नहीं। अपनी मुक्ति–दात्री वह स्वयं है कोई राम या गौतम नहीं– 'राम की दी हुई मुक्ति के बाद भी/ बाकी है/ मुक्ति की एक सही यात्रा/ होना है मुक्त हमें/ देह और मन पर/ लगातार थोपी गई हिंसा से।'[13]

जब तक नारी अपने अंतर की शक्ति को पहचानते हुए स्वयं अपनी मुक्ति का उद्यम नहीं करेगी, तब तक अन्यों के द्वारा दी गयी मुक्ति भी उसे उसके प्रति किये जा रहे दुर्व्यवहार से मुक्ति नहीं दिला सकती– 'मुक्त रहकर भी बंधे रहने की पीड़ा/ आज भी झेलती अहल्या/ भोक्ता इंद्र/ विधायक गौतम/ मुक्तिदाता राम/ क्यों?'[14]

इस क्यों रूपी समस्या का समाधान ही इस कृति–निर्माण का आधार बना। प्रभा मानती हैं कि स्त्री को अपनी मुक्ति स्वयं तलाशनी होगी। अपनी अस्मिता, अपने अस्तित्व को स्वयं स्थापित करना होगा। यदि वह ठान ले तो अपनी खुद की पहचान बनाने के लिए उसे राम एवं कृष्ण सरीखे किसी विशिष्ट के सहायता की कोई आवश्यकता नहीं। मुक्ति किसी और के देने से नहीं मिलती, इसके लिए स्वयं ही प्रयास करना होगा– ष्उठोध मेरे साथध मेरी बहन!/ छोड़ दो,/किसी और से मिली मुक्ति का मोह!/ तोड़ दो/ शापग्रस्तता की कारा/ तुम अपना उत्तर स्वयं हो अहल्या!/ ग्रहण करो/ वरण की स्वतंत्रता।'[15]

अहल्या का अंत भी एक शुरुआत है– स्त्री जागृति की, उसकी मुक्ति चेतना की। परंपरागत रूढ़ियों, अन्याय एवं शोषण से स्वयं को मुक्त करने की यह जागृति ही एक नवीन जीवन एवं संस्कृति के निर्माण का माध्यम बनेगी। प्रभा इस मुक्ति–जागरण एवं नवसंस्कृति–निर्माण की उद्घोषणा करती हैं– 'अब/ जब तुम/ आंख खोलोगी, अहल्या!/ सच मानो, मेरी बहन!/ उसी वक्त खुलकर/ खिलने लगेंगी/ नयी संस्कृ ति की पंखुड़ियां।'[16]

प्रभा की कविताओं में स्त्री जीवन की विडंबना, शोषण एवं संघर्ष के कई रूपों को उकेरा गया है। शोषण के विरुद्ध आवाज उठाती स्त्री अपनी अस्मिता, अपने अस्तित्व को खोजती प्रतीत होती है। कहीं वह स्वयं इससे मुक्ति का रास्ता तलाशती है, तो कहीं

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

कवयित्री उसे प्रेरित करती है। स्वत्व और अस्मिता तलाशती स्त्री पितृसत्तात्मक मूल्यों एवं सोच से निरंतर टकराती रहती है और अगर विद्रोह नहीं कर पाये, तो उस शोषित व्यवस्था की शिकार होकर अभिशप्त जीवन जीने को बाध्य हो जाती है। अहल्या इसका प्रमाण है। इसीलिए जड़ बनी अहल्याओं को प्रभा अपने इस कृति के माध्यम से जागृति व संघर्षशीलता का संदेश देती हैं।

संदर्भ

1. अहल्या : डॉ. प्रभा खेतान, 1988, भूमिका से।
2. सबॉर्डिनेशन ऑफ वुमन : ए न्यू पर्सपेक्टिव : मीना केलकरय 1995, पृ.59, 60
3. अहल्या : डॉ. प्रभा खेतान, 1988 , पृ. 22
4. वही, पृ. 25
5. वही, पृ. 24
6. वही, पृ. 54
7. पंचकन्या : दि फाइव वर्जिंस ऑफ इंडियन एपिक्स : भट्टाचार्य, नवंबर–दिसंबर 2004, पृ. 31
8. अहल्या : डॉ. प्रभा खेतान, 1988, पृ. 29
9. वही, पृ. 47
10. वही, पृ. 23
11. वही, पृ. 74, 75
12. वही, पृ. 69
13. वही, पृ. 77
14. वही, पृ. 42
15. वही, पृ. 27
16. वही, पृ. 72

WRITERS VIEW
An Interdisciplinary, bilingual, bi-annual, a peer review or refereed International Journal
Vol. 3 No. 1&2 APRIL & OCTOBER Year 2018

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

7

भारत में ब्रिटिश शिक्षा का विकास

डॉ. अनुपम सिंह
अस्सिटेंट प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विभाग
दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

भारत में ब्रिटिश शासन को उचित ठहराने के लिए अंग्रेजों ने अपने योगदान के कुछ पहलुओं के बारे में अत्यधिक ऊँची धारणा बना रखी थी। वे अपनी उपलब्धियों की कमियों के लिए ऐसे कारणों को जिम्मेवार बताते थे, जिन्हें दूर करना उनके बस की बात नहीं थी। प्रतिकूल आलोचना होने पर उनका सामान्य उत्तर यह होता था कि इस आलोचना में ऐसे काम पर जोर दिया गया है, जिसे छोड़ दिया गया था तथा जिसे अब भी किया जाना बाकी है, और इसके साथ ही इस बात की उपेक्षा कर दी गई है कि क्या काम पूरा हो चुका है, कितना काम अच्छी तरह से किया गया है, किन साधनों में किया गया है, किन कठिनाईयों के बीच किया गया है, और कितनी सफलतापूर्वक तथा सफलता मिलने की आशा के साथ किया गया है। दूसरी ओर भारतीय लोग भारत की ब्रिटिश शिक्षा नीति की असफलताओं का उल्लेख करते थे। वे भारत में जो शैक्षिक प्रगति हुई थी उसकी रफ्तार को स्वयं इंगलैंड अथवा स्वाधीन पूर्वी देशों (जैसे जापान या तुर्की) अथवा अन्य राष्ट्रों के पराश्रित राज्यों (जैसे फिलिपाइंस) में हुई शैक्षिक प्रगति की रफ्तार से तुलना करते थे। इसके साथ ही उनका कहना था कि भारत में आधुनिक शिक्षा राष्ट्रीय समस्याओं को हल करने में असफल रही है।

राजनीतिक दासता अथवा आर्थिक शोषण से जो अनिष्ट हुए हैं उसकी क्षतिपूर्ति आधुनिक शिक्षा में होने वाले थोड़े से लाभों से नहीं हो सकती है। इन विचारों में राजनीतिक अभिनति स्वतः स्पष्ट है। अब चूँकि इस अभिनति का मुख्य कारण समाप्त हो चुका है अतः इस बात की सँभावना स्पष्ट दिखाई देती है कि अब शैक्षिक इतिहास का निष्पक्ष एवं अधिक निर्णायक मूल्यांकन किया जा सकता है। आज अंग्रेज अपनी गलतियों को स्वीकार करने के लिए उसी प्रकार तैयार हैं जिस प्रकार कोई भारतीय उस बहुमूल्य देन को स्वीकार करने के लिए तैयार है जो इंगलैंड ने भारतीय जीवन और विचारधारा को दी है। भूमिकाओं में यह परिवर्तन हो जाने के साथ ही हम अतीत की अपेक्षा अब सत्य के अधिक निकट आ गए हैं।

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

भारत में ब्रिटिश शैक्षिक प्रशासन के विरुद्ध मुख्य आरोप यह है कि उसने देश लिए एक राष्ट्रीय शिक्षा पद्धति का निर्माण नहीं किया। इस आरोप के बारे में कोई भेद नहीं है। जब 1921 में भारतीय शिक्षा के संबंध में अंग्रेजों का उत्तरदायित्व कुछ हद समाप्त हो गया। उस समय सरकारी पद्धति ने राष्ट्रीय शिक्षा के संप्रत्यय को स्वीकार तक नहीं किया था। परन्तु यदि तर्क करने के लिए यह मान भी लें कि जनता को शिक्षा के लिए अप्रत्यक्ष रूप से अंग्रेजी सदा ही उत्तरदायी रही तो अधिक से अधिक उन्हें इस बात का श्रेय दिया जा सकता है कि उन्होंने देश के लिए एक राष्ट्रीय शिक्षा पद्धति का मानस प्रत्यक्षीकरण करके उसे शैक्षिक विकास की युद्धोत्तर योजना के रूप में जनता के समक्ष प्रस्तुत कर दिया। परन्तु यह योजना संतोषजनक नहीं है। यदि यह योजना संतोषजनक होती तो भी यह आरोप रहता कि 15 अगस्त, 1947 को इस योजना पर कोई कार्रवाई नहीं की गई।[1]

1904 में कर्जन ने शैक्षिक विषयों के बारे में पहला भारी तूफान खड़ा किया था और 1937 में भारतीयों को शिक्षा पर लगभग पूर्ण नियंत्रण प्राप्त हुआ था। इन दोनों के बीच की कालावधि में इस असफलता के तथ्यों के बारे में विवाद चलता रहा। सरकारी इतिहासकार एक चरम सीमा तक पहुँच गए और ब्रिटिश शिक्षा नीति के समर्थन में बेसिर–पैर की बातें कहने लगे। राष्ट्रवादी दूसरी चरम सीमा पर पहुँचे और उन्होंने यह घोषण कर दी कि ब्रिटिश शासन ने भारत को सांस्कृतिक एवं अध्यात्मिक रूप से बर्बाद किया है। परन्तु ये चरम सीमाएँ अब अतीत की घटनाएँ हो चुकी है। असफलता के तथ्य को अब बेहिचक स्वीकार कर लिया जाता है। इसके परिणामस्वरूप शिक्षाविदों का ध्यान इसी असफलता के कारणों का पता लगाने की ओर लगा हुआ था ताकि अतीत में की गई गलतियों से भविष्य में बचा जा सके। शैक्षिक इतिहास के सर्वेक्षण से पता चलता है कि अंग्रेज भारत में राष्ट्रीय शिक्षा पद्धति का निर्माण नहीं कर सका। राष्ट्रीय शिक्षा पद्धति किसी लक्ष्य को प्राप्त करने का एक साधन होती है। स्वयं राष्ट्र से जिस प्रकार की भूमिका निभाने की कामना की जाती है, राष्ट्रीय शिक्षा पद्धति को उसी के अनुसार गठित किया जा सकता है। ब्रिटिश सत्ता का स्वरूप साम्राज्यवादी था अतः वह आत्मसम्मानी एवं स्वतंत्र भारत का मानक प्रत्यक्षीकरण नहीं कर सकी। मिशनरियों ने भारत को एक ऐसे स्थल के रूप में देखा जहाँ लोगों को ईसाई बनाया जा सकता था। कम्पनी सामान्यतः उसे अपने वाणिज्य और मुनाफों के लिए एक क्षेत्र समझती थी। 1854 के आज्ञापत्र में उसका उल्लेख कच्चे माल के उत्पादक अथवा ब्रिटिश उद्योगों के तैयार माल के क्रेता के रूप में किया गया था कर्जन ने उसे ब्रिटिश प्रशासक के सभ्यता प्रसारक प्रभाव के लिए एक शाश्वत क्षेत्र माना। दसरे के अंत तक सरकारी नीति की सभी घोषणाओं की

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

यह विशेषता रही कि उनके का एक ऐसे प्रभुत्व सम्पन्न स्वाधीन राष्ट्र के रूप में मानक प्रत्यक्षीकरण कर आँख मूंदकर इन्कार किया जाता रहा जिसे सार्वभौम संस्कृति को अपनी अदिती बहुमूल्य देन देती है। स्पष्ट है कि इस प्रकार के साम्राज्यवादी राजनीतिक द राष्ट्रीय शिक्षा पद्धति के लिए कोई स्थान नहीं है।

ब्रिटिश शैक्षिक प्रशासन की असफलता का एक अन्य कारण यह भी था कि वह पूर्व और पश्चिम के बीच उचित मेल स्थापित करने में असमर्थ रहा। मिशन गृह कार्य इसलिए नहीं कर सके कि वे धर्मांतरण पर जोर देते थे, इसाई धर्म एवं पाश्चात्य संस्कृ ति को परस्पर अवियोज्य समझते थे और प्राचीन भारतीय परम्पराओं एवं संस्कृति को आदर की दृष्टि से नहीं देखते थे। अंग्रेज कर्मचारी यह कार्य कर सकते थे परन्तु उनमें से बहुत कम लोगों ने इस कदम को वांछनीय समझा और उससे भी कम लोगों ने इस कदम को उठाने की आवश्यकता महसूस की। निःसंदेह कुछ लोग प्राच्य संस्कृति के भारी प्रशंसक थे। परन्तु अनेक बार वे अपना औचित्य बोध खो बैठे और उन्होंने अतीत के उसी प्रकार गुण गए जिस प्रकार भारतीय उग्र राष्ट्रवादी गाते थे। अतः इन प्राच्यवादियों ने यह कार्य आरंभ नहीं किया।

शिक्षा नीतियों को अधिकांशतः भारी संख्या में ऐसे अंग्रेज कर्मचारी तैयार करते थे जो लार्ड किपलिंग की भाँति इस बात में विश्वास रखते थे कि पूर्व, पूर्व है और पश्चिम, पश्चिम, ये दोनों कभी नहीं मिलेंगे। विक्टोरियन असामाजिकता और उसकी संरक्षणात्मक अभिवृति इस संबंध में विशेष रूप से बुरी थी। विक्टोरियन असामाजिकता भारतीयों को कानूनविहीन अभिजात मानती थी, बाबू अंग्रेजी का मजाक उड़ाती थी, शिक्षित व्यक्तियों को निष्ठावान् और निष्ठाहीन वर्गीकृत करने का प्रयत्न करती थी, यूरोपीय क्लबों में भारतीयों के प्रवेश पर रोक लगाती थी और सामान्यतः संकोच और अलगाव का ऐसा वातावरण पैदा करती थी जिसमें संस्कृतियों का मेल होना यदि असंभव नहीं तो कठिन अवश्य हो गया। इन अभिवृतियों के कारण जो प्रजातीय वैर भाव उत्पन्न हुआ वह राजनीतिक संघर्ष के वातावरण में और भी अधिक बढ़ गया। इसका परिणाम यह हुआ कि अधिकांश राष्ट्रवादी भारतीयों में पाश्चात्य संस्कृति के प्रति ग्राही अभिवृति होने के बजाय अवज्ञा करने और चुनौती देने की अभिवृति पैदा हो गई।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि विचाराधीन काल में पूर्व और पश्चिम का मेल कराने लिए योजनाबद्ध और बड़े पैमाने पर सरकारी प्रयास नहीं किया गया। कुछ व्यक्तियों ने अपने जीवन में दोनों संस्कृतियों का सुन्दर सम्मिश्रण करके दिखाया और अपने चारो ओर एक विलक्षण माधुर्य एवं प्रकाश फैलाते रहे। कुछ संस्थाओं ने इसको अपने शैक्षिक कार्यक्रमों के द्वारा करने का प्रत्यन्न किया। ये प्रयोग सदैव गैर कारी तौर

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

पर हुए और इन्होंने उपर्युक्त संप्रत्यय को जीवित रखने में सहायता दी परन्तु सरकारी शिक्षा पद्धति द्वारा इस आदर्श को मान्यता न दिए जाने से जो हानि हुई थी उसकी क्षतिपूर्ति इन प्रयोगों में नहीं हुई।[2]

ब्रिटिश शैक्षिक प्रशासन की असफलता का महत्वपूर्ण कारण यह है कि उसने शिक्षा के लिए समय–समय पर जो लक्ष्य निर्धारित किए वे अपर्याप्त थे। वारेन हेस्टिंग्स और डंकन अधिकांशतः समाज के उन वर्गों की राजनीतिक सुलह चाहते थे जो अंग्रेजों की विजय के परिणामस्वरूप राजनीतिक सत्ता एवं प्रभाव से वंचित हो गए थे। 1813 के चार्टर अधिनियम में यह कहा गया था कि प्राच्य साहित्यों का पुनरुत्थान एवं सुधार किया जाए और विद्वान मूल निवासियों को प्रोत्साहन दिया जाए। 1854 के आज्ञापत्र में यूरोप के उन्नत कला, विज्ञान, दर्शन एवं साहित्य के प्रसार की बात कही गई थी। 1882 के आयोग ने इस विषय पर बिल्कुल भी विचार नहीं किया। कर्जन ने भारतीय प्रज्ञा के अंतर्भूत दोषों को दूर करने की बात कही। 1913 के संकाय ने चरित्र निर्माण को शिक्षा नीति का मुख्य उद्देश्य घोषित कर दिया।

भारतीयों को सरकारी विभागों में नौकरी के लिए प्रशिक्षित करने का उपयोगितावादी उद्देश्य आंरभिक काल से ही सामने रहा था, यद्यपि उस पर अलग–अलग समय पर अलग–अलग मात्रा में जोर दिया गया। स्वशासन के लिए भारतीयों को प्रशिक्षित करने का परार्थवादी राग भी यदा–कदा अलापा जाता रहा। मैकाले और मेटकॉफ उन सबसे पहले व्यक्तियों में से थे जिन्होंने गर्व और विश्वास के साथ स्वशासन की बात कही थी। ग्रांट को इसका पक्का पता नहीं था, यद्यपि उसे इस बात से खेद नहीं होता। परन्तु औसत कर्मचारी को स्वराज की उस संभावित माँग का डर था जो भारत पेश कर सकता था। अतः उसने अपनी शक्ति के अनुसार हर प्रकार से यह कोशिश की थी कि इस अनिष्टकारी दिन को यथासंभव टाला जाय। इसका परिणाम यह हुआ कि स्वशासन के लिए प्रशिक्षण देना ब्रिटिश शिक्षा नीति का एक सुचिंतित उद्देश्य नहीं वरन् इस नीति का एक उप परिणाम ही रहा।

निःसंदेह यह बात स्पष्ट है कि प्रत्येक उद्देश्य का अपना उचित महत्व है। परन्तु उपर्युक्त उद्देश्य से अकेले अथवा मिलकर भी उन संबद्ध एवं विषाद उद्देश्यों को प्रस्तुत नहीं करते जो भारत की राष्ट्रीय शिक्षा पद्धति के होने चाहिए। अब यह सर्वाधिक रूप से स्वीकार किया जाता है कि जब तक कोई पद्धति उस परिपूर्ण जीवन के स्पष्ट ज्ञान पर आधारित नहीं होगी जिसे प्रदान करने का उसे प्रयत्न करना चाहिए तब तक विधान, संहिताश, ज्ञापनों, पति और परीक्षाओं के बारे में की जानेवाली चर्चाओं से कोई लाभ नहीं होगा। यद्यपि अनगिनत कर्मचारियों, समितियों, योगों और प्रतिवेदनों ने भारत शिक्षा की

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

अनेक समस्याओं पर बहुत विस्तार से चर्चा की है तथापि सम्पूर्ण जीवन के प्रसंग में शिक्षा के उद्देश्यों पर चर्चा नहीं की गई थी। इस दिशा में पहल भारतीय विश्वविद्यालय आयोग के प्रतिवेदन (1949) में किया गया। विश्वविद्यालय शिक्षा के उद्देश्यों के बारे में है।[3]

यह ब्रिटिश शैक्षिक प्रशासन की एक कमजोरी थी कि उसने पर्याप्त, का निरूपण नहीं किया। इस कमजोरी का जो हानिकारक प्रभाव पड़ा, उसमें कतिपय गलत कार्यविधियों के अपनाए जाने से और भी वृद्धि हो गई। इन सर्वप्रथम गलत कदम यह था कि देशी शिक्षा पद्धति की उपेक्षा की गयी जिसके परिणामस्वरूप वह 1900 के लगभग प्रायः पूर्णतया लुप्त हो गयी। दूसरा गलत कदम यह था कि अंगेजी आदर्शों पर अत्यधिक निर्भर रहा गया और इंगलैंड में विकसित सभी प्रकार की योजनाओं एवं विचारों की तुच्छ नकल करके उसे भारत पर थोप देने का प्रयास किया गया। इंगलैंड नगरीय, औद्योगीकृत और धनाढ्य देश है परन्तु भारत ग्राम्य खेतिहर और निर्धन है। दोनों देशों की सामाजिक एवं आर्थिक पृष्ठभूमि में जो विरोध पाया जाता है उसके फलस्वरूप इंगलैंड भारत के लिए एक अच्छा आदर्श नहीं बन सकता है। परन्तु अंग्रेज प्रशासक इस बात को मान बैठे थे कि भारत को जिस आदर्श की कभी आवश्यकता पड़ सकती है, वह काफी संशोधनों के बाद इंगलैंड का ही आदर्श हो सकता है। इस धारणा के परिणामस्वरूप उन्होंने देशी परम्पराओं की तथा संसार के उन प्रगतिशील देशों के नमूनों की उपेक्षा की जिनके सामाजिक एवं आर्थिक ढाँचे भारत के सामाजिक एवं आर्थिक ढाँचे के अधिक निकट थे। वास्तव में यही लगता है कि भारतीय शिक्षा निरन्तर सिंड्रेला (एक उपेक्षित नारी) की भाँति रही। उसे इंगलैंड शिक्षा पद्धति के आँचल से बाँध दिया गया था। यर्थाथतः यही हमारी भारतीय शिक्षा पद्धति की त्रासदी रही है। अधोमुखी निस्पंदन सिद्धांत को स्वीकार किया जाना भी एक गलती थी क्योंकि इसमें सार्वजनिक शिक्षा को अस्थायी रूप से धक्का लगा। इसके अतिरिक्त अन्य अनेक बातें ऐसी थी जिन्हें इतिहास ने अविवेकपूर्ण सिद्ध कर दिया है जैसे अंग्रेजी का शिक्षा माध्यम के रूप में व्यापक प्रयोग, माध्यमिक एवं महाविद्यालयी चरण।[4]

एक में अंग्रेजी के अध्यापन पर जोर, यह विश्वास कि अंग्रेजी समस्त देश की राष्ट्रभाषा बनेगी और बनी रहेगी और इसके परिणामस्वरूप आधुनिक भारतीय भाषाओं का उपेक्षा किया जाना। आसानी से इस प्रकार के अन्य बहुत से उदाहरण दिए जा सकते हैं। इन सबसे यह पता चलता है कि स्थिति का सही तौर से मानस प्रत्यक्षीकरण नहीं किया गया और चीजों को भारतीय दृष्टिकोण से नहीं देखा गया। रालिंसन का इस निष्कर्ष पर पहुँचना बिल्कुल ठीक है कि भारत में ब्रिटिश शासन की सफलता, जहाँ तक

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

असफलता थी, केवल कल्पनाशक्ति की कमी के कारण हुई थी। शिक्षा का आयोजन शून्य में नहीं की जा सकती है और शैक्षिक प्रगति सदैव राष्ट्र की सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक उन्नति की मोटे तौर से आनुपातिक होती है। ब्रिटिश शासन के कुछ पहलू इस प्रकार की उन्नति के वैरभावी थे। उदाहरण के लिए धार्मिक तटस्थता के सिद्धांत का अर्थ यह लगाया गया कि समाज सुधार से संबंधित किसी भी विषय में हस्तक्षेप न किया जाए। इसका परिणाम यह हुआ कि अस्पृश्यता अथवा बालविवाह जैसी बुराईयों के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए राजकीय सहायता तथा दण्ड विधान की मदद नहीं मिल सकी। अतः इस विषय में ब्रिटिश शासन की उपेक्षा कुछ देशी रियासतों में अधिक प्रगति हुई। परन्तु अंग्रेज कर्मचारी को उसकी तटस्थ अभिवृति के लिए दोष दे सकना कठिन है। वह संभवतः इससे बेहतर कुछ नहीं कर सकता था। ऐसा विशेष इसलिए था कि उसके लिए राजनीतिक रूप से यह अभीचीन था कि बरें का छत्ता न छेड़ा जाए। परन्तु यह बात भी स्वीकार की जानी चाहिए कि सामाजिक मामलों में हस्तक्षेप न करने का सिद्धांत वास्तव में एक तटस्थ निर्णय नहीं है। इससे कट्टरपंथ की ताकतें सारभूत रूप से मजबूत होती हैं और उस हद तक इससे सच्ची शिक्षा की प्रगति में बाधा पड़ती है। इसी प्रकार, भारत की राजनीतिक पराधीनता के कारण भी शैक्षिक प्रगति में कठिनाइयाँ उत्पन्न हुई।

राष्ट्रीय एकता की सुदृढ भावना पैदा करने के लिए भारत में राष्ट्रीय शिक्षा का प्रथम उद्देश्य यह होना चाहिए था कि सभी भिन्न–भिन्न धर्मों, सम्प्रदायों और जातियों को पब्लिक स्कूलों की एक समान लोकतंत्रीय प्रणाली के अंतर्गत लाया जाए। परन्तु राजनीतिक रूप से यह वांछनीय नहीं था कि इस प्रकार की एकता पैदा हो। अतः साम्प्रदायिक एवं धार्मिक एकता पैदा करने के लिए कोई योजनाबद्ध और जोरदार प्रयास नहीं किए गए बल्कि कभी–कभी तो फूट डालकर शासन करने का खेल खूब खुलकर खेला गया और दो बड़ी जातियों, हिन्दुओं एवं मुसलमानों की शिक्षा को एक दूसरे से पृथक–पृथक् बढ़ने दिया गया। तीसरी बात यह है कि ब्रिटिश शासन के आर्थिक पहलू असंतोषजनक थे। अब इस बात को सामान्य रूप से स्वीकार किया पिछले 150 वर्षों में लोगों की निर्धनता बढ़ी थी और इस प्रकार की बिगड़ी हुई आर्थिक पृष्ठभूमि में कोई शैक्षिक प्रगति संभव नहीं है। दूसरे शब्दों में शासन भारतीय जीवन के सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक पक्ष का लि. तो कर सकता था, न उसने किया। चूँकि राष्ट्रीय शिक्षा जनता के साम राजनीतिक और आर्थिक जीवन के पुनरुज्जीवन का कार्यकरण होता है अतः प्रशासन भारत के लिए वास्तविक राष्ट्रीय शिक्षा पद्धति का विकास नहीं कर सका।[5]

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

ब्रिटिश शैक्षिक प्रशासन की असफलता का सबसे प्रबल कारण था कि योजना बनाने के लिए आवश्यक कर्मचारी जुटाने और भारत में एक राष्ट्रीय शिक्ष पद्धति की व्यवस्था करने में असमर्थ रहे। निश्चय ही यह कार्य बहुत भारी और कठिन था और यदि इस कार्य को आंशिक रूप से सम्पन्न किया जाता तो उसके लिए भी इंगलैंड के बहुत से अच्छे शिक्षाविदों की आजीवन सेवा की आवश्यकता हुई होती। परन्तु इंगलैंड ने प्रथम श्रेणी के बहुत थोड़े शिक्षाविदों को भारत भेजा। यह सही है कि मिशनरियों ने डफ अथवा विल्सन जैसे कुछ महापुरुषों को भेजा था परन्तु उनका योगदान इसलिए सीमित रह गया था कि स्वयं मिशनरी उद्यम भी भारतीय शिक्षा में एक लाभप्रद किन्तु गौण भूमिका ही अदा कर सका। सरकारी क्षेत्र भी पूरी तरह उभरे नहीं थे। पंजाब के आर्नलु अथवा बम्बई के सर अलेक्जेण्डर ग्राँट तथा कुछ अन्य व्यक्तियों को सरकारी लोगों के बीच बहुत सम्मानप्रद स्थान प्राप्त था। जिन व्यक्तियों का शिक्षा विभाग में कोई संबंध नहीं था परंतु, जिन्होंने भारतीय शिक्षा के लिए अच्छा कार्य किया उनमें सबसे महान व्यक्ति सर माइकल सैंडलर थे। परन्तु 1854 और 1924 के बीच शिक्षा विभागों के यूरोपीय अफसरों का जो अंतहीन प्रवाह भारत में आया उसकी तुलना में इस प्रकार के महापुरुषों की संख्या नगण्य थी। सर अलेक्जेण्डर ग्राँट का यह कहना मूल रूप से सही था कि शिक्षा विभाग में सेवा की शर्ते इस प्रकार की नहीं थी कि वे अच्छे अधिकारियों को आकर्षित कर सकती।[6]

यहाँ तक कि 1896 में भारतीय शिक्षा सेवा का सर्जन होने से भी स्थिति में सुधार हुआ। जब हम यह विचार करते हैं कि इंगलैंड ने कितनी ऊँची सैनिक प्रतिभा भारत भेजी थी और भारतीय सेवा अथवा न्यायपालिका के इतिहास गगन में कितने महापुरुष आकाशगंगा के नक्षत्रों के रूप में जगमगा रहे है, और कितने महान इंजिनियरों, डाक्टरों और सर्वेक्षकों ने भारत में और भारत के लिए कार्य किया था तो भारतीय शिक्षा विभागों के औसत यूरोपीय कर्मचारी के लघुव्यक्तित्व को देखकर मन में चोट पहुँचती है। आखिरकार, प्रशासन की कोई पद्धति अपने कर्मचारियों के व्यक्तित्व में ऊँची नहीं उठ सकती है। शिक्षा विभाग के जो औसत कर्मचारी भारत आए उनकी ओर दृष्टिपात करने पर गोखले की इस बात पर आश्चर्य नहीं होता है कि भारतीय शिक्षा विभाग विशेषज्ञों के संकीर्ण, धर्मान्ध और सस्ते शासन का मूर्त रूप था। ब्रिटिश भारतीय प्रशासन के लिए शिक्षा कभी सर्वाधिक महत्व का विषय नहीं रही केवल उस समय को छोड़कर जब शिक्षा के राजनीतिक रूप से कष्टकर परिणाम निकलते हों, कभी शिक्षा को परम पर्णता नहीं दी गई। यहाँ तक कि 1921 में भी शिकायत की गई की अनुभवी सचिव सबेरे को अपनी शक्ति को वित्तीय तथा न्यायिक फाईलों में व्यय कर देने के बाद सामान्यतः अपने शैक्षिक संकल्प को डूबते सूरज के साथ तैयार करते थे। शिक्षाविदों को यह ध्यान दिलाया गया

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

कि उनका कार्य है कि वे चरित्र निर्माण करे तथा अच्छे एवं दक्ष नागरिक तैयार करें, उनकी कार्यविधियों, अर्थव्यवस्था और जनमत द्वारा विहित सीमाओं के अंदर रहते हुए अच्छी एवं प्रभावी होनी चाहिए। इन व्यंग्यपूर्ण टिप्पणियों से यह पता चलता है कि विभागीय अधिकारियों को सरकार की उदासीनता और वित्त विभागों की निष्ठुरता के विरुद्ध किस प्रकार संघर्ष करना पड़ा था। समग्र इतिहास में प्रमुख रूप से यही बात देखने को मिलती है। शैक्षिक पुनर्निर्माण संबंधी अभियान के लिए इस बात की आवश्यकता थी कि सरकार और सभी विभागों के कर्मचारी उसका पूरी शक्ति के साथ समर्थन करें। यहाँ तक कि जिस काल में सभी कर्मचारी यूरोपीय होते थे, केवल उन विरले अवसरों को छोड़कर जब रिपन और कर्जन जैसे वायसराय बागडोर सम्भाले हुए थे, कभी यह समर्थन प्राप्त नहीं हुआ। जब शिक्षा को भारतीय नियंत्रण में दे दिया गया तो राजस्व जैसे अन्य महत्वपूर्ण विभागों से और भी कम सहयोग मिला। भारत के पास जो शैक्षिक अधिकारी थे, यदि उनकी ओर सरकार ने अधिक ध्यान दिया होता अथवा उन्हें राजस्व और वित्त विभागों से अधिक उत्साहपूर्वक सहयोग मिला होता तो भी अपेक्षाकृत अच्छे परिणाम निकल नकते थे। परन्तु ऐसा होना नहीं था।[7]

ब्रिटिश शिक्षा पद्धति की न तो कोई योजना थी और न किसी पूर्व निर्धारित लक्ष्य क पहुँचने के लिए कोई संगत अभियान ही था। यह प्रत्यय निश्चय ही 20वीं शदी का प्रत्यय है कि प्रशासन के लिए एक योजना अथवा कार्यक्रम होना चाहिए। अतः यदि 19वीं शताब्दी के भारतीय शिक्षाविदों के पास कोई योजना नहीं थी तो इसमें पश्चर्य की कोई बात नहीं। परन्तु 1944 तक भी हमारे शिक्षकों ने कोई योजना इसलिए तैयार नहीं की कि जीवन के प्रति किसी तरह पार हो जाने की विशिष्ट ब्रिटिश अभिवृति मौजूद थी। जब कर्जन ने यह बात कही थी कि उन्हें नौगम्य सागर के उस उपखंड में जो रहस्यपूर्ण अतीत और उससे भी अधिक रहस्य बीच स्थित है भारतीय शिक्षा का काम करना है, तो उन्होंने कल्पना था। अधिकांश ब्रिटिश कर्मचारी आसन्न वर्तमान के लिए जीवनयापन और कार्य करते थे। वे भारत के अल्पकाल के लिए आए थे। उनका सम्पूर्ण लक्ष्य यह था कि वे तत्क्षण ही कुछ ऐसा कार्य कर दें, जिसके परिणाम शीघ्र निकलें और उसे को स्वयं देख सकें। अतः उन्होंने अतीत और भविष्य की ओर ध्यान नहीं, असंख्य दृष्टांत दिए जा सकते हैं जिनमें प्रत्येक आनुक्रमिक कर्मचारी ने अपनी : ही नीति अपनाई और कभी भी अपने पूर्वाधिकारी की नीतियों को विकसित अथवा अपने उत्तराधिकारी द्वारा जारी रखे जाने के लिए कोई योजना बनाने की परवाह नहीं की। राष्ट्रीय शिक्षा का विकास करने के लिए एक दीर्घकालिक योजना होनी चाहिए। भारत में शिक्षा नीति का औसत जीवन काल पाँच से दस वर्ष तक रहा था।

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

संदर्भ ग्रंथ-सूची :-

1. घोष, जे०, हायर एजुकेशन इन बंगाल अण्डर ब्रिटिश काल, कलकत्ता–1926, पृ. 122
2. चतुर्वेदी, सीताराम, भारतीय और यूरोपीय शिक्षा का इतिहास, पृ. 12
3. चौबे, सरजू प्रसाद, भारतीय शिक्षा का इतिहास, पृ. 202
4. सिंह, वंशीधर एवं शास्त्री, भारतीय शिक्षा का संक्षिप्त इतिहास, पृ. 336
5. जौहरी, बी. पी. एवं पाठक, भारतीय शिक्षा का इतिहास, पृ. 95
6. चटर्जी के० के०, इंग्लिश एजुकेशन इन इण्डिया, दिल्ली, 1976, पृ. 68
7. घोष, जे०, हायर एजुकेशन इन बंगाल अण्डर ब्रिटिश काल, कलकत्ता–1926, पृ. 193

WRITERS VIEW
An Interdisciplinary, bilingual, bi-annual, a peer review or refereed International Journal
Vol. 3 No. 1&2 APRIL & OCTOBER Year 2018

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

8

जलियांवाला बाग नरसंहार और भारतीय राष्ट्रवाद का दशा और दिशा

डॉ अजय कुमार सिंह
पोस्ट डॉक्टोरल फेलो, इतिहास विभाग
दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय

1905 के बाद भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन का भौगोलिक एवं सामाजिक विस्तार अखिल भारतीय और जन राष्ट्रवाद का विभिन्न स्वरुप प्रदान किया, पुनः राष्ट्रीय आन्दोलन अनुनय–विनय, निवेदन की रणनीति को खारिज कर जन संघर्ष की रणनीति को स्थापित करते हुए नेताओं की एक ऐसी पीढ़ी को जन्म दिया जो राष्ट्रीय आन्दोलन को स्वतंत्रता के मंजिल तक पहुचाने में योगदान दिया। इन आंदोलनों ने नेतृत्व दृढ़ता, कुशलता एवं दूरदृष्टि तथा संगठन के महत्त्व को अखिल भारतीय जनसंघर्ष के सन्दर्भ में पहली बार रेखांकित किया साथ ही भारतीय राष्ट्रवाद व साम्राज्यवाद की खामियो को उजागर किया, जिसे भविष्य में सुधरने की कोशिश की गयी जो भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के लिए परिवर्तन बिंदु के समान थी। इन्हीं परिवर्तनों के क्रम में हमने सिडनी रौलेट एक्ट एवं जालियावाला बाग नरसंहार को देखने का प्रयास किया गया है, जो भारतीय राष्ट्रवाद को चरमबिन्दु पर स्थापित करता है और राष्ट्रवाद का तीव्र उद्‌भव इस समय दिखाई पड़ता है।

भारत वर्ष में राष्ट्रवाद के विभिन्न स्वरुप

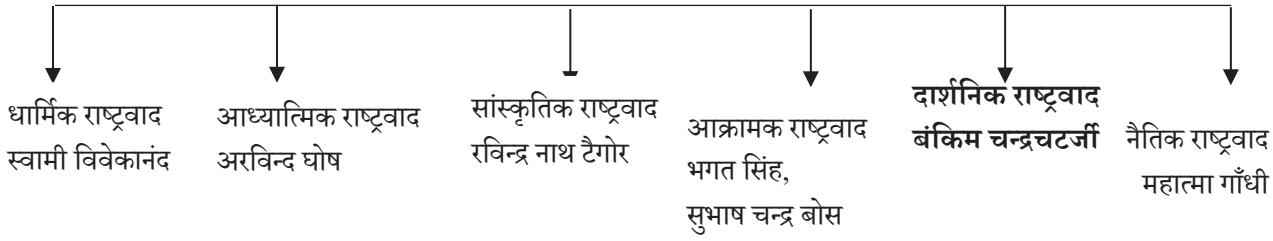

मैं पिछले वर्ष पहली बार जलियाँवाला बाग गया। इस अनुभव ने मुझे हिलाकर रख दिया। भारत के इतिहास में कुछ तारीख कभी भूली नही जा सकती है। 13 अप्रैल

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

1919 को बैशाखी के पर्व पर पंजाब में अमृतसर के जालियावाला बाग हत्याकांड को अंजाम दिया गया। यह हत्याकांड न केवल ब्रिटिश औपनिवेशिक सरकार की बर्बरता की कहानी कहता वरन इसने भारतीय राष्ट्रवाद की धारा ही बदल दिया।

जलियांवाला बाग अमृतसर के स्वर्ण मंदिर के पास का एक छोटा सा बगीचा है, जहां 13 अप्रैल 1919 को ब्रिगेडियर जनरल रेजीनॉल्ड डायर के नेतृत्व में अंग्रेजी फौज ने गोलियां चला के निहत्थे, शांत बूढ़ों, महिलाओं और बच्चों सहित सैकड़ों लोगों को मार डाला था और हजारों लोगों को घायल कर दिया था। यदि किसी एक घटना ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम पर सबसे अधिक प्रभाव डाला था, तो वह घटना यह जघन्य हत्याकाण्ड ही था। इसी हत्याकांड की याद में वहां एक शहीद स्मारक और अमर ज्योति भी है। बाग की दीवारों पर आज भी गोलियों के निशान हैं, जो उस वक्त हुए उस हत्याकांड की गवाही देते हैं। 1923 में ट्रस्ट ने स्मारक परियोजना के लिए भूमि खरीदी थी। अमेरिकी वास्तुकार बेंजामिन पोल्क द्वारा डिजाइन किया गया एक स्मारक, साइट पर बनाया गया था और 13 अप्रैल 1961 को जवाहरलाल नेहरू और अन्य नेताओं की उपस्थिति में भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति राजेंद्र प्रसाद ने इसका उद्घाटन किया था।

राष्ट्रवादियो की तीर्थस्थली में

जलियांवाला बाग हत्याकाण्ड का विरोध जताते हुए गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने 'सर' की उपाधि लौटा दी थी। इस हत्याकांड को आज भी जलियांवाला बाग स्मृति–दिवस के रूप में स्मरण किया जाता है। गोलीबारी में हुए मृत लोगों की संख्या को लेकर भी

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

विवाद है। नरसंहार की ब्रिटिश जांच के बाद जो आंकड़े जारी हुए, उसके अनुसार मृतकों की संख्या 379 है जबकि जांच की पद्धति को लेकर काफी आलोचना हुई थी। अधिकारियों को इस बात की जांच का भार दिया गया था, कि नरसंहार के तीन माह बाद जुलाई, 1919 में कौन–कौन मारे गए।

यह जानकारी शहर के निवासियों से पूछताछ कर जुटाई जानी चाहिए थी, परन्तु यह जानकारी इसलिए अधूरी रही, क्योंकि लोग इस डर से जानकारी देने के लिए आगे नहीं आए कि कहीं उन पर भी वैसाखी के कार्यक्रम में शामिल होने का शक न कर लिया जाए अथवा मृतकों का उस इलाके से नजदीकी सम्बंध न हो। इसके अलावा, पंजाब के एक वरिष्ठ अधिकारी से कमेटी के सदस्यों ने पूछताछ की थी। उन्होंने स्वीकार किया था कि मृतकों की सही संख्या ज्यादा हो सकती है।

चूंकि भीड़ के आकार (15000 से 20,000) के मद्देनजर आधिकारिक आंकड़ा संदिग्ध हो सकता है, इसलिए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने अपनी अलग जांच कमेटी बनाई, जिसका निष्कर्ष सरकार के आंकड़े से काफी भिन्न था। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने हताहतों का आंकड़ा 1500 बताया जिनमें करीब 1000 मृतकों की संख्या शामिल है। नरसंहार संबंधी जानकारी दबाने के सरकार के लाख प्रयास के बावजूद भारत भर में यह खबर फैल गई और व्यापक स्तर पर लोगों का गुस्सा फूट पड़ा, फिर भी दिसम्बर, 1919 तक ब्रिटेन में इस नरसंहार का विवरण लोगों तक नहीं पहुंच सका।

जलियांवाला बाग का एक संकीर्ण प्रवेश द्वार

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

ब्रिटिश इंडियन आर्मी में गोरखा बटालियन के एडजुटेंट की रेजीमेंटल डायरी के अनुसार इस खबर के फैलने के बाद अमृतसर में 9 अप्रैल को भीड़ पर हमले की योजना बनी कि ब्रिटिश स्कूल शिक्षक शेरवूड पर भीड़ ने हमला कर दिया है, जिसे बाद में डायर के गोली चलाने का आदेश देने का बहाना पाया गया, जिसकी कमान में जालंधर की ब्रिगेड थी। साथ ही पंजाब के लेफ्टिनेंट गवर्नर माईकेल ओ. डायर को यह विश्वास हो गया था कि 1857 के स्तर का पंजाब में सैनिक विद्रोह हो सकता है।

नरसंहार की निशानियाँ अब भी मौजूद है

अपने मुख्यालय में वापस आकर जनरल डायर ने अपने वरिष्ठ अधिकारियों को बताया कि उसका एक क्रांतिकारी सेना से सामना हुआ है। ओ. डायर ने यह आग्रह किया कि अमृतसर तथा अन्य इलाकों में मार्शल लॉ लगाया जाए। नरसंहार के बाद वायसराय लॉर्ड चेम्स फोर्ड ने इसकी अनुमति दे दी। मार्शल लॉ लागू होने के बाद 19 अगस्त को ''क्राउलिंग ऑर्डर' जारी किया गया।

डायर को हंटर कमीशन के समक्ष पेश होने का संदेश भेजा गया। यह जांच आयोग नरसंहार की वारदात की जांच के लिए बिठाया गया था। जांच का आदेश 1919 के अंत में सेक्रेटरी ऑफ स्टेट फॉर इंडिया एडविन मोंटेग्यू ने दिया था। डायर ने आयोग से कहा कि उसे जानकारी मिली थी कि उस दिन 12 बजकर 40 मिनट पर जलियांवाला बाग में बैठक होने वाली है,परन्तु उसने उसे रोकने का प्रयास नहीं किया। उसने कहा कि वह उस बाग में इस ख्याल से गया था कि यदि वहां भीड़ मिली तो उस पर गोली

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

चलाई जाएगी। डायर ने हंटर जांच आयोग के सवाल के जवाब में कहा, ''मैं सोचता हूं कि बिना गोली बारी के ही भीड़ को तितर–बितर करना संभव है, परन्तु भीड़ बार–बार वापस आ जाती थी और मुझ पर हंसने लगती थी तो मुझे लगा कि वे लोग मुझे बेवकूफ़ समझ रहे हैं।'

शहीदी कुआँ

डायर ने कहा कि यदि वह उन्हें घेरे के भीतर पाते तो मशीन गन का इस्तेमाल कर सकते थे, परन्तु गन बरक्तरबंद गाडियों के ऊपर लगी हुई थीं। उन्होंने कहा कि जब भीड़ पूरी तरह तितर–बितर होने लगी तब भी गोली चलाना बंद नहीं किया, क्योंकि उसने सोचा कि जब तक भीड़ तितर–बितर न हो जाए गोलीबारी जारी रखना उसकी ड्यूटी है। साथ ही कम गोलीबारी से अच्छा परिणाम नहीं मिलेगा। वास्तव में उसने तब तक गोलीबारी जारी रखी जब तक कि गोलियां खत्म न हो गई। उसने कहा कि गोलीबारी के बाद उसने घायलों की देखभाल की कोशिश नहीं की। वह मेरा काम नहीं था। अस्पताल खुले थे और वे वहां जा सकते थे। (हंटर आयोग ने डायर के इस कदम पर न तो कोई सजा सुनाई, न कोई दंड दिया और न ही अनुशासनिक कार्रवाई की सिफारिश की क्योंकि डायर के कदम को उसके अनेक वरिष्ठ अधिकारियों ने माफ कर दिया था, जिसे बाद में आर्मी कौंसिल ने बरकरार रखा था), फिर भी उसे अपनी ड्यूटी के मामले में गलत फहमी का शिकार माना गया और उसे अपनी कमान से हटा दिया गया।

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

13 अप्रैल, 1919 को उधम सिंह नाम के एक सिख युवक ने, जिसका लालन–पालन सिख अनाथालय में हुआ था, इस घटनाक्रम को अपनी आंखों के सामने होते हुए देखा था इसलिए उसने लंदन के काक्सटन हॉल में जाकर 1500 देशवासियों के नरसंहार का बदला माइकल ओ डायर की हत्या करके ले लिया। 31 जुलाई, 1940 को उधम सिंह को लंदन के पेंटोन विल्ले जेल में फांसी दे दी गई। 1919 में अमृतसर के जलियांवाला बाग में जनरल डायर ने वहां इक्कठे हजारों भारतीयों पर फायरिंग करने का आदेश दिया। बाग में मौजूद निहत्थे लोग बेरहमी से मारे गए।

साल 2013 में जब ब्रिटिश प्रधानमंत्री डेविड कैमरन वहां पहुंचे तो उन्होंने उस क्रूरता को शर्मनाक बताया लेकिन इसके लिए सीधे तौर पर माफी मांगने से बचते रहे।

1919 के हत्याकांड को उन्होंने एक 'शर्मनाक' हादसा बताया, लेकिन औपचारिक माफी से बचे रहे। जलियांवाला बाग की विजिटर्स बुक में उन्होंने एक संदेश में लिखा, 'ब्रिटिश इतिहास की यह एक शर्मनाक घटना थी और उस वक्त विंस्टन चर्चिल ने भी इसे भयानक हादसा कहा था। हमें नहीं भूलना चाहिए यहां क्या हुआ और हमें सुरक्षित करना है कि ब्रिटेन दुनिया भर में शांतिपूर्वक विरोध का समर्थन करे।'

शहीदी कुआँ

लेकिन आज तक उस हत्याकांड के लिए ब्रिटेन की सरकार ने माफी नहीं मांगी है। अमृतसर में भीषण और शर्मनाक हत्याकांड के पीड़ित के परिजन अभी भी काम

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

कर रहे हैं। लोगों को उम्मीद थी कि कैमरन माफी मांगेंगे। उन्हीं परिवार जनों में एक भीषण बहल जी है, भीषण बहल जी मानते हैं कि अगर कैमरन के स्तर का नेता माफी मांगता है तो इससे कई भारतीय अपने दर्दनाक इतिहास को पीछे छोड़ आगे बढ़ पाएंगे।

कैमरन से पहले महारानी एलिजाबेथ भी अमृतसर आ चुकी हैं। 1997 में उन्होंने मृतकों को श्रद्धांजलि दी, लेकिन उस वक्त उनके पति प्रिंस फिलिप ने कहा कि भारतीयों ने मृतकों की संख्या को बढ़ा–चढ़ा कर बताया है। वहीं, कूटनीतिक तौर पर कैमरन के ऐसा करने से ब्रिटिश शासन के अधीन रहे बाकी देश अपने देश में ब्रिटिश क्रूरता के लिए माफी की उम्मीद कर सकते हैं।

ब्रिटिश प्रधानमंत्री डेविड कैमरून, जलियांवाला बाग, अमृतसर

वर्तमान समय में वैश्विक स्तर पर हुई घटनाओं के क्रम में जैसे की जर्मनी के चांसलर विली ब्रैट ने 1970 में वर्साय में घुटनों के बल झुककर पोलैंड के यहूदियों से नरसंहार के लिए माफी मांगी थी, पुनः कनाडा के प्रधानमंत्री जस्टिन ट्रूडो ने वर्ष 2016 में ऐसा ही किया जब उन्होंने अपने देश के अधिकारियों द्वारा एक शताब्दी पूर्व हुए घटना "कमागाटामारू" पर भारतीय उत्प्रवासीयों को बेंकुवर में उतरने की अनुमति नहीं दिए जाने और परिणामस्वरुप उनमे से अनेक लोगों की मृत्यु का ग्रास बनने देने के लिए कनाडा की तरफ से माफी मांगी थी, क्या इसी तरह ब्रिटेन के प्रधानमंत्री में इतना ह्रदय व भावना दिखायेंगे की 2019 में घुटनों के बल झुककर एक सदी पहले वहां किये गये अक्षम्य नरसंहार के लिए अपने देशवासियों के तरफ से भारतीयों से क्षमा याचना कर सके क्योंकी डेविड कैमरून वर्ष 2013 में इसे एक ष्शर्मनाकष् हादसा बता रखा है और

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

यह क्षमा याचना तो नही है और न ही 1997 में क्वीन एलिजाबेथ और एडिनबर्ग के ड्यूक द्वारा जालियावाला बाग की औपचारिक और रस्मी यात्रा तथा आगंतुकों के रजिस्टर (Visitors Book) में बिना किसी प्रायश्चित के टिप्पणी के मात्र हस्ताक्षर करना भी इस श्रेणी में नही आता

चूँकि भारत ब्रिटिश साम्राज्य से अपनी स्वतंत्रता की 73 वीं वर्षगांठ (2019) की ओर बढ़ रहा है नए भारत के लिए यह जाँच पड़ताल करना उपयुक्त रहेगा की कौन सी घटनाएँ हमें 1947 के हमारे नए प्रस्थान बिंदु तक ले कर आई और साथ ही उस विरासत को समझना भी की जिसने उस भारत को एक स्वरुप प्रदान करने में हमारी मदद की जिसका हम पुनर्निर्माण करना चाहते

जालियावाला बाग में निष्कपट प्रायश्चित का कदम जैसा की ट्रोड़ो द्वारा कमागाटामारू के मामले में प्रायश्चित के एक महत्वपूर्ण प्रयास का रूप ले सकता है और एक संकल्प साम्राज्य से सबक सिखने के लिए महानगरीय देशों में जिस प्रकार जर्मनी के बच्चों को नाजी की यातना शिविरों में यह वीभत्स वास्तविकता दिखाने के लिए ले जाया जाता है की उनके पूर्वजों ने क्या किया? उसी प्रकार भारत सरकार द्वारा एक वृहद् राष्ट्रीय परियोजना चलायी जानी चाहिए जो औपनिवेशिक अनुभव को देशवासियों के साथ साझा किया जाना चाहिए इसके लिए सर्वप्रथम कोलकाता स्थित विक्टोरिया हाल को देश में ब्रिटिश काल में किये गये अत्याचार को केन्द्रित संग्रहालय के रूप में तब्दील करना चाहिए जिस्मी ब्रिटिश राज का ब्यौरा, अत्याचार, लूट–खसोट एवं शोषण का जिक्र हो

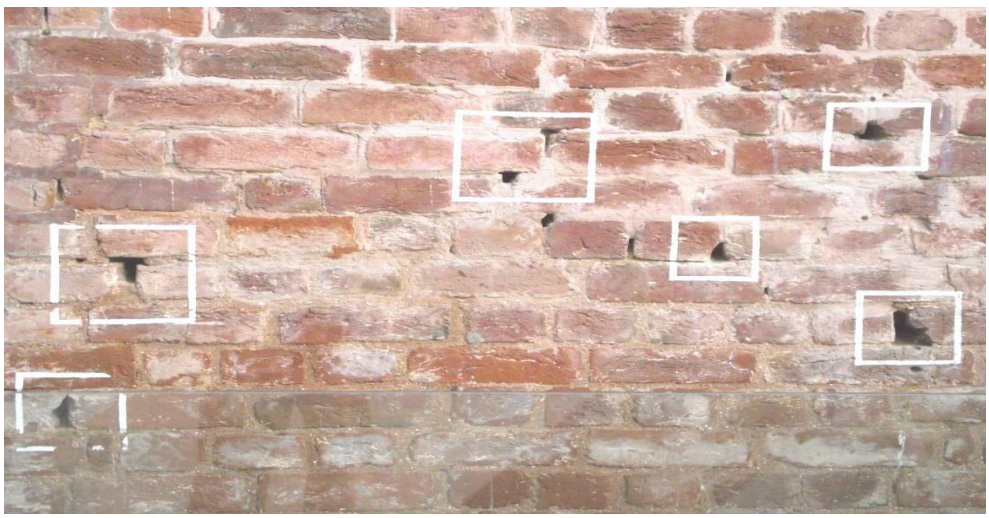

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

सुभद्रा कुमारी चौहान ने ठीक ही लिखा है की –

कोमल बालक मरे यहां गोली खा कर,
कलियां उनके लिए गिराना थोड़ी ला कर।
आशाओं से भरे हृदय भी छिन्न हुए हैं,
अपने प्रिय परिवार देश से भिन्न हुए हैं।
कुछ कलियाँ अधखिली यहां इसलिए चढ़ाना,
कर के उनकी याद अश्रु के ओस बहाना।
तड़प तड़प कर वृद्ध मरे हैं गोली खा कर,
शुष्क पुष्प कुछ वहाँ गिरा देना तुम जा कर।
यह सब करना, किन्तु यहां मत शोर मचाना,
यह है शोक–स्थान बहुत धीरे से आना।

देखें

1. द हिदुस्तान टाइम्स, 13 अप्रैल 1969, पृष्ट 5
2. सुभाष चन्द्र बोस, द इंडियन स्ट्रगल 1920–1942 पृष्ट 39
3. डिसऑर्डर इन्क्वायरी (हंटर) कमिटी रिपोर्ट पृष्ट 162–166
4. वि. शिरोल, इंडिया ओल्ड एंड न्यू पृष्ट 179
5. थामसन एवं गैरेट, राइज एंड फुल्फिल्मेंट ऑफ ब्रिटिश रूल इन इंडिया, पृष्ट 606–611

WRITERS VIEW
An Interdisciplinary, bilingual, bi-annual, a peer review or refereed International Journal
Vol. 3 No. 1&2 APRIL & OCTOBER Year 2018

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

9

विष्णु पुराण में वर्णित ऐतिहासिक राजाओं की वंशावली

सुबोध कुमार मिश्र
शोध छात्र, प्राचीन इतिहास, पुरातत्व एवं संस्कृति विभाग
दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय

वैष्णव धर्म के प्रमुख धर्मग्रन्थों में विष्णु पुराण का अप्रतिम स्थान है। अन्य पुराणों के वर्ण्य विषय की ही भाँति इसमें भी सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मनवन्तर एवं वंशानुचरित आदि का वर्णन है। इस पुराण में ऐतिहासिक दृष्टि का क्रमिक विकास परिलक्षित होने लगता है। इस ऐतिहासिक दृष्टि के अन्तर्गत हम विष्णु पुराण में वर्णित ऐतिहासिक राजाओं की वंशावली का उल्लेख कर सकते हैं। प्राचीनता के क्रम में देखा जाय तो 18 पुराणों में ब्रह्म पुराण व पद्म पुराण के पश्चात विष्णु पुराण आता है।[1] चूँकि विष्णु पुराण मूलतः एक वैष्णव महिमा ग्रन्थ है, अतः इसमें सर्वत्र श्री नारायण विष्णु का ही वर्णन व यशोगान है। इसके साथ ही इसमें कुछ वंशों की वंशावलियों का भी उल्लेख है। इस वंशानुचरित में ऐतिहासिक युगीन राजाओं की भी वंशावली मिलती है।

ऐतिहासिक राजाओं की वंशावली का प्रारम्भ मगध में शासन करने वाले बृहद्रथ वंशीय राजा जरासंघ से होती है, जिसका उल्लेख हमें महाभारत से भी प्राप्त होता है। जरासंघ का पुत्र सहदेव हुआ, सहदेव से सेनापति नामक पुत्र उत्पन्न हुआ तथा सेनापति से श्रुतश्रृवा नामक पुत्र हुआ। तत्पश्चात् पिता पुत्रानुक्रम के अनुसार क्रमशः अयुतायु, निरमित्र, सुनेत्र, ब्रह्मकर्मा, सेनजित, श्रुतंजय, विप्र, सुचि, क्षेम्य, सुव्रत, धर्म, सुश्रुता, सुबल, सुनीत, सत्यजित, विश्वजित और विश्वजित से रिपुंजय का जन्म हुआ। इस प्रकार से ये बृहद्रथ वंशीय राजाओं ने कुल 1000 (एक हजार वर्ष तक मगध में शासन किया।[2]

बृहद्रथ वंश के अंतिम सम्राट रिपुंजय का वध उसी के एक मंत्री, जिसका नाम सुनिक था, ने कर के अपने पुत्र प्रद्योत का राज्याभिषेक किया।[3] इस प्रकार मगध पर सर्वथा एक नये वंश ने शासन करना प्रारम्भ किया जो ''प्रद्योत वंश' के नाम से विख्यात हुआ। प्रद्योत के पश्चात् उसका पुत्र बलाक तथा बलाक के बाद बलाक का पुत्र विशाखयूप शासक हुआ। इसके बाद क्रमशः जनक, नन्दीवर्द्धन एवं नन्दी शासक हुए। उपरोक्त 5 प्रद्योत वंशीय शासकों ने कुल एक सौ अड़तालीस वर्ष तक मगध में शासन किया।[4] तदुपरान्त इस वंश का विनाश हो गया।

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

नन्दी का पुत्र शिशुनाग हुआ। इसने एक नये राजवंश की स्थापना की जो इसी के नाम पर ''शिशुनाग वंश'' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस वंश में शिशुनाग के बाद क्रमशः काकवर्ण, क्षेमधर्मा, क्षतौज, बिम्बिसार, अजातशत्रु, अर्भक, उदयन, नन्दिवर्द्धन एवं महानन्दी राजा हुए जिनमें से प्रत्येक अपने पूर्ववर्ती का पुत्र था। इनमें से बिम्बिसार व अजातशत्रु का बौद्ध साहित्यों में भी विवरण मिलता है। ये दोनों ही बौद्ध धर्म के संस्थापक महात्मा बुद्ध के समकालीन थे। इनके शासनकाल में ही मगध साम्राज्य का विस्तार आरम्भ हुआ। उपरोक्त समस्त शिशुनागवंशीय राजाओं का संयुक्त शासनकाल तीन सौ बासठ वर्ष था।[5]

महानन्दी का विवाह किसी शूद्रा स्त्री से हुआ और उसी शूद्रा के गर्भ से अत्यन्त लोभी व बलवान महापद्मनन्द का जन्म हुआ[6] जिसने 'नन्द वंश' की नींव डाली। महापद्मनन्द परशुराम के समान समस्त क्षत्रियों का नाश करने वाला सर्वक्षत्रांतक था। उल्लेख मिलता है कि महापद्मनन्द के बाद शूद्रजातीय राजा राज्य करेंगे। यथा–

''ततः प्रभृति शूद्रा भूपाला भविष्यन्ति।''[7]

महापद्मनन्द के 8 पुत्र हुए जिन्होंने उसके अनन्तर एक सौ वर्षों तक शासन किया।[8] इन 8 पुत्रों में धननन्द अंतिम था जिसकी हत्या चन्द्रगुप्त मौर्य के हाथों कौटिल्य नामक ब्राह्मण ने करवाई और चन्द्रगुप्त मौर्य को मगध के सिंहासन पर राज्याभिषिक्त किया। इस प्रकार मगध में एक नये राजवंश की नींव पड़ी जो इतिहास में 'मौर्य वंश' के नाम से विख्यात हुआ। इस वंश का प्रथम शासक चन्द्रगुप्त मौर्य हुआ। इसके बाद क्रमशः पिता–पुत्र अनुक्रम में बिन्दुसार, अशोकवर्द्धन, सुयशा, दशरथ, संयुत, शालिशूक, सोमशर्मा, शतधन्वा तथा ब्रहद्रथ शासक हुए। इस प्रकार ये 10 मार्यवंशीय राजाओं ने एक सौ तिहत्तर वर्षों तक मगध पर शासन किया।[9]

मौर्यों के अनन्तर शुंग वंश की स्थापना हुई जिसका संस्थापक पुष्यमित्र शुंग था। पुष्यमित्र शुंग मौर्य वंश के अंतिम शासक बृहद्रथ का सेनापति था, जिसकी हत्या कर वह राजा बना।[10] पुष्यमित्र के बाद उसका पुत्र अग्निमित्र शासक हुआ। तत्पश्चात सुज्येष्ठ, वसुमित्र, पुलिन्दक, घोषवसु, वज्रमित्र, भागवत और देवभूति राजा हुए। इस प्रकार ये सभी शुंग नरेश सम्मिलित रूप से एक सौ बारह वर्ष तक मगध पर शासन करते रहे।[11]

शुंगों के बाद कण्व वंशी राजाओं का काल आया। शुंगवंशीय अंतिम शासक देवभूति को वसुदेव नामक उसके ही एक मंत्री ने मारकर कण्ववंश की नींव डाली जिसमें वसुदेव के बाद भूमित्र, भूमित्रका, नारायण तथा सुशर्मा आदि चार राजा हुए। इन कण्ववंशीय चारों राजाओं ने कुल पैतालीस वर्षों तक शासन किया।[12]

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

इसी प्रकार कण्ववंशीय अंतिम शासक सुशर्मा को उसके ही एक आन्ध्रजातीय सेवक बलिपुच्छक ने मार कर स्वयं राज्य भोगने लगा।[13] बलिपुच्छक के बाद उसका भाई कृष्ण राजा बना। तत्पश्चात 30 आन्ध्रभृत्य राजाओं की एक विस्तृत श्रृंखला ने शासन किया जिसमें शान्तकर्णी, पुलिन्दसेन, शातकर्णी, शिवस्वाति, गोतमीपुत्र, शिवस्कन्ध, यशश्री आदि विशेष उल्लेखनीय है। इस प्रकार ये 30 आन्ध्रभृत्य राजाओं ने चार सौ छप्पन वर्षों तक शासन किया।[14]

आन्ध्रभृत्य राजाओं के बाद 7 आभीर और 10 गर्दभिल राजाओं ने शासन किया।[15] तत्पश्चात् 16 शक राजा हुए।16 इसके बाद 8 यवन, 14 तुर्क, 13 मुरूण्ड और 11 मौनजातीय राजाओं ने एक हजार नब्बे वर्ष तक शासन किया।[17]

आगे वर्णित है कि मौनजातीय राजाओं के बाद कैंकिल नामक यवन जातीय राजा राज्य करेंगे। इसके बाद तीन वाहत्लीक राजाओं ने राज्य किया तथा उनके पश्चात 7 आन्ध्र मांडलिक राजाओं ने राज किया। प्रयाग और गया में गुप्तों ने राज किया।[18] कलिंग, महिष, महेन्द्र व भौम राज्यों में गुह वंशी शासकों ने राज किया। सौराष्ट्र, अवन्ति, आभीर आदि पर शूद्रों का आधिपत्य हो गया।

उपरोक्त संपूर्ण राजा भूमण्डल पर एक साथ शासक हुए। इनके आचरणों व व्यवहारों के बारे में भी हमें सूचना मिलती है कि उल्लिखित सभी राजा अत्यन्त क्रोधी, अधर्मी, मिथ्या भाषण करने वाले, स्त्री–बालक व गायों की हत्या करने वाले तथा आर्य विपरीत आचरण करने वाले थे, तथापि यह वर्णन वर्तमान ज्ञान के आलोक में अनैतिहासिक एवं मिथ्या है।[19]

विष्णु पुराण में कलियुग में भविष्य में होने वाले भगवान विष्णु के 10वें अवतार कल्कि का भी वर्णन है। इनके बारे में विवरण मिलता है कि कलियुग के अपने चरम पर पहुँच जाने पर, जब सत्य, धर्म का ह्रास होने लगेगा तक भगवान नारायण सम्भल ग्राम के निवासी ब्राह्मण विष्णुयश के घर अवतार लेंगे और समस्त म्लेच्छों, दुराचारियों और दस्युओं का संहार करके राजा बनेंगे और अपने प्रजा की रक्षा करेंगे।[20]

इसके बाद वो समय आयेगा जब चन्द्रमा, सूर्य और वृहस्पति आदि पुष्यनक्षत्र में स्थिर होकर एक राशि पर आ जायेंगे तभी कलियुग का समापन हो जायेगा और सतयुग का प्रादुर्भाव होगा। यथा–

''यदा चन्द्रश्च सूर्यश्च तथा तिष्योबृहस्पतिः
एकराशौ समेष्यन्ति तदा भवति वै कृतम्''।।[21]

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

सन्दर्भ

1. विष्णु पुराण, ब्राह्मं पाद्मं वैष्णवं च शैवं भावावतं तथा।
तथान्यन्नारदीयं च मार्कण्डयें च सप्तम्।।
3/6/21
2. वही, इत्येते बार्हद्रथा भूपतयो वर्षसहस्तमेक भविष्यन्ति।
4–23–13
3. वही, 4–24–2
4. वही, 4–24–8
5. वही, 4–24–19
6. वही, 4–24–20
7. वही, ततः प्रभृति शूद्राभूपाला भविष्यन्ति।
4–24–21
8. वही, 4–24–24
9. वही 4–24–29–32
10. वही, पुष्यमित्रस्सेनापतिस्स्वामिनं हत्वा राज्यं करिष्यति
4–24–34
11. वही, इत्येते शुंगां द्वादशोत्तरम् वर्षशतं पृथिवी भोक्षयन्ति।
4–24–37।
12. वही, 4–24–42
13. वही, 4–24–43
14. वही, 4–24–50
15. वही, 4–24–51
16. वही, 4–24–52
17. वही, 4–24–53
18. वही, 4–24–63
19. वही, 4–24–71–72
20. वही, 4–24–98
21. वही, 4–24–102

WRITERS VIEW
An Interdisciplinary, bilingual, bi-annual, a peer review or refereed International Journal
Vol. 3 No. 1&2 APRIL & OCTOBER Year 2018

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

10

ब्रिटिश आगमन के आरम्भिक काल में भारत की राजनीतिक एवं आर्थिक स्थिति

डॉ. कुमारी प्रियंका
अतिथि प्रवक्ता, जगदम कॉलेज, छपरा, बिहार

मुगल साम्राज्य का विघटन के परिणामस्वरूप बहुत से स्वतन्त्र और अर्द्धस्वतन्त्र राज्यों और रियासतों ने ले लिया। उनमें से मुख्य–मुख्य राज्य पूर्व में बंगाल (जिसमें बिहार, झारखंड, उड़ीसा और बांग्लादेश भी सम्मिलित था) तथा मध्य–उत्तर में अवध, दक्षिण में हैदराबाद, कर्नाटक और मैसूर, मध्य और पश्चिम में मराठा साम्राज्य और उत्तर पश्चिम में राजपूत रियासतें थी। भारतीय राज्यों के शासकों में तथा राज्यों के अंदर उत्तराधिकार और शक्ति के प्रतिद्वन्द्वी दावेदारों में लगातार संघर्ष तथा युद्ध होते रहते थे।[1] अंग्रेजों ने धन वसूल करने तथा अपने लिए राजनीतिक तथा आर्थिक रियासतें प्राप्त करने एवं अपनी राजनीतिक और सैनिक शक्ति का निर्माण करने के लिए उनकी फूट तथा संघर्षों का पूरा–पूरा लाभ उठाया। उन्होंने एक को दूसरे विरूद्ध उकसाया और इस प्रकार विदेशी आक्रमणकारी के विरूद्ध उन्हें संगठित होने से रोका। इस प्रकार अंग्रेज भारतीय राज्यों को एक–एक करके अपने अधीन करने और हड़पने में सफल हो गये।[2] देश के राजनीतिक विखण्डन के कारण उन्होनें कुछ ही शताब्दियों की अवधि में भारत पर केवल विजय ही प्राप्त नहीं की बल्कि इसी बीच इसके गम्भीर परिणाम भी हुए है।

राजनीतिक विखण्डन का अर्थ अनिवार्य रूप में आर्थिक विखण्डन और विघटन होता है। राजनीतिक सर्वोच्चता के लिए लगातार संघर्ष ने आर्थिक क्रियता को विघटित कर दिया। लूट–खसोट की नवीन एजेन्सियां उत्पन्न हो गयी। कई सिद्धान्तहीन दुःसाहसी भू–राजस्व को जबर्दस्ती वसूल करने लगे। इसने कृषि को बुरी तरह प्रभावित किया। सड़के असुरक्षित थी और कतिपय शासक, सरदार और अन्य दावेदार अपने नियन्त्रण के क्षेत्रों में से गुजरने वाले व्यापारियों से सीमा शुल्क और अन्य कर वसूल करने लगे।[3] राजनीतिक विप्लव के परिणामस्वरूप लोग निर्धन हो गये और उनकी वस्तुओं को खरीदने की क्षमता कम हो गयी। इस सब कारणों से व्यापार और दस्तकारी (हस्तकला उद्योगों) में बाधा पड़ी।

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

व्यापार तथा साहूकारी से कमाए गए धन को जबरजस्ती ले लिया गया था। इसे फिजूल खर्च किया गया। उस समय व्याप्त राजनीतिक तथा प्रशासनिक विप्लव में यह स्वाभाविक था कि साहुकार लोग धन को कृषि, हस्तशिल्प तथा व्यापार के विकास के लिए प्रयोग करने की बजाय छिपा कर रखें। इस प्रकार आरम्भिक पूँजी संचय, जो बड़े पैमाने के निर्माणी उद्योगों के विकास की अनिवार्य पूर्व आवश्यकता है, खींच लिया गया।[4]

अनिश्चितता के इस काल में सामन्ती उच्च वर्ग पहले से भी अधिक खर्चीला जीवन व्यतीत करने लगे। आर्थिक विकास के बजाय इन वर्गों की तर्कहीन विलासिता ने देश के संसाधनों को निगल लिया। उस समय की अशान्त परिस्थितियों में शासकों ने भारत में पारस्परिक तौर पर विकसित कृषि, हस्तशिल्पों और व्यापार के सम्वर्द्धन के लिए बहुत कम समय और साधन जुटाए। वे आर्थिक व्यवसायों में लगी हुई अपनी शान्तमयी प्रजा को सुरक्षा तक भी प्रदान नहीं कर सके।

आत्म–निर्भर ग्राम समुदाय सामाजिक संरचना के आधार थे। उनका आर्थिक जीवन इस प्रकार से संरचित था कि बाहरी दुनिया पर वे कम–से–कम आश्रित थे। भू–राजस्व (लगान) अदा करने का दायित्व ही राज्य से उनका मुख्य सम्पर्क था।

गाँव में लोगों के तीन वर्ग थे– कृषक, हस्तशिल्पी तथा उनके आश्रित। भूमि कृषक समुदाय के पास होती। इस समुदाय के परिवारों में से प्रत्येक का गाँव में अपना घर और कृषि–भूमि का अपना हिस्सा होता था। आज कल की तरह भूमि परिवारों की निजी सम्पत्ति नहीं समझी जाती थी परन्तु इसे उपयोग करने का उनका अधिकार सुरक्षित था। वास्तव में उस समय भूमि स्वतन्त्र खरीद या बिक्री की वस्तु नहीं थीं अर्थात् यह एक जिस या पण्य नहीं थी। भूमि का एक भाग ग्रामीण समुदाय के मुफ्त उपयोग के लिए सामूहिक रूप में रखा जाता था जिसका उपयोग पशु चराने और ईधन की लकड़ी इकठ्ठी करने के लिए किया जाता था। फालतू भूमि प्रायः कृषक समुदाय से सम्बन्ध न रखने वाले व्यक्तियों को खेती के लिए दे दी जाती थी। फसल वर्ष के अन्त में उन्हें इस भूमि से बेदखल किया जा सकता था। परन्तु वर्तमान की तुलना में उस समय जनसंख्या कम थी और भूमि काफी थी, इसलिए आम तौर पर ऐसा नही किया जाता था। प्रत्येक गाँव में दस्तकार, बढ़ई, जुलाहे, कुम्हार, तेली, मोची (जूता साज) सुनार और अन्य लोग होते थे।[5]

इसके अतिरिक्त कताई और बुनाई प्रत्येक परिवार में गौण क्रिया के रूप में अपनाई जाती थीं। इस प्रकार वहाँ कृषि तथा दस्तकारी का समन्वय किया गया था। गाँव की सेवाओं (जैसे कपड़ा, मिट्टी के बर्तन, कृषि औजार, घरेलू वस्तुएँ, तेल, साधारण जेवर आदि) से सम्बधिन्त आवश्यकताएँ दस्तकार पूरी करते थे। आर्थिक और सामाजिक

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

सेवाएँ गाँव कर्मचारियों–मुनीम, पुरोहित, नाई, धोबी आदि द्वारा प्रदान की जाती थीं। क्योंकि गाँव में अधिकांश लेन–देन जिंस में होता था, इसलिए दस्तकारों और कर्मचारियों को भी अदायगी स्थापित रिवाजों के अनुसार, सामान्यतः फसल के समय जिंस में ही की जाती थी। प्रायः अपने उद्योग के लिए क्षय भूमि के लाट भी दिए जाते थे।[6]

भू–राजस्व के रूप में दिये जाने वाले अंश को छोड़कर, ग्राम का उत्पादन मुख्यतः उपभोग के लिए होता था न कि बिक्री के लिए। यह उत्पादन करने वाले परिवार तथा शेष गाँव की जरूरी आवश्यकताओं के लिए होता था न कि खुले बाजार के लिए। दूसरे शब्दों में, अधिकांश उत्पादन जिंसों का न होकर उपभोग मूल्यों का था। कृषि–समुदाय को उच्चकोटि की आत्म–निर्भरता प्राप्त थी।

देश के अधिकांश क्षेत्रों में जाति–प्रथा सामाजिक तथा व्यावसायिक संगठन का आधार थी। इसमें श्रम का परिवर्तनीय विभाजन सन्निहित था। व्यक्ति का व्यवसाय उसकी जाति द्वारा निर्धारित होता था और क्योंकि जाति अपरिवर्तनीय थी, इसीलिए व्यवसाय भी बदला नहीं जा सकता था। जाति–प्रथा की दृढ़ता ने भी उन अन्य तत्त्वों को भी बदल दिया जो स्थैतिक ग्रामीण अर्थव्यवस्था और समाज की ओर प्रवृत हुए। ग्रामीण समाज स्वायत्त था। ग्राम सभा या पंचायत गाँव के मामलों का प्रबन्ध करती थी। यह सामान्य हितों पर विचार करने, झगड़ों का निपटारा करने तथा न्याय दिलाने के लिए समय–समय पर मिलती रहती थी। शासक तथा उसके मनोनीत का मुख्य कार्य केवल भू–राजस्व प्राप्त करना था। जब तक देय राशि मिलती रही, उन्होनें गाँव के मामले में कोई हस्तक्षेप नहीं किया। गाँव का मुखिया इसका नेता होता था। यह सुनिश्चित करने के लिए कि गाँव को उचित राशि ही देनी पड़े, गाँव का मुखिया ही राजस्व निर्धारकों के साथ वाद–विवाद करता था। वह लगान की राशि को इकठ्ठा करने तथा उसे राज्य या इसके द्वारा मनोनीत व्यक्तियों को देने के लिए जिम्मेदार था। अपने आंतरिक प्रबन्ध में गाँव एक प्रकार का एक लघु गण्तन्त्र था।[7]

ग्रामीण समाज की स्वावलम्बी तथा स्वायत्त सरंचना ने जीवन तथा राजनीतिक अशान्ति के समय भी सामाजिक स्थिरता को सुरक्षित रखा। विभिन्न राज्य टूटे, पुनः बने या उसका विस्तार हुआ, राजवंश निरन्तर बदलते रहे। परन्तु ग्रामीण समुदाय अपनी दिनचर्या ऐसे चलाते रहे जैसे कि कुछ हुआ ही नहीं। ऐसा लगता था कि उन पर समय ने कोई परिवर्तन नहीं किया सिवाय इसके कि पुरानी पीढ़ी के विदा होने पर नयी पीढ़ी ने उसकी जगह ले ली। व्यक्ति बदल गए परन्तु सामाजिक आर्थिक व्यवस्था कभी भी नहीं बदली। यदि कभी आगे बढ़ती हुई सेनाओं या वास्तविक युद्ध के कारण ग्राम समुदायों को अपने पैतृक गृहों को छोड़कर भागना भी पड़ा तो युद्ध के समाप्त होने पर वह वहाँ

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

वापस आ गए और उन्होंने पिछले जीवन और समाज की पुर्नरचना की। जबकि कुछ भी टिकता दिखाई नहीं देता था, वे टिके रहे।[8]

ग्रामीण समाज का यह अलगाव और स्थिरता कोई शुद्ध वरदान नहीं था। इसका एक धुँधला पक्ष भी था। ग्रामों की आत्म–निर्भरता शहरी दस्तकारियों के लिए विस्तृत बाजार की रचना में एक ठोस परन्तु एक अदृश्य रूकावट थी। इसने अर्थव्यवस्था के तत्कालीन अधिकतम गत्यात्मक क्षेत्रक की उन्नति को रोके रखा। गाँव में प्रत्येक दस्तकार को उत्पादन प्रक्रिया में समाहित सभी संक्रियाओं को स्वयं करना पड़ता था। सीमित बाजार होने के कारण विशेषीकरण का अभाव था जिसके कारण श्रम उत्पादित वस्तुऐं कम हो गई और कौशल में सुधार की कोई सम्भावना नहीं थी। निर्णीत तथा जाति–पाँति में बंधी संरचना के कारण श्रम की थोड़ी–सी भी समानान्तर, ऊर्ध्वाधर या स्थानिक गतिशीलता सम्भव नही थी। गाँव की तंग सीमाओं में मानव मेधा अवरूद्ध हो गयी तथा साहस एवं उद्यम की भावना दबा दी गई।

संदर्भ ग्रंथ-सूची :-

1. द इंडियन एंटिक्चेरी, खंड 36
2. एच.के. शेरवानी, 'द बहमनीज ऑफ द डेक्कन'
3. एम.जी. रानाडे, 'द राइज ऑफ मराठा पावर'; जान ब्रिग्स, 'हिस्टरी ऑफ द राइज ऑफ द मोहैमडन पावर इन इंडिया, खंड 3 (कलकत्ता, 1910)
4. यदुनाथ सरकार, 'हिस्टरी ऑफ औरंगजेब', खंड–2
5. 'तुजुक–ए–जहांगीरी' खंड–2,ए
6. तारीखे मुहम्मद शाही, जी.एस. सरदेसाई–द्वारा 'न्यू हिस्टरी ऑफ द मराठाज' के खंड 2
7. बलाधुरी, 'फुतुहल बुलदां।
8. इलियट और बीम्स द्वारा लिखित 'मेम्वायर्स ऑन द हिस्टरी, फोकलोर एंड डिस्ट्रिब्यूशन ऑफ रेसेज ऑफ नार्थ–वेस्टर्न प्रार्विसेज', खंड 2, 1596

WRITERS VIEW
An Interdisciplinary, bilingual, bi-annual, a peer review or refereed International Journal
Vol. 3 No. 1&2 APRIL & OCTOBER Year 2018

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

11

भारत का इजरायल के साथ संबंध और ईरान

डॉ. उपेन्द्र कुमार सिंह
स्नातकोत्तर राजनीति विज्ञान विभाग
जयप्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार

भारत का ईरान के साथ फलता–फूलता संबंध इजरायल के साथ संबंध में एक बाधा के रूप में है। वस्तुतः अमरीका के रैण्डनिगम ने इसे तेहरान नयी दिल्ली धूरी का नाम दिया है, और उसके अनुसार यह दुनिया के देश में से एक रक्षा संबंधित घटना विकास है। जिस पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है। भारत एवं ईरान का धनिष्ट संबंध मध्यपूर्व के राजनैतिक गतिशीलता पर जो प्रभाव डालेगा वह इस क्षेत्र में अमरीकी हितों के अनुकूल नहीं हो सकता है।

हालांकि भारत–ईरान धूरी की अवधरणा बढ़ा–चढ़ाकर पेश किया गया है। लेकिन पिछले एक दशक में सचमुच में भारत–ईरान संबंधों में नयी ऊँचाई आयी है। संबंधों के इस गर्माहट का प्रदर्शन वर्ष 2003 के गणतंत्र दिवस के पैरेड के अवसर पर ईरान के प्रधानमंत्री को अतिथि के रूप में आमंत्रित करने के रूप दृष्टिगोचर होता है।

इन संबंधों की गर्माहट के बहुत से कारक हैं। अन्तराष्ट्रीय व्यवस्था की एक ध्रुवीय प्राकृति पाकिस्तान का इस्लामी दुनियॉ में बढ़ते प्रभाव की काट प्रस्तुत करना, तथा मध्यएशिया का बढ़ता भू–राजनैतिक प्रभाव तथा आर्थिक एवं व्यपारिक संबंधों को मजबूत बनाना आदि ऐसी परिस्थितियॉ है। जिसने शीतयुद्ध के बाद के दौर में भारत और ईरान के बीच एक दूसरे से जुड़े रहे हैं।[1]

दूसरी ओर इजरायल का ईरान के साथ गहरी शत्रुता है। लेबनान स्थित इजरायल विरोधी हेजबुल्लाह समूह का ईरान पक्का समर्थक है। ऐसा इजरायल का मानना है। इजरायल ईरान को उन फिलीस्तीन समूहों का भी समर्थक मानता है जो इजरायली नागरिक के खिलाफ आतंकी कार्रवाई में लगा रहता है। फिलीस्तीन मुद्दे पर ईरानी नीति भारत–इजरायल के बीच संबंधों के विकास में एक बड़ी बाधा के रूप में सामने आ सकती है, क्योंकि ईरान न सिर्फ फिलस्तीनियों के संधर्ष का समर्थक है बल्कि वह इजारयल द्वारा हड़पे गये जमीन को मुक्त कराने और फिलस्तीनियों के अपने देश की माँग का भी

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

समर्थन करता है। वह इजरायल को मान्यता नहीं देता है तथा वह इजरायली राज्य के खात्मे की बात करता है।

इजरायल, अमेरिका के साथ मिलकर ईरान को अपने तथा कथित परमाणु हथियार कार्यक्रम पर रोक लगाने के लिए दबाव डालता रहा है। कुछ ऐसी भी सूचनाएँ है कि ईरान के परमाणु संयंत्रों के खिलाफ इजरायल सैनिक कार्रवाई भी कर सकता है। चूँकि ईरान खुलेआम इजरायल के खत्मे की बात करता है इसलिए परमाणु हथियारयुक्त ईरान को अपने वजूद के लिए खतरा समझता है। हालांकि अमेरिका के नेतृत्व में सद्दाम हुसैन के खात्मे से इजराइल का एक दुश्मन समाप्त हो गया लेकिन इससे ईरान को अपने पड़ोसी देशों में अपना प्रभाव के विस्तार का अवसर मिला है।

ऐसी परिस्थिति में इजरायल, भारत के साथ ईरान के बढ़ते रिश्ते से चिन्तित है। वह इस बात से खसतौर पर चिन्तित है, जब भारत इजरायल से प्राप्त तकनीक की जानकारी ईरान के साथ बाँटता है। इजरायल ने जब नवंबर 2004 में भारत–इजरायल संयुक्त कार्यदल की बैठक मे इरान के हथियार कार्यक्रम और इससे क्षेत्र की स्थिरता या प्रभाव के बारे में इजरायल ने अपनी चिन्ता जतायी। इजरायल चाहता है कि परमाणु हथियार युक्त ईरान के खतरे को भारत स्वीकार करे तथा दक्षिण पश्चिम एशिया के हलचल भरे सुरक्षा परिस्थिति को स्थिर बनाने का प्रयास करें। हालांकि भारत और इजरायल को अपने द्विपक्षीय संबंधों को दूसरे देश के साथ अपने संबंधों से जोड़कर नहीं देखना चाहिए। दोनों को सावधानीपूर्वक इन संबंधों का प्रबंधन करना होगा क्योंकि भारत का मध्यपूर्व के देशों और खासकर ईरान के साथ गहरा संबंध है। इजरायल बारबार भारत का मध्यपूर्व देशों के साथ संबंध के प्रति चिन्तित रहेगा। इससे भारत कितना भी इजरायल के साथ अपने संबंधों को मध्यपूर्व के देशों के साथ द्विपक्षीय संबंधों से अलग रखे।[2]

अमरीका की भूमिका

भारत का इजरायल के साथ संबंध अमेरिका की इच्छा से निर्देशित होगा। हालांकि अमेरिका ने भारत–इजरायल के बीच बढ़ते संबंधों का स्वागत किया है इसको इजरायल के रक्षा निर्यात पर रोक लगने का महत्वपूर्ण अधिकार प्राप्त है। वर्ष 2000 में अमेरिका ने 2 अरब डॉलर के फालकॉन की चीन के हाथों बिक्री पर रोक लगा दी क्योंकि अमेरिका को डर है कि इसका इस्तेमाल ताईबान एवं चीन के साथ युद्ध के समय अमेरिकन युद्धक विमानों के चालाकों (पायलटों) के खिलाफ हो सकता है। हालांकि अमेरिका ने इजरायल से भारत को उच्चतकनीक वाले सैनिक साजोसमान के निर्माता को हरी झंडी दी है लेकिन यह अमेरिकी प्रणाली एवं आर्थिक मदद देने के पक्ष में नहीं हैं

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

अमेरिका ने ऐसे मिसाईल–रोधी प्रणाली भारत के हाथों बेचे जाने का विरोध किया जिसके चलते इस मुद्दे पर भारत–इजरायल वार्ता रोक दी गई लेकिन इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकाता है कि भारत और इजरायल के बीच बढ़ता सुरक्षा संबंध अमेरिका के द्वारा ही पोषित है। इस नीति के पीछे कुछ लोग अमेरिका की एक बड़ी चाल के रूप में देखते हैं। अमेरिका, भारत, इजरायल संबंधों की घनिष्टता के साथ–साथ खुद मिलकर उभरते चीन के खिलाफ एक विरोधी मोर्चा तैयार करना चाहता है क्योंकि चीन आने वाले समय में अमेरिका का प्रतिद्वन्दी हो जायेगा।[3]

भारत एवं इजरायल का संबंध ज्यादा तौर पर रक्षा क्षेत्र में है उससे यह खतरा बना हुआ है कि अगर इस क्षेत्र मे सहयोग में गिरावट आती है तो यह द्विपक्षीय संबंधों को गंभीर क्षति पहुॅचायेगा। यह एक ऐसी दूर की संभावना है कि जब अमेरिका का हथियार बाजार भारत के लिए पूरी तरह खुल जायेगा तो इजरायली बाजार अपना आकर्षण खो देगा। भरत एवं अमरीका ने एक व्यपार समझौते पर हस्ताक्षर किया है जिसके अन्तर्गत अमेरिका उच्च तकनीक के निर्यात से अपना प्रतिबंध हटा लेगा। यह समझौता गैर सैनिक परमाणु उर्जा, आंतरिक्ष, मिसाईल, रक्षा एवं उच्चतकनीक व्यपार के साथ जुड़ा हुआ है।[4]

आतंकवाद के समझ पर विभिन्न मत

भारत और इजरायल के बीच आतंकवाद को परिभाषित करने की समझ में विरोध है। भारत के लिए पाकिस्तान आतंकवाद का मुख्य केन्द्र है जबकि इजरायल के लिए ईरान। इजरायल भारत का पाकिस्तान के प्रति रूख के बारे मे सहानुभूति रख सकता है लेकिन वह नया दुश्मन पैदा करना नहीं चाहता है। पाकिस्तान इजरायल का भविष्य में दोस्त बने इस संभावना को वह कम नहीं करना चाहता है।[5]

दूसरा मुद्दा आतंकवाद से जुझने से जुड़ा हुआ है। हालांकि भारत, इजरायल द्वारा अपने क्षेत्रीय शत्रुओं से परिचालित आतंकवाद से लड़ने के अनुभवों से सीख सकता है लेकिन इजरायल की रणनीति भारत के लिए कितनी महत्वपूर्ण है, यह सोचने की बात है। भारत, इजरायल द्वारा फिलस्तीनियों के खिलाफ की गई कठोर कार्रवाईयों को उचित नहीं समझता है क्योंकि इन कार्रवाईयों से शांति एवं स्थिरता कायम नहीं हुई है। बल्कि इसके चलते अरब मुल्कों में इजरायल के खिलाफ धृणा बढ़ी है। इसलिए बहुत से भारतीय, इजरायल की कार्रवाइयों को एक मानक के रूप में नहीं मानते है।[6]

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

चीन और पाकिस्तान के साथ इजरायल संबंध

भारत को इसकी भी चिन्ता है कि भविष्य में इजरायल, चीन और पाकिस्तान के साथ घनिष्ठा रक्षा संबंध कायम कर सकता है। इसका भारत के रणनीति पर उल्टा प्रभाव पड़ेगा। इजरायल चीन के साथ अपना द्विपक्षीय संबंध फिर से बढ़ाना चाहता है। फॉलकॉन की बिक्री पर अमेरीका द्वारा रोक लगाने से इस प्रयास को बड़ा धक्का लगा था। आतंकवाद विरोधी सहयोग एवं रक्षा व्यपार हीं इजरायल चीन संबंध के मूल में है जैसा कि भारत के साथ है। इजरायल चीन को अपने रक्षा उत्पादों के ही बडे बाजार के रूप में नहीं देखता है बल्कि वह एक ऐसा संयुक्त राष्ट्र संघ जैसे बहुपक्षीय मंचों पर उसकी मदद कर सकता है। हालांकि इजरायल–चीन के संबंधों पर अमेरिका की जासूसी आंखें लगी रहेगी। भारत को इजरायल–चीन के रक्षा संबंधों से उपजने वाली परिस्थितियों के प्रति सावधान रहना होगा क्योंकि चीन का पाकिस्तान के साथ घनिष्ठ संबंध है।[7]

निष्कर्ष

हाल के वर्षों में भारत–इजरायल के द्विपक्षीय संबंधों में मजबूती आयी है। इन दोनों देशों का बहुत से मुद्दों पर एक जैसी राय है। हालांकि इसके केन्द्र में घनिष्ट रक्षा संबंध एवं इस्लामी आतंकवाद ही है। दोनों देश इन संबंधों को विस्तार देने के लिए प्रयासरत है लेकिन जो बाधाऐ है उसके चलते इसकी पूरी क्षमता का दोहन नहीं, हो पा रहा है। दोनों देशों का इन बाधाओं को सावधानीपूर्वक पार करना होगा।[8]

वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति ने इस संबंधों को मजबूत बनाने का अवसर प्रदान किया है। कैसे दोनों देश इस अवसर का उपयोग करना चाहते हैं यह दोनों देशों की राजनैतिक इच्छाशक्ति पर निर्भर करेगा। भारत एवं इजरायल के बीच सांस्कृतिक संबंधों का लंबा इतिहास है। यह बहुत स्वाभाविक है कि दोनों देश एक दूसरे के साथ ज्यादा घनिष्ट संबंध स्थापित करें जिसमें रक्षा सहयोग और आतंकवाद के विरोध के साथ–साथ व्यपार एवं सांस्कृतिक विनिमय के क्षेत्र में भी आगे बढ़े। अगर दोनों देशों के बीच एक जीवंत सहभागिता हो तो दोनों देशों का आपसी लाभ मिल सकता है।[9]

संदर्भ

1. प्रमित पाल चौधरी–इट् इज टाइम टू लुक बियोन्ड अराफात–इजरायल टू इण्डिया, हिन्दुस्तान टाइम्स, सेप्टेम्बर 8, 2003 ऑलसो सी प्रणय शर्मा, टेकर एण्ड ट्रूस फिक्स फॉर शेरोन, दी टेलीग्राफ सेटेम्बर –9, 2003.

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

2. फॉर ए ट्रेनचन्ट क्रीटिक ऑफ दी अरब वर्ल्डस पोलिसीज टु वाईस इण्डिया सी–अब्दुल्लाह अल मदनी–इडो इजरायल साईन अरब हैव नन बट् देज सेल्यूस टू व्लेम, गल्फ न्यूज, सेप्टेम्बर 14, 2003
3. अतुल अनेजा–वेस्ट एशिया वाचिंग शेरोन विजिट, दी हिन्दू, सेप्टेम्बर 8, 2003.
4. इजरायल टाइम वुड नॉट एफेक्ट पैलेस्टीयिन टाइज, नटवर, इण्डियन एक्सप्रेस, जुलाई – 12, 2004.
5. अतुल अनेजा–इण्डिया अर्जेज रियूवल ऑफसीज ऑन अराफात, दी हिन्दू, सेम्टेम्बर 18, 2004.
6. ए ब्रीफ एनालीसिस ऑफ दिस इण्डिया इरान एक्सिस, वाय ए राण्डे कोरपोरेशन्स एनालिस्ट केनबी फाउण्ड इन हेडलाइन्स ओवर दी होराईजन, दी अटलांटिक मन्थली, वेल्यूम – 2002 नं0 –1 (जुलाई–अगस्त, 2003) पी0 – 87.
7. फॉर ए डीटेल्ड एक्सप्लीकेशन ऑफ इन्डोइरान कनवेर्जेन्स इन रीसेन्ट टाईम्स हर्ष वी पन्त इण्डिया एण्ड इरान एन किस्स इन दी मेकिंग एशियन सर्वे वोल्यूम–44, नं0–3 (मई–जुन–2004) पी.पी. 372–377
8. तेल अबीब वरीड एबाउट न्यूज डेलहीज टाईज विद् इराक टाइम्स ऑफ दण्डिया सेप्टेम्बर 11, 2003
9. अतुल अनेजा–यू एस. ओबजेक्ट्स टू सेल ऑफ ऐरो फिजाइल्स टू इण्डिया, दी हिन्दू, सेप्टेम्बर 8, 2003.

WRITERS VIEW
An Interdisciplinary, bilingual, bi-annual, a peer review or refereed International Journal
Vol. 3 No. 1&2 APRIL & OCTOBER Year 2018

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

12

चौरी चौरा की घटना : एक भ्रमित इतिहास

अस्मित शर्मा
जे.आर.एफ. शोध छात्र इतिहास विभाग
दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

हमारे राष्ट्रीय इतिहास का एक लावारिस पन्ना जिसकी विरासत पर किसी का कोई दावा नहीं। महात्मा गांधी ने न सिर्फ इसे चौरी–चौरा का अपराध बताकर किनारा कर लिया बल्कि ये कलंक भी चौरी–चौरा के ही माथे है कि बापू को असहयोग आंदोलन इसी कांड के चलते स्थगित करना पड़ा। ये कथित कलंक ही है जिसके चलते चौरी–चौरा कांड का कभी कोई ठोस विश्लेषण नहीं हुआ। हमारी स्मृतियों में बस ये एक ऐसी वारदात की तरह दर्ज है जिसमें एक थाना फूंक दिया गया, थाने में मौजूद 23 पुलिसवाले जल मरे और तारीख थी 4 फरवरी, 1922। उपेक्षा की इंतेहा देखिए कि बहुत सी स्मृतियों में लंबे समये तक ये वारदात 5 फरवरी की तारीख पर भी दर्ज रही, वो भी तब जबकि इसका मुकदमा गोरखपुर जिला जेल से लेकर इलाहाबाद हाई कोर्ट के आखिरी फैसले तक तकरीबन एक साल तक लगातार चला। बहस और सुनवाई के दौरान लगातार ये बात सामने आती रही कि ये घटना कांग्रेसी वालंटियर्स के असहयोग आंदोलन का नतीजा थी, मगर कांग्रेसी लगातार इसे **गुंडों का कृत्य** बताकर पल्ला झाड़ते रहे। चौरी–चौरा कांड में सेशन जज ने सभी 172 दोषियों को फांसी की सजा सुनाई थी। इलाहाबाद हाई कोर्ट ने काफी रहमदिली दिखाई और 19 मुख्य आरोपियों को ही फांसी की सजा दी, बाकी को कैद। लेकिन चौरी–चौरा थाने में 23 पुलिसवालों की स्मृति में तो पार्क बनाया गया मगर इन शहीदों की याद में लंबे समय तक कोई स्मारक नहीं था जो बाद में राजीव गांधी के कार्यकाल में बन सका। दरअसल 1972 तक तो चौरी–चौरा की घटना को देखने का नजरिया ही नहीं विकसित हो सका था। 50 साल बाद उसे किसी तरह राष्ट्रीय आंदोलन में गोरखपुर का योगदान के नाम पर संलग्नक की तरह शामिल किया गया। लेकिन जब किसी घटना को उसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के साथ देखा जाता है तो बहुत सी और चीजें भी सामने आती हैं। इस निरपेक्ष खुदाई में तमाम मलबा और मवाद भी बाहर आता है। सवाल है कि

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

कहीं इसी मलबे और मवाद से डरकर तो इतिहास के इस अहम अध्याय की उपेक्षा नहीं की जाती।

22 फरवरी 1922 ,**द लीडर** की खबर के अनुसार– "**चौरी चौरा का विद्रोह अंग्रेजों के शासन को अपने तरह का अलग और अविस्मरणीय कांड था।" अखबार कहता है कि – "अंग्रेजों के शासन काल के संपूर्ण इतिहास में गोरखपुर की चौरी चौरा जैसी कोई दूसरी घटना दिखाई नहीं देती।"**

चौरी चौरा की घटना फ्रांस की क्रांति की तरह ही थी। फ्रांस की जनता राजशाही के अत्याचार से उब चुकी थी। तो उसने 14 जुलाई को बास्तील दुर्ग पर कब्जा किया और उसके गवर्नर को मार दिया। उसी प्रकार चौरी चौरा थाना एवं बास्तील का किला का घेराव में भी कुछ समानताएं हैं– जैसे तैयारी सुबह के समय और आक्रमण 2 से 5 के बीच ,दोनों जगह भीड़ विजयी नारे लगाते हुए बढ़ रही थी ,उनके हाथ में झंडे थे ,दोनों जगह गोली चलने के कारण भीड़ भड़की ,फिर भी उत्तेजित भीड़ ने महिलाओं को नहीं मारा।[1]

22 फरवरी 1922 को द लीडर के अनुसार– **चौरी चौरा के किसान विद्रोह फ्रांसीसी क्रांति की शुरुआत जैसा था। अखबार दरोगा का महिमामंडन करते समय यह स्वीकार करना पड़ा कि– चौरी चौरा का विद्रोह तत्कालिक क्रांति थी।**

चौरी चौरा का नाम अभी भी सार्वभौमिक रूप से पूरे भारत में जाना जाता है और इंग्लैंड में भी लोग इससे पर्याप्त परिचित हैं। इस त्रासदी की खबर न केवल आतंक की तरह फैला ,बल्कि भारतीय पुलिस के विभिन्न स्तरों में जानने की उत्सुकता रही और उनमें बहुत ही स्वभाविक आक्रोश दिखा।[2]

विलियम मॉरिस ,संयुक्त प्रांत गवर्नर
पुलिस स्मारक पर फरवरी 1924 में उद्घाटन में दिया गया वक्तव्य।
फाइल संख्या 1483/1935 जनवरी 11 ,1939 का नोट्स एंड ऑर्डर
उत्तर प्रदेश शासकीय अभिलेखागार लखनऊ

चौरी चौरा का नामकरण के बारे में हाई कोर्ट इलाहाबाद के तत्कालीन जज मिस्टर पिगाट ने लिखा है कि–"इसका नामकरण भारतीयों में प्रचलित अनुप्रास अलंकार की वजह से दो गांवों को मिलाकर किया गया था। जिसमें चौरा अधिक महत्वपूर्ण है। जहाँ थाना है दरअसल चौरी और चौरा दो अलग–अलग गांव हैं। दोनों के बीच लगभग 2 मील की दूरी हैं। चौराहा के पास रेलवे स्टेशन और 1857 के विद्रोह के बाद चौरा

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

गांव से सटे थाने की स्थापना हुई थी। रेलवे स्टेशन का नाम चौरी चौरा रखे जाने के बाद चौरा थाने को संयुक्त रूप से चौरी चौरा पुकारा जाने लगा"।[3]

इतिहास के पन्नों में चौरी चौरा जैसे विद्रोह साहसिक कृत्य में किसानों का शौर्य बेमिसाल था। उनकी निम्न समाजिक स्थिति ,उच्च बलिदान को गौरवान्वित करती हैं। संभव है कि उनके गौरवमय इतिहास को ओझल करने के कुचक्र में ही चौरी चौरा विद्रोह को **"गुंडों का कृत्य"** कहा गया हैं।[4] चौरी चौरा विद्रोह की नायक कहीं ना कहीं या किसी रूप में ,किसी युद्ध या किसी मोर्चे पर या पहलवानी कर अपनी योग्यता साबित की थी– जैसे

- भगवान अहीर प्रथम विश्व युद्ध को करीब से देखा था एवं बसरा के युद्ध में भी भाग लिया था। जिसे **डिल स्ट्रक्टर**[5] कहा गया था क्योंकि अहीर स्वयंसेवकों को प्रशिक्षण देते थे।
- रुदली केवट भी अपने भाइयों के साथ बसरा के युद्ध में शामिल थे।
- नजर अली भी रंगून में अंग्रेजो के खिलाफ जन आंदोलन देखा था।
- लाल मोहम्मद, शिकारी, जगन्नाथ यादव, शिवचरण अहीर यह सब पहलवानी करते थे।

शिवपूजन जीरादेई का रहने वाला था उसने भटनी से रेल को जीरादेई तक ले गया। जहाँ कुछ लोगों ने ट्रेन को लूट लिया तो सरकार ने इसके विरुद्ध कठोर कदम उठाते हुए। इसके पूरे गांव को जला डाला था जगन्नाथ यादव के विषय में एक कहावत है वह भटौली का रहने वाला था। वह इतना ताकतवर था कि 100 लोगों को अकेले लाठी से हरा सकता था। चौरी चौरा जन क्रांति के समय कुछ लोगों के जैसे ठगन सिंह ,कुसुमा के कायथ, गोल्वन नाम के घाती ने उसे गोली मारकर हत्या कर उसकी लाष को हरेठा की आग में फेंक दिया था।[6] जगन्नाथ की औरत के सामने जब कुसुमा के कायथ पड़े तो उसने कायथ की मुझे उखाड़ दी। जगन्नाथ यादव के 2 पुत्र थे शीतल यादव एवं जीतन यादव जीतन यादव दरोगा हैं।[7]

मुंडेरा बाजार के बिक्री के विरोध में नजर अली और उसके साथी बाजार के उत्तर ओर दानी–भवानी तालाब के पास एकत्रित हुए। बाजार के मालिक बख्श सिंह को इन लोगों की गतिविधियों के बारे में जानकारी हुई। उन्होंने उन्हें चेतावनी दी कि आप यहां से चले जाइए। स्वयंसेवक तो चले गए परंतु उन्होंने चेतावनी दी कि 4 को हम बाजार को बंद करने आएंगे और उस दिन हमारे लोग अधिक संख्या में होंगे। इस घटना के बाद उसी दिन दोपहर को भगवान अहीर और उसके साथी निजी कार्य के लिए बाजार में गए। बक्ष सिंह उन्हें देखकर संषकित हो गया और उसने दरोगा को सूचित किया। दरोगा वैसे ही अहीर पर चिढ़ा हुआ था। उसका मानना यह था कि जब

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

अहीर सरकारी पेंशन उठाते हैं तो सरकार के विरुद्ध आंदोलन में भाग क्यों लेते हैं। इसके पश्चात दरोगा ने अहीर बौखलाया और बेंत से मारकर लहूलुहान कर दिया। इस कृत्य के पर्याप्त साक्ष्य है–ं उच्च न्यायालय ने दरोगा को अकारण गुस्सा होने एवं स्वयंसेवकों को पीटने का उल्लेख किया हैं। फैसले में साफ लिखा था कि चौरी चौरा का विद्रोह का एक कारण गुप्तेश्वर सिंह के कृत्य को भी माना जाता हैं उसके कृत्य को अन्यायपूर्ण बताया और अगले दिन 2 फरवरी 1922 को चौरा थाने का एकमात्र जिंदा सिपाही सिद्दीकी जो चार फरवरी की घटना में जीवित बच गया था उसके बयान के आधार पर दरोगा अहीर के बीच नाराजगी कुछ हद तक खत्म हो चुकी थी। वे एक दूसरे से संतुष्ट दिखे उच्च न्यायालय का यह कथन बिल्कुल भी सही नहीं है। क्योंकि यदि अहीर संतुष्ट हो गए थे तो उसी दिन शाम को स्वयंसेवकों के दूसरे बैठक में शामिल ना होते।[8]

उस बैठक में यह तय हुआ कि हम सभी एक पत्र के माध्यम से दरोगा से पूछेंगे कि वह स्वयं सेवकों को क्यों पीटता हैं ? अगर वह जेल में डालेगा तो हम सभी एक साथ जेल में जाएंगे कोर्ट ने माना है कि दरोगा का पीटना मनगढ़ंत बात थी स्वयंसेवक थाने पर अहिंसक तरीके से एवं दृढ़ निश्चय से अपनी बात रखने जा रहा चाहते थे। पुलिस की हर कार्यवाही को वह बर्दाश्त करने को तैयार थे। कोई जबरदस्ती भी नहीं करना चाहते थे क्योंकि वे जानते थे कि इतनी संख्या में दरोगा हमें गिरफ्तार नहीं कर सकेगा।[9]

उसी प्रश्न के परिप्रेक्ष्य में स्वयंसेवक बड़ी संख्या में नारा लगाते हुए थाना परिसर के दक्षिण पूर्व कोने से उत्तर दिशा में मोड़ कर आगे बढ़ रही थी। जुलूस का अगला हिस्सा रेलवे क्रॉसिंग तक पहुँच चुका था। इससे सिद्ध होता है कि स्वयंसेवकों को थाने पर आक्रमण करने की कोई योजना नहीं थी। वे लगातार थाना द्वार के आगे शांतिपूर्वक बढ़ रहे थे। जबकि उसके नेता अभी पीछे थे। थाना के सामने लगभग 300 सेवक अभी भी रुके थे। सरदार हरचरण सिंह एवं दरोगा गुप्तेश्वर सिंह थाना परिसर में स्थित कुएं के पास खड़े थे। उन्होंने आगे आकर स्वयं सेवकों को वहां रुकने का कारण पूछा स्वयंसेवकों ने कहा की वे मामले का हल चाहते हैं दरोगा ने पूछा–" कैसा मामला?" इस पर श्याम सुंदर ने ऊंची आवाज में दरोगा से पूछा कि –आपने मुंडेरा बाजार में हमारे भाइयों को क्यों मारा? दरोगा ने कहा– कि भगवान अहिर सिर्फ आपका ही भाई नहीं है। पेंशन प्राप्त करने वाला भूतपूर्व सैनिक होने के नाते मेरा भी भाई है। इस कारण से मैंने उसे मारा। यह सुन ज्यादातर स्वयंसेवक संतुष्ट दिखे और आगे बढ़ गए नजर अली और कुछ अन्य नेता अभी भी थाना गेट पर रुके थे। सरदार हरचरण

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

सिंह के अनुसार– दरोगा 5–6 कदम पीछे हटा और हवा में हाथ उठाकर बोला कि वह जुलूस को गैरकानूनी घोषित कर रहा हैं। दरोगा का हाथ उठाना देख स्वयंसेवकों ने घोषित कर दिया कि दरोगा ने माफी मांग ली है और भी प्रसन्न होकर आगे बढ़ गए।[10]

एक तथ्य और प्रकाश में आता है कि जो 300 के आसपास स्वयंसेवक थाना गेट पर जमा हो गए थे। उनमें से अधिकांश नेतृत्वकारी लोग थे और वे दरोगा से वार्ता के बाद आगे नहीं बढ़ रहे थे। दरोगा को सहमा देख वे आपस में हंसी मजाक करने लगे। कुछ ने तो अपशब्दों का प्रयोग कर दिया। उसके खिलाफ तथा कुछ स्वयंसेवक **"महात्मा गांधी की जय"** बोलते हुए ताली बजाने लगे। इस पर दरोगा चिढ़ गया और तब दरोगा और उसके साथियों ने उन पर लाठियां बरसाने लगी। एक सिपाही ने वालंटियर की गांधी टोपी को पांव से रौंद दिया। गांधी टोपी को रौंदता देख सत्याग्रही आक्रोशित हो गए।[11] स्वयंसेवक एक दूसरे पर गिरते–पड़ते रेल की पटरी पर भागने लगे। कुछ नेताओं ने खतरे की सीटी बजा दी। देखते ही देखते और हिंसक भीड़ हिंसा में तब्दील हो गई और पुलिस की तरफ कंकड़ों की बौछार कर दी। पूर्वी छोर से भी कंकड़ों की बौछार होने लगी। उन पर पुलिस ने पहले लाठीचार्ज किया। फिर दरोगा ने गोली चलाने का आदेश दिया।[12]

जैसा कि असहयोग आंदोलन शुरू होने से पहले ही गांधीजी भारतीय जनमानस में देवता, अलौकिक शक्तियां, चमत्कारी शक्ति वाले व्यक्ति के रूप में स्थापित हो चुके थे। ऐसे में जब सशस्त्र पुलिस बल के उपनिरीक्षक ने अपने जवानों का हवा में गोली चलाने का आदेश दिया। इसमें कोई हताहत नहीं हुआ। इस पर लोगों ने चिल्लाना शुरू कर दिया कि महात्मा गांधी के प्रताप से गोली पानी हो रहा हैं। यह सुनकर भीड़

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

और उत्तेजित हो गई और थाने के चारों ओर से घेरकर कंकड़ों की बौछार तेज कर दी। बाद में जब पुलिस ने उनपर सीधे गोली चलाने लगी। तो लोग मरने लगे।[13]

राममूर्ति की किताब चौरी चौरा 1922 में का संदर्भ ले। तो तुरंत 11 स्वयंसेवकों की लाशें बिछ गई और लगभग 50 अन्य को गोली लगी। इस प्रकार दंगे में कुल 26 स्वयंसेवक मारे गए थे। पुलिस अंधाधुंध गोलियां चला रहे थे। लाल मोहम्मद के गाल पर गोली लगी थी। उसने अपना हाथ उठाकर साथियों को बताया था। इस पर नेतागण और बौखला गए लोगों की समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करें प्रतिज्ञा करके आए थे कि देश के लिए जो भी बलिदान होगा देंगे जब स्वयं सेवकों के धैर्य की सीमा समाप्त हो गई तब नजर अली अब्दुल्ला राम रूप बरई ने चिल्लाकर कहा अब बर्दाश्त के बाहर है हम और जुनून बर्दाश्त नहीं करेंगे।[14]

डॉक्टर अनिल कुमार श्रीवास्तव ने उल्लेख किया है कारतूस खत्म हो जाने के बाद पुलिस वाले कंकड़ ओ की बौछार से खुद को बचाने के लिए थाने में जा छिपे और दरवाजे बंद कर दिए उच्च न्यायालय ने थाने में पर्याप्त गोला बंद होने की बात कही हैं।[15] वही 22 फरवरी 1922 को दलित लीडर में छपी खबर भी उसी ओर संकेत करती है उसके पास पर्याप्त हथियार और गोला–बारूद था लेकिन इसी अखबार ने 12 फरवरी को जो छापा था कि कुछ देर बाद गोलियां रुक रुक कर चलने लगी इससे स्वयंसेवकों के नेताओं ने समझ लिया कि गोलियां खत्म हो गई हैं घटना के बाद थाना परिसर आप प्रयुक्त कारतूस गिरे पड़े थे इससे तो यही कहा जा सकता है कि गोलियां खत्म हो गई थी संत कुल मिलाकर देखा जाए तो पुलिस के पास उपलब्ध समस्त गोला–बारूद इतना पर्याप्त नहीं था कि घंटों प्रहार किया जा सकता।[16]

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

उपर चित्र में पुलिस वालों की जली हुई लाशें – थानेदार गुप्तेश्वर सिंह, उप निरिक्षक सशस्त्र पुलिस बल पृथ्वी पाल सिंह, हेड कांस्टेबल वशीर खां, कपिलदेव सिंह, लखई सिंह, रघुवीर सिंह, विषेशर राम यादव, मुहम्मद अली, हसन खां, गदाबख्श खां, जमा खां, मगरू चौबे, रामबली पाण्डेय, कपिल देव, इन्द्रासन सिंह, रामलखन सिंह, मर्दाना खां, जगदेव सिंह, जगई सिंह, और उस दिन वेतन लेने थाने पर आए **चौकीदार बजीर, घिंसई,जथई व कतवारू** राम की मौत हुई थी

दरअसल इतिहास उपेक्षा की नहीं खंगालने की चीज है। अगर आप उसकी उपेक्षा करते हैं तो वो आपकी उपेक्षा कर देगा। अगर आप उसे नष्ट करेंगे तो वो आपकी आने वाली नस्लों को नष्ट कर देगा। लिहाज चौरी–चौरा भी आज चीख–चीख कर अपने साथ इंसाफ और निरपेक्ष विश्लेषण की मांग कर रहा है। ये विश्लेषण वो तमाम सच सामने लाएगा जो रूढ़िवादी कांग्रेसी पाठ में दबकर रह गए या जिन पर जानबूझ कर पर्दा डाल दिया गया। शायद ये भी साफ हो सके कि दरअसल ये बगावत अंग्रेजों के खिलाफ थी या तत्कालीन व्यवस्था के खिलाफ। उस व्यवस्था के खिलाफ जिसका ढांचा मूलत जमींदारी व्यवस्था पर ही खड़ा था। जिस बाजार में शराबबंदी और विदेशी कपड़ों की बिक्री रोकने के लिए वालंटियर्स का जत्था जा रहा था उस बाजार पर कब्जा इलाके के राजपूत जमींदार का था, जमींदार के ब्राह्मण मुनीम ने थानेदार गुप्तेश्वर सिंह को तीन दिन पहले ही बुलाकर वालंटियर्स की बदमाशियां रोकने की गुजारिश की। इतिहासकार मानते हैं कि गुप्तेश्वर सिंह ने एक फरवरी को भगवान अहीर को लाठियों से पीटा न होता तो शायद 4 फरवरी की भयावह आग लगती ही नहीं। न गुप्तेश्वर सिंह अपने 23 सहयोगियों के साथ मरते न ही भगवान अहीर समेत 19 लोग फांसी पर चढ़ते।

सन्दर्भ सूची

1. फाइल संख्या 1483/1935 जनवरी 11,1939 का नोट्स एंड आर्डर, उ.प्र. शासकीय अभिलेखागार, लखनऊ
2. श्रीवास्तव, डॉ. अनिल कुमार : चौरी चौरा का स्वातंत्र्य समर, पृष्ट 11
3. जैन एम. एस. : आधुनिक भारत का इतिहास, वायली इस्टर्न लिमिटेड
4. लाल सुन्दर, भारत में अंग्रेजी राज द्वितीय खंड
5. सिंह अयोध्या, भारत में मुक्ति संग्राम
6. द लीडर
7. जजमेंट ऑफ हाईकोर्ट पैरा 28
8. विद्रोही एस. आर.: दलित दस्तावेज
9. एविडेंस ऑफ प्रासिक्युशन, अवधू तिवारी

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

10. आज, फरवरी 2, 1922 और अभ्युदय, फरवरी 11
11. स्वतंत्रता संग्राम में गोरखपुर देवरिया का योगदान 1972, सूचना विभाग उ.प्र.
12. जजमेंट ऑफ हाईकोर्ट
13. राममूर्ति चौरी चौरा 1922 से 1982
14. वही. राममूर्ति चौरी चौरा
15. वही
16. पूर्वोक्त

WRITERS VIEW
An Interdisciplinary, bilingual, bi-annual, a peer review or refereed International Journal
Vol. 3 No. 1&2 APRIL & OCTOBER Year 2018

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

13

भगत सिंह का मुकदमा एवं उनके गवाह

पंकज सिंह
शोध छात्र इतिहास विभाग
दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

20वीं सदी भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में मुख्यतः गांधीवाद से ओत–प्रोत कार्यक्रमों एवं क्रान्तिकारी गतिविधियों के लिए विशेष रूप से जाना जाता है। भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के क्रान्तिकारी युवा राष्ट्रभक्त अपने लक्ष्य में गांधीवाद से अलग नहीं थे लेकिन लक्ष्यप्राप्ति हेतु इनके द्वारा उठाये गये कदमों में आमूल चूल भिन्नता थी। एक तरफ जहाँ गांधीवादी विचारधारा ने अहिंसात्मक कार्यक्रमों में पूर्ण विश्वास दिलाने का कार्य किया तो वहीं क्रान्तिकारियों ने जरूरत पड़ने पर हिंसा से परहेज नहीं किया।

इसी क्रान्तिकारी दल में भगत सिंह नामक राष्ट्रभक्त ने अपनी विचारधारा, काम करने के ढंग तथा विशेष नजरिया देकर इस क्रान्तिकारिता को न सिर्फ एक नवोन्मोषिता प्रदान की बल्कि भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन को एक नए मोड़ बिन्दू (Turning Point) पर लाकर खड़ा कर दिया।

अविभाजित भारत के पंजाब राज्य में जन्म लेने वाले भगत सिंह अपने बाल्यकाल से ही स्थानीय आन्दोलन में भाग लेते रहे चाहे वह जालियाँवाला काण्ड के बाद हुए विरोध की बात हो या फिर गांधी जी का असहयोग आन्दोलन। लेकिन एक समय ऐसा आया कि सरदार भगत सिंह को अहिंसात्मक गांधीवादी तरीके से मोहभंग हो गया तथा वे नौजवान भारत सभा व हिन्दूस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन के सक्रिय क्रान्तिकारी सदस्य बने। इस दौरान उन्होंने विभिन्न क्रान्तिकारी गतिविधियों में साथियों संग भाग लिया एवं साण्डर्स जैसे अत्याचारी पुलिस अधिकारियों का वध भी किया। 8 अप्रैल 1929 को केन्द्रीय असेम्बली में अपने साथी बटुकेश्वर दत्त के साथ मिलकर अंग्रेजी हुकुमत के बहरे कानों को सुनाने के लिए बम फेंका और अपनी गिरफ्तारी दी।

सरदार भगत सिंह का व्यक्तित्व एवं भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में उनकी भूमिका सदैव बाद के इतिहासकारों, शोधार्थियों एवं लेखकों को अपनी ओर आकर्षित करता रहा। इसलिए शहीद भगत सिंह पर अनेक ग्रन्थ लिखे गये। जैसे, ए.जी. नूरानी का ट्रायल्स ऑफ भगत सिंह, एम.एम. जुनेजा का बायोग्राफी ऑफ भगत सिंह, कुलदीप नैयर द्वारा

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

लिखित विद आऊट फियर, द लाइफ एण्ड ट्रायल्स ऑफ भगत सिंह, इरफान हबीब का टु मेक द डिफ हीयर आईडियोडलोजी एण्ड प्रोग्राम ऑफ भगत सिंह, मानविन्दर जीत सिंह की पुस्तक हैगिंग आफ भगत सिंह, भगत सिहंस् जेल नोट बुक इत्यादि।

30 अक्टुबर 1928 को लाला लाजपत राय घायल हुए एवं 17 नवम्बर को इसी पुलिस की लाठी से लगे घाव की वजह से उनकी मृत्यु हो गयी तो भारतीय क्रान्तिकारियों ने इसे देश का अपमान माना एवं बदला लेने की योजना बनायी। फिर 17 दिसम्बर 1928 को भगत सिंह, राजगुरू, चन्द्रशेखर, आजाद इत्यादि ने मिलकर पुलिस अधिकारी साण्डर्स की हत्या कर भूमिगत हो गये। लेकिन इन्होंने अंग्रेजी हुकुमत के विरूद्ध अपनी योजना बनाना जारी रखा। इस प्रकार 8 अप्रैल 1929 को एक सोची–समझी योजना के तहत भगत सिंह एवं बटुकेश्वर दत्त ने दिल्ली के केन्द्रीय असेम्बली हॉल में खाली स्थान पर बम फेंका एवं अपनी विचारधारा के पर्चे फेंककर अंग्रेजी सरकार की चूलें हिला दी। इन दोनों क्रान्तिकारियों ने जानबूझकर अपनी गिरफ्तारी दी।

भगत सिंह ने लगभग 2 साल तक अपना जीवन बंदीगृह में बिताया। इस दौरान उन्होंने 116 दिनों तक भूख हड़ताल अपने अन्य साथियों के साथ मिलकर की। इसके अतिरिक्त जेल में उन्होंने पठन व लेखन कार्य भी जारी रखा।

भगत सिंह की गिरफ्तारी के पश्चात् दर्ज हुए एफ0आई0आर0 में उन पर विभिन्न धाराएं लगायी गई, धारा 302 (हत्या), धारा 121 (युद्ध का षडयंत्र) आई.पी.सी. की धारा 109 (अपराध के लिए उकसाना), धारा (120) (आपराधिक षड्यंत्र) जैसी धाराएं लगाई गई। इसके बाद इस मुकदमें में अदालती कार्यवाहियों का दौर शुरू हुआ, जिसमें विभिन्न चश्मदीदों के बयान दर्ज करवाये गये। इसमें मुख्यतः दिल्ली पुलिस के सार्जेण्ट टेरी, हेड कांस्टेबल हाकिम खॉ, जय गोपाल, फणीन्द्रनाथ घोष, मनमोहन बनर्जी, शोभा सिंह, शादी लाल, दिवान चन्द फोगाट, जीवन लाल, लाहौर सेन्ट्रल जेल का असीस्टेन्ट जेलर दौलत अली शाह, इन्दरपाल, मदन गोपाल, ललित कुमार इत्यादि के बयान शामिल हैं।

इस प्रकार तमाम गवाहों के बयान दर्ज कर 11 सितम्बर 1930 को आरोप तय हुआ। भगत सिंह व उनके साथियों के विरूद्ध दी गयी गवाही का दुष्परिणाम बहुत ही भयावह सिद्ध हुआ, जिसके पश्चात् भगत सिंह, राजगुरू व सुखदेव को फॉसी एवं अन्य साथियों को आजीवन कारावास से लेकर सश्रम कारावास की सजा सुनायी गयी।

23 मार्च 1931 को भगत सिंह समेत राजगुरू व सुखदेव को फॉसी दे दी गयी। गवाह तैयार करने सरकार के पक्ष में बयान देने के लिए, सरकार ने भरपूर प्रयत्न किया। उन्हें भारी भरकम उपाधि धन एवं जागीरे प्रदान की गयी। जैसे, जय गोपाल को 20,000 रूपया देकर भूमिगत होने में उसकी सहायता की गयी, सरदार शोभा सिंह को दिल्ली

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

कनॉट प्लेस के पास बेशकीमती जमीन प्रदान किया गया एवं सरकारी कॉन्ट्रेक्ट दिया गया, शादी लाल को 'सर' की उपाधि देकर बागपत में ढेर सारी जमीन दी गई। जिसको आधार बनाकर इसने चीनी मीलों एवं शराब कारखानों की स्थापना की। दीवान चन्द फोगॉट जैसे गवाह को भारी मात्रा में भारतीय मुद्रा प्रदान किया गया, जिसके आधार पर इसने डी.एल.एफ. जैसी बड़ी कम्पनी स्थापित की, जीवन लाल नामक सरकारी गवाह को इतना धन मिला कि उसने एटलस नामक एक साइकिल की कम्पनी स्थापित किया। फिर फणीन्द्र नाथ घोष, जैसे गद्दारों को बचे हुए क्रान्तिकारियों द्वारा मार दिया गया।

बावजूद इसके कि इन लालची गवाहों का आर्थिक जीवन समृद्धि से भर गया फिर भी स्वतन्त्रता संघर्ष के दौरान समाज में इन्हें घृणास्पद दृष्टि से ही देखा जाता रहा।

संदर्भ :

1. चमनलाल– क्रान्तिकारी भगत सिंह : 'अभ्युदय' एवं 'भविष्य' संपादक– लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद, संस्करण 2012.
2. स्वाधीनता संग्राम के क्रान्तिकारी साहित्य का इतिहास (भाग–2)
3. भगत सिंह– 'मैं' नास्तिक क्यों हूँ।
4. वीरेन्द्र सिंधु– अमर शहीद भगत सिंह, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, नयी दिल्ली, संस्करण– 1974
5. Chinmohan Sehanayis : Impat of Lenin on Bhagat Singh's Lite.
6. भगत सिंह का पत्र सुखदेव के नाम, 5 अप्रैल, 1929.
7. Kuldeep Nayar- Without Fear. The Life and Trails of Bhagat Singh.
8. A.G. Noorani- Trails of Bhagat Singh.
9. डॉ0 गुरूदेव सिंह संधु– भगत सिंह को फॉसी

WRITERS VIEW
An Interdisciplinary, bilingual, bi-annual, a peer review or refereed International Journal
Vol. 3 No. 1&2 APRIL & OCTOBER Year 2018

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

14

भाई जी हनुमान प्रसाद पोद्दार और सनातन संस्कृति

जयगोपाल मद्येशिया
शोध छात्र, इतिहास विभाग
दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

भाई जी एक विलक्षण व्यक्तित्व के धनी व्यक्ति थे। उन्होंने अपने जीवन में जो कुछ प्राप्त किया और जो धरोहर हमारे लिए छोड़ गए है, यदि हम उनका अनुसरण कर सके तो हम धन्य हो जाएंगे। भाई जी को मानव शरीर और मानव आकृति में एक व्यक्ति के रूप में देखना और अपनाना, यह एक बहुत छोटी बात है। भाई जी जिन दैवी गुणों के समुच्चय थे, उन सारे गुणों का चर्चा यदि प्रारंभ से लेकर अंत तक करें तो हम पार नहीं पा सकते। क्योंकि अपने आप में भागवत तत्व का गुण है। भाई जी ने राधा तत्व की अनुभूति की और उन्होंने हमारे लिए राधा तत्व की विरासत छोड़ी। प्रेम और त्याग पर गौर करें और भीतर प्रवेश करें तो हम देखेंगे संसार में इससे अधिक बड़ा प्रेम का कोई महान तत्व नहीं है। भाई जी ने खुली आंखों से ठाकुर को देखा और बंद आंखों से ठाकुर का अनुभव किया। यह प्रत्यक्ष देखी हुई बात है। पूज्य भाई जी ने सदैव अपनी जीवनी लिखने का विरोध किया। उनके जीवन काल में जब भी ऐसा प्रयास हुआ, उन्होंने आग्रह पूर्वक उस कार्य को स्थगित करा दिया।

श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार को निर्विवाद रूप से एक उत्कृष्ट संत और साक्षात्कार प्राप्त भक्तों के रूप में स्वीकार किया गया और भारतीय संस्कृति के प्रचार प्रसार में उनके योगदान को युगांतकारी माना गया है। यह योगदान उन्हें आदि शंकराचार्य, चैतन्य महाप्रभु, गोस्वामी तुलसीदास जैसी अवतारी विभूतियों की श्रेणी में बिठाने में पर्याप्त है। हिदू धर्म जब जब पतनोन्मुख हुआ है, उसके पुनरुत्थान के लिए महान विभूतियों ने जन्म लिया है। अवतारवाद इस सिद्धांत का उज्जवल प्रतीक है। श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार का जन्म इसी परंपरा में हुआ है और उनका हिदू धर्म और संस्कृत के पुनरुद्धार कार्य बड़ा भव्य है अपने जीवन काल में प्रातः स्मरणीय पोद्दार जी ने धर्म संस्कृति और साहित्य की जो सेवा की वह अविस्मरणीय है। पोद्दार जी अपने आप में एक महान संस्था थे। धार्मिक साहित्य के क्षेत्र में पोद्दार जी के उदय के पहले एक अभावग्रस्तता की सी अनुभूति होती थी। देश में धार्मिक साहित्य के प्रकाशन संस्थान उंगलियों पर गिने जाने योग्य थे तथा

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

धर्म ग्रंथों की प्राप्ति कठिन और व्यय साध्य थी। धर्म प्रिय जनता में अपने महान देश के प्राचीन धर्म ग्रंथों को अपनी मातृभाषा में पढ़ने के लिए छटपटाहट थी। पोद्दार जी ने समय की मांग को पहचाना और अपने देश की जनता को ऐसे ग्रंथ रत्न भेंट किए, जिनकी मुद्रण संबंधी स्वच्छता सुंदरता और शुद्धता देखकर भारतीय जनमानस कृतकृत्य हो गया और जो कम मूल्य पर उपलब्धता के कारण घर घर पहुंच गई।

''सन 1956 में अपने कुछ साथियों के साथ पोद्दार जी तीर्थाटन करने मथुरा पधारे। तीर्थ यात्रियों के सम्मान में मथुरा के लक्ष्मी दास भवन में एक समारोह का आयोजन किया गया। समारोह में एक के बाद एक वक्ताओं ने पोद्दार जी के ऋषि तुल्य जीवन की महिमा पर प्रकाश डाला। कुछ वक्ताओं ने उन्हें आधुनिक भारत का वेदव्यास कहा है। मैंने अपने भाषण में पोद्दार जी की ध्यान श्री कृष्ण जन्म स्थान की दुर्दशा की ओर आकृष्ट कर निवेदन किया कि मथुरा में प्रतिवर्ष लाखों यात्री आते है किंतु ऐसा कौन होगा जिसका हृदय श्री कृष्ण जन्म भूमि की वर्तमान दुर्दशा को देखकर सैकड़ों प्रकार से आहत ना होता है यह सब सुनने के बाद पोद्दार जी ने कहा जन्म स्थान के प्रति जो कुछ कहा गया है, उससे मैं पूर्णतः सहमत हूं एवं अपने निमित्त छोटे से प्रयास भी करने की बात कही। शीघ्र ही 10000 रुपए आप लोगों की सेवा में भेजूंगा।

वास्तव में यह कार्य आपके ही कर्तव्य पालन की अपेक्षा करता है। आप श्री कृष्ण के अपने है। थोड़े ही दिनों बाद पोद्दार जी की ओर से श्री कृष्ण जन्मस्थान के पुनरुत्थान एवं पुनर्निर्माण हेतु 10000 का चेक प्राप्त हुआ। एक महान निर्माण कार्य के रूप में श्रीमद्भागवत मंदिर की नींव डाली गई और इसके शिलान्यास का शुभ कार्य उन्हीं के हाथों संपन्न हुआ था। श्री कृष्ण जन्म स्थान के निर्माण प्रगति जब–जब श्री पोद्दार जी का स्मरण किया गया, वह सहयोग के लिए सदा तत्पर रहे।''[1] हनुमान प्रसाद पोद्दार ए स्वस्थ हिदू धर्म की रक्षा और समुन्नत के लिए जो कुछ किया वह अतुल्य है। बहुत वर्ष पहले काशी में उन्होंने मुझे दर्शन दिए थे। संयोगवश उस समय गुप्त सम्राट की कुछ स्वर्ण मुद्राएं बिक्री के लिए आई थी। जिन्है मैं कला भवन के लिए खरीदना चाहता था किंतु रुपए नहीं थे। मैंने भाई जी से कहा गुप्त युग भारत का स्वर्ण युग है। इन सिक्कों को विदेश ना जाने देना चाहिए। उन्होंने अविलंब रुपयों का इंतजाम किया। यद्यपि यह उनके कार्य क्षेत्र के बाहर की बात थी। उन्होंने कृपा पूर्वक मेरे लिए गीता के शंकर भाष्य का हिदी अनुवाद भेजा। उसे पढने पर मुझे ऐसा लगा कि भगवान शंकर ज्ञान मार्गी न थे अपितु अदैत्यवादी भक्त थे। मैंने यह बात उन्हें लिख भेजी उत्तर में उन्होंने मेरा पूरा समर्थन किया।[2] भगवान के सेवक के रूप में मनुष्य को उसकी स्वाभाविक स्थिति का बोध कराना। मानव समाज की अत्यंत महत्वपूर्ण एवं हितकारी सेवा है।

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

मासिक पत्रिका 'बैक टू गोधा' अंग्रेजी, फ्रेंच, जर्मन, जापानी, और हिन्दी आदि भाषाओं में प्रकाशित होती है। प्रति मास 500000 से अधिक प्रतियों का मुद्रण संसार व्यापी वितरण के लिए हो रहा है। परंतु अभी रूसी चीनी यूनानी हिब्रु आदि अनेक भाषाएं ऐसी है जिनमें इसका प्रकाशन प्रारंभ नहीं हुआ है। विश्व भ्रमण के पश्चात अपने अनुभव के आधार पर मैं निश्चित रूप से यह कह सकता हूं कि संसार में वैदिक संस्कृत की बड़ी आवश्यकता है और इसकी पूर्ति महामंत्र हरे कृष्ण हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे। हरे राम हरे राम, राम राम हरे हरे के कीर्तन से ही हो सकती है। थोड़े ही समय में हमारे लघु प्रयासों के द्वारा हरे कृष्ण... महामंत्र संसार प्रसिद्ध हो चुका है। ग्रामोफोन के रिकॉर्डर चित्र पुस्तको आदि के द्वारा इसका इतना प्रचार हुआ है कि अनेक घरों में हरे कृष्णा महामंत्र के साथ दिन की शुरुआत होती है।[3]

श्री भगवान गोरक्षनाथ की तपोभूमि गोरखपुर में स्थापित गीता प्रेस के माध्यम से भाई जी आजीवन धार्मिक आध्यात्मिक जगत की सेवा करते रहै। उपनिषद इतिहास, श्रीमद्भागवत गीता, श्रीरामचरितमानस, संत साहित्य आदि महत्वपूर्ण भारतीय साहित्य एवं हिदू धर्म से संबंधित सभी धर्म शास्त्रों का उन्होंने गहन मनन किया था। उनका विश्वास था कि भारतीय जन अपनी आध्यात्मिक धरोहर के बल पर ही जीवित रह सकते है। उन्होंने इन लुप्त प्राय ग्रंथों को अनवरत प्रयत्न करके पुनः प्रकाशित कराया आवश्यकतानुसार उन्होंने इन ग्रंथों की टीका और व्याख्या भी प्रस्तुत किए। उनके द्वारा प्रकाशित एवं संपादित कल्याण मासिक पत्रिका ने विश्व के कोने–कोने में पहुंचकर अंधेरे में प्रकाश की किरणों का कार्य किया है

देश और विदेश का कोई भी आस्तिक परिवार ऐसा ना होगा जहां कल्याण ने पहुंचकर आत्मोत्थान एवं परोपकार के कार्यों में सहयोग न प्रदान किया है। उनका पत्र कल्याण ही एकमात्र ऐसा पत्र है जिसकी भारत से बाहर भी पर्याप्त मांग है। विश्व का कदाचित ही कोई ऐसा देश है जहां कल्याण की मांग ना हो। अपनी कुशल लेखनी और संपादन कला से उन्होंने धार्मिक सांस्कृतिक और लोक कल्याणकारी साहित्य का जिस प्रचुर मात्रा में सृजन किया है, उसे जिज्ञासु विद्वान एवं अध्ययनवासी पाठक के लिए जीवन भर पढ़ पाना कठिन है, उसके अंधोपांत समझ पाना और अनुकूल आचरण कर पाना कठिन है। सचमुच गीता प्रेस एवं कल्याण के माध्यम से उन्होंने हिदू एवं हिदुस्तान की जो सेवा की है, वह चिरकाल तक स्मरण की जाएगी। उन्होंने कल्याण का हिदू संस्कृति अंक प्रकाशित करके संसार को एक बार पुनः भारत की अमूल्य थाती एवं आध्यात्मिक परंपरा की ओर आकर्षित एवं नतमस्तक होने के लिए विवश किया।[4]

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

भाई जी हनुमान प्रसाद पोद्दार देश की वर्तमान पीढ़ी के साथ ही आने वाली पीढ़ियों के लिए भी भारत की आध्यात्मिकता के आलोक स्तंभ बने रहेंगे। इसमें संदेह नही कि आपका कृतित्व भारतीय धर्म एवं संस्कृति का प्रेरणा केंद्र रहा है। आपने 1926 ईस्वी से लगातार 45 वर्षों तक कल्याण का संपादन किया तथा उसके माध्यम से भारत को आध्यात्मिकता और राष्ट्रीयता का सहज बोध कराया और राष्ट्र को सांस्कृतिक संजीवनी दी। भारतीय जनमानस के नैतिक उत्थान के लिए आपने जो साहित्य लिखा और लिखवाया है उसका भी विशेष महत्व है। नई पीढ़ी के बालक बालिकाओं में सांस्कृतिक संस्कार उत्पन्न करने में आपका साहित्य आप ही अपना उदाहरण है। कल्याण के माध्यम से अपने देश को सांस्कृतिक सूत्र पिरोने में महान सफलता प्राप्त की है। मासिक कल्याण की प्रसार संख्या 160000 से अधिक है। देश में ही नहीं विदेशों में भी इसकी हजारों प्रतियां जाती है। कल्याण के रामायण अंक शिवांक, नारी अंक, सत्यकथा अंक, हिदू संस्कृति अंक आदि अपने विषय के विश्वकोश जैसे महत्वपूर्ण ग्रंथ है। सन 1927 में कल्याण के दूसरे वर्ष का विशेषांक भगवतनाक प्रकाशित हुआ। इस विशेषांक के लिए पोद्दार जी ने महात्मा गांधी से राम नाम की महिमा पर विशेष लेख प्राप्त किया।[5]

भाई जी हनुमान प्रसाद पोद्दार हिदू जाति, हिदू धर्म हिदू सभ्यता–संस्कृति, हिन्दी–हिदुस्तान के महान रक्षकों में से थे। वह सनातन धर्म के मानो साक्षात सूर्य ही थे। भारत माता के सच्चे लाल और रत्न थे। विश्व की एक महान दिव्य विभूति थे। सर्वगुण संपन्न थे। हिदू जाति, सनातन धर्म, साधु संत, गौ, ब्राह्मण, देव मंदिर, वेद पुराण श्री भाई जी के ये ही प्राण थे और समस्त जीवन आपका इनकी रक्षा और सेवा में ही व्यतीत हुआ। हम लोगों का परम कर्तव्य है कि जिस प्रकार श्रद्धेय श्री भाई जी ने जीवन भर सनातन धर्म और हिदू जाति की रक्षा सेवा की उसी प्रकार प्राण पर से हम भी करें। यही उन महापुरुष के श्री चरणों में सच्ची श्रद्धांजलि होगी। भाई जी के जीवन को हम सब लोगों को पढ़ना चाहिए। पढ़ना केवल पढ़ने के लिए नहीं जीवन में उतारने के लिए। उनके जीवन की थोड़ी सी अभिव्यक्ति यदि हमारे आचरण में, मन मे, हमारे शरीर में प्रवेश कर सकी उनकी अनुसरण की थोड़ी सी इच्छा भी जग सकी तो यह जीवन सार्थक हो जाएगा।

भाई जी के जीवन की जो विशेषता थी वह आपके सामने इसलिए परोसी जा रही है कि हमारे जीवन में एक ऐसे व्यक्ति का साक्षात हुआ था जो इतनी ऊंचाइयों तक जा सकता है। देश–विदेश ने सारे हिदू समाज को संगठित करना उनका स्वभाव बन गया था किसी की भी चीख–पुकार जैसे ही सुनते उनका हृदय द्रवित हो जाता था। यह उनके दैवी गुण थे। इन गुणों को याद करके उनको पूजते है। लोग कहते है पत्थर को

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

पूजते है उसी पत्थर से भगवान प्रकट होते है। प्रकट होने का माध्यम मनुष्य की व्यक्ति की श्रद्धा है जो पत्थर में भगवान को प्रकट कर देती है। आज हमारी आस्था विश्वास का झांकने का, देखने का, सिंहावलोकन करने का प्रश्न है कि हम कितनी दूर तक उनकी बातों को मान सके। कितनी दूर तक चीजों को अपने आप में संजो सके।

संदर्भ

1. गोस्वामी चिमनलाल और सिंह भगवती प्रसाद संपादक वि 2028 भाई जी पावन स्मरण हिदू धर्म के संरक्षक साहित्य वारिधि श्री वृंदावन दास जी पृष्ठ संख्या 208 209
2. गोस्वामी चिमनलाल और सिंह भगवती प्रसाद संपादक वि 2028 भाई जी पावन स्मरण हिदू धर्म के रक्षक श्री रामकृष्ण दास जी पृष्ठ संख्या 144
3. गोस्वामी चिमनलाल और सिंह भगवती प्रसाद संपादक विक्रम 2028 भाई जी पावन स्मरण वैदिक संस्कृति के महान प्रचारक आचार्य प्रभुपाद श्री भक्तिवेदांत स्वामी जी महाराज पृष्ठ संख्या 110.11
4. गोस्वामी चिमनलाल और सिंह भगवती प्रसाद संपादक विक्रमी 2028 भाई जी पावन स्मरण हिदू हिदुत्व एवं हिदुस्तान के महान पुजारी महत श्री अवैघनाथ जी महाराज पृष्ठ संख्या 112
5. गोस्वामी चिमनलाल तथा सिंह भगवती प्रसाद संपादक 2028 भाई जी पावन स्मरण आध्यात्मिक सांस्कृतिक क्रांति के अग्रदूत पोद्दार जी पृष्ठ संख्या 361

****

WRITERS VIEW
An Interdisciplinary, bilingual, bi-annual, a peer review or refereed International Journal
Vol. 3 No. 1&2 APRIL & OCTOBER Year 2018

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

15

सयुंक्त प्रान्त में भूराजस्व व्यवस्था एवं कृषक संघर्ष

सतीश चहल
शोध छात्र, इतिहास विभाग
दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

औपनिवेशिक शासन काल से अंग्रेजों द्वारा भारत में भू राजस्व एकत्रित करने के लिए मुख्यत तीन प्रकार की भू राजस्व प्रणाली चलाई थी जो आजादी से पूर्व तक चलती रही। जबकि सयुंक्त प्रान्त के एक बड़े भाग में तालुकेदारी व्यवस्था को लागू किया गया। अंग्रेजों द्वारा भू राजस्व कर निर्धारण का एकमात्र उद्देश्य किसानों का अत्यधिक शोषण था, जिसके कारण भारत के किसान अपने उत्पादन का अत्यधिक मात्रा कर के रूप में देते गए और दरिद्रता की तरफ आकर्षित होते गए। जिससे किसानों के दिल में भी अंग्रेजों के खिलाफ नफरत होती गई। और अंततः कृषक विद्रोह के रूप में परिणित हो गए। औपनिवेशिक भारतीय परिक्षेत्र में चार भू राजस्व प्रणाली प्रचलित थी–

- स्थाई बंदोबस्त
- रैयतवाड़ी व्यवस्था
- महालवाड़ी व्यवस्था
- तालुकेदारी व्यवस्था

प्रत्येक प्रणाली भारत के अलग–अलग परी क्षेत्र में प्रचलित थी। जिसमें संयुक्त प्रांत के अधिकतम परिक्षेत्र में महालवाड़ी तथा तालुकेदारी व्यवस्था थी। जबकि बनारस में स्थाई बंदोबस्त थी। भारत में अंग्रेज शासन स्थापित होने के पश्चात भारतीय अर्थव्यवस्था में व्यापक परिवर्तन हुए। साम्राज्यवादी अंग्रेजों ने भारतीय कृषि व्यवस्था में तो आमूलचूल परिवर्तन किए नई नई भू राजस्व पद्धति स्थायित्व की धाराएं लगान दर में वृद्धि की मांग ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था में परिवर्तन किए जिससे समस्त देश के कृषि जगत में भूचाल आ गया।

प्राचीन काल से ही ग्राम स्थानीय स्वशासन तथा भूमि करके इकाई के रूप में कार्यरत थे। भूमि से संबंध रखने वाले वर्गों का भूमि पर अधिकार था। लेकिन कृषि संबंधित सभी व्यवस्थाएं करने का जिम्मा राज्य के पास था जिसके बदले में राज्य को कर के रूप में

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

आय होती थी। अंग्रेज शासकों ने भारत के प्रशासन से अधिक से अधिक लाभ उठाने का प्रयत्न किया जिसके लिए उन्होंने कृषकों पर भुराजस्व की दर अधिक निर्धारित कि जिस कारण अंग्रेजों की आय का मुख्य स्रोत भूमि कर ही रहा।[1]

भूराजस्व दर ने अंग्रेजों के पोषण का कार्य किया और किसानों का शोषण किया। अब किसानों का स्तर लगातार गिरता चला गया। यहां तक कि उन्हें रोजी–रोटी के लाले पड़ने लगे फल स्वरुप किसान के पास केवल कृषिव्यय तथा उसके श्रम की मजदूरी ही शेष बच पाती थी। अंग्रेजों ने भूमि कर की नीलामी की जिस कारण भूमि उसी को दी जाती थी जो अधिक से अधिक कर दें। अधिक भूमि कर देने के कारण उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा बहुत सी भूमि खाली रहने लगी जिस वजह से उत्पादन का हास हुआ देश में अकाल पड़ने लगे।[2]

जमींदार व्यवस्था के अंतर्गत जमींदार को ही भूमिका स्वामी स्वीकार कर लिया जाता था। जमींदार भूमि को रेहन बेच अथवा दान में दे सकता था राज्य भूमि कर देने के लिए केवल जमीदार को ही उत्तरदाई समझता था तथा उसके कर ना देने पर भूमि जप्त कर ली जाती थी। कर की दर बहुत ऊंची तय की जाती थी।[3] इस व्यवस्था का सबसे घिनौना पक्ष यह था कि राज्य की मांग तो स्थिर थी लेकिन जो दर जमींदार कृषक से लेता था वह परिवर्तनशील थी। आगे चलकर यह दर बढ़ा दी गई जिससे कृषकों के शोषण में वृद्धि हुई। कर ना अदा करने पर प्रशासकों को जमीन से बेदखल कर दिया जाता था जिससे किसानों में असंतोष पैदा हो गया।[4]

महालवाड़ी व्यवस्था में भूमि कर की इकाई कृषक का खेत नहीं बल्कि ग्राम्या महल जागीर का एक भाग होता था। भूमि पर समस्त ग्राम सभा का अधिकार होता था। जिसे भागीदारों का समूह कहते थे। यह लोग सम्मिलित रूप से भूमि कर देने के लिए उत्तरदाई होते थे। हालांकि व्यक्तिगत उत्तरदाई भी होता था यदि कोई अपनी भूमि छोड़ता था। तो ग्राम समाज उस भूमि को संभालता था इस व्यवस्था के अंतर्गत समस्त भूमि का 30% भाग आता था इस व्यवस्था का विस्तार मुख्यत है संयुक्त प्रांत मध्य प्रांत तथा पंजाब तक था।[5]

रैयतवाड़ी व्यवस्था के अनुसार प्रत्येक पंजीकृत भूमिहार को भूमि का स्वामी स्वीकार किया जाता था वहीं राज्य सरकार को भूमि कर देने के लिए उत्तरदाई होता था उसे अपनी भूमि का अधिकार गिरवी रखने या बेचने की अनुमति थी।[6] कैप्टन तथा टॉमस मुनरो इस व्यवस्था के प्रेरक थे। भूमि कर की दर अत्यंत ऊंची थी। जिससे किसानों के शोषण में वृद्धि हुई कर संग्रहण करने के प्रबंध बहुत कड़े थे और इसके लिए प्राय यातनाएं दी जाती थी यह व्यवस्था मुख्यत है दक्षिण भारत में प्रचलित थी।[7]

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

संयुक्त प्रांत के अधिकार क्षेत्र बनारस को छोड़कर में अंग्रेजों द्वारा तालुकेदारी तथा महलवारी व्यवस्था प्रचलित थी। इस व्यवस्था के अंतर्गत भूमि कर की इकाई कृषक का खेत ना होकर समस्त ग्राम या महल को मान मान लिया जाता था। इस व्यवस्था में भूमि कर का उत्तरदायित्व व्यक्तिगत ना होकर सामूहिक होता था अर्थात एक ग्राम सभा इसके लिए उत्तरदाई होती है महाल के समस्त कृषक भू स्वामियों का पूरा भुराजस्व का निर्धारण संयुक्त रूप से किया जाता था।[8]

महालवाड़ी व्यवस्था बुरी तरह असफल हुई क्योंकि इसमें लगान का निर्धारण अनुमान पर आधारित था। और इसकी विसंगतियों का लाभ उठाकर कंपनी के अधिकारी अपनी जेब भरने लगे तथा सरकार को लगान वसूली पर अधिक खर्च करना पड़ता था। इस व्यवस्था का परिणाम ग्रामीण समुदाय के विखंडन के रूप में सामने आया सामाजिक दृष्टि से यह व्यवस्था विनाशकारी और आर्थिक दृष्टि से विफल सिद्ध हुई।[9]

व्यवस्था का परिणाम ग्रामीण ग्रामीण समुदाय के विखंडन के रूप में सामने आया सामाजिक दृष्टि से यह व्यवस्था विनाशकारी और आर्थिक दृष्टि से विकसित हुई इस व्यवस्था के अंतर्गत वाणिज्य फसलों को बढ़ावा दिया गया जिससे व्यापारिक वर्ग तथा सरकार को लाभ हुआ वहीं दूसरी तरफ किसानों की स्थिति खराब होती गई व्यापारी वर्ग खड़ी फसलों को ही कम कीमत पर खरीद लेता था। किसान अपनी तात्कालिक जरूरतों के लिए फसल को बेच देते थे। वहीं अंदाजे से किसान बेच देता था उसे ही 6 महीने बाद ऊंचे दामों पर खरीदता था जो उसकी बर्बादी का कारण बना इस तरह मालवाड़ी व्यवस्था किसानों के शोषण का एक माध्यम साबित हुई।[10]

उत्तर प्रदेश के बनारस खंड में स्थाई बंदोबस्त अर्थात जमींदारी व्यवस्था का प्रश्न था। इस व्यवस्था के अंतर्गत जमींदार जिन्हें गोस्वामी के रूप में मान्यता प्राप्त थी। को भू राजस्व की वसूली कर उसका 10 वां 11 वां भाग अपने पास रखना होता था और शेष कंपनी के पास जमा करना होता था इस व्यवस्था के अंतर्गत जमींदार काश्तकारों से मनचाहा लगान वसूल करता था लगाना देने पर काश्तकारों से जमीन छीन ली जाती थी इस व्यवस्था से कंपनी की आय एक निश्चित हिस्सा तय हो गया।[11] दूसरा लाभ कंपनी को यह हुआ कि जमींदार के रूप में कंपनी को एक सहायक वर्ग मिल गया इस व्यवस्था से किसानों को शोषण चरम पर पहुंच गया। संयुक्त प्रांत में प्रचलित भू राजस्व व्यवस्था का प्रभाव भारतीय अर्थव्यवस्था के हर पहलू पर देखने को मिला लेकिन इसका प्रत्यक्ष प्रभाव किसानों पर सबसे गंभीर रूप से दिखाई दिया। यह व्यवस्था अंग्रेजों के लिए पोषित और किसानों के लिए किसानों की स्थिति दयनीय होती चली गई। किसान कर्ज के जाल में फंसते चले गए और उससे उबर ना सके जिस कारण किसानों में

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

असंतोष की भावना फैल गई। और अंग्रेजों के घोर विरोधी विरोधी भावना ने किसानों के मन में संघर्ष की भावना को जन्म दिया। एक तरफ उत्पादन कम था।[12] दूसरी तरफ जनसंख्या वृद्धि हो रही थी। जिससे खाद्यान्न पर दबाव की स्थिति उत्पन्न हो गयी इस बीच कई अकाल पड़े और लाखो जाने गई। स्थिति यह हो गई कि किसान अपने खेतों में ही मजदूरी करने लगे उनका जीवन स्तर गिरता चला गया। भारतीय किसान जो अपनी समृद्ध ता के लिए जाने जाते थे। उनकी स्थिति दयनीय हो गई। इस प्रकार इन का परिणाम यह हुआ कि अंग्रेजों को कई किसान विद्रोह का सामना करना पड़ा। जिसमें कई किसान विद्रोह हिंसक होने के साथ–साथ राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय भूमिका में आ गए।[13] संयुक्त प्रांत के अंतर्गत वर्तमान उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड राज्य शामिल थे विदेशी हुकूमत और भारतीय शासकों के खिलाफ 19वीं शताब्दी में किसान जहर खाने लगे थे। लगान की दर इतनी ऊंची थी कि किसान उसे छुपाने में समर्थ नहीं था। दिन रात मेहनत करने के पश्चात भी वह अपने परिवार का पालन पोषण करने में समर्थ नहीं था। दूसरी तरफ अंग्रेज भारतीय किसानों को वाणिज्य फसल उगाने के लिए बातें करते थे। जिसका अधिक अंग्रेजों को मिलता था। और किसान खाद्यान्न की कमी का सामना करने लगे क्योंकि वाणिज्य फसलों के कारण खाद्यान्न उत्पादन का हुआ किसानों की दरिद्रता का एक कारण यह था। कि किसान अपनी तत्काल जरूरतों के लिए फलों को काटने से पहले ही खड़ी फसल को बेच देता था जिनका अंग्रेजों ने बहुत कम दाम देते थे।[14]

किसानों के शोषण की प्रक्रिया लंबे समय से चली आ रही थी। जिस कारण भारतीय किसानों की स्थिति दयनीय हो गई थी। अब किसानों के पास खोने के लिए कुछ नहीं बचा था। किसानों में विदेशी हुकूमत के खिलाफ लगातार गुस्सा बढ़ता जा रहा था जिस कारण भारत के कई क्षेत्रों में किसान आंदोलन हुए संयुक्त प्रांत भी इन आंदोलनों से अछूता नहीं था। संयुक्त प्रांत में कई जगह छत पर आंदोलन हुए लेकिन 19वीं शताब्दी तक किसान आंदोलनों में संगठन का अभाव था। जिस कारण अंग्रेज आसानी से इन आंदोलनों को कुचल देते थे। किसानों में एकता का अभाव था। लेकिन बीसवीं शताब्दी आते–आते किसान एकत्रित होने लगे अब किसान समझने लगे कि अंग्रेजों का पूर्ण विरोध किए बिना हमारी दशा में सुधार संभव नहीं है। कई जगह हिंसक आंदोलन हुए लेकिन अंग्रेजों ने इन्हें आसानी से कुचल दिया बीसवीं शताब्दी के शुरुआती दौर में ही किसान संगठित होने लगे और किसान संघ तथा किसान सभा जैसी व्यवस्था जरूरत महसूस होने लगी। और इसके अंतर्गत सबसे पहले अवध किसान सभा का गठन किया गया।[15]

अवध में बीसवीं शताब्दी के शुरुआत में ही होमरूल आंदोलन काफी लोकप्रिय और प्रभावी रहा। जिससे बड़ी संख्या में किसान जोड़ें इतने बड़े स्तर पर पहली बार किसानों

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

को एक साथ देखा गया। किसान सभा ने किसानों को काफी हद तक जागरूक किया इस बात का अंदाजा इस बात से लगा सकते हैं कि 1918 के कांग्रेस के अधिवेशन में उत्तर प्रदेश के किसानों ने बढ़–चढ़कर भाग लिया इस अधिवेशन में किसानों का व्यवहार काफी उग्र था वे आंदोलन करने के लिए छटपटा रहे थे उन्हें नेतृत्व की आवश्यकता थी।[16]

1920 के आते–आते ग्राम पंचायतों में बैठकों का सिलसिला जोर पकड़ने लगा किसानों की मांग उग्र होने लगे अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता ने लगे और अंग्रेजों का एक सुर में विरोध करने लगे जो किसान मजदूर बन गए थे। वह भी आंदोलन में भागीदार बनने की उस वक्त है। वह भी अपनी खोई हुई जमीन पाना चाहते थे। अब जागरूक किसानों ने गांव–गांव घूमकर लोगों को संगठित करना शुरू कर दिया तथा लगान ना चुकाने की आवाज बुलंद की।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. नारायण वी0ए0 जोनाथन डंकन एण्ड वाराणसी, कलकत्ता 1959 पृ0–20
2. दत्त रजनी पाम आज का भारत दिल्ली 2000 पृ0–262
3. यू0पी0 टेनेसी एकट 1939 सरकारी प्रकाशन 1940
4. मोरलैण्ड, डब्लू0एच0 द रवेन्यू एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ यूनाइटेड प्रोविसेज, इलाहाबाद 1911
5. आगरा टेनेसी एक्ट 1901 सरकारी प्रकाशन 1902
6. दत्त, आर0सी0 द इकोनोमिक हिस्ट्री ऑफ इण्डिया विक्टोरिया एज 1937–1900 नई दिल्ली
7. उ0प्र0 राजकीय अभिलेखागार के द्वार पर।
8. कुमार, कपिल–किसान विद्रोह कांग्रेस एवं अंग्रेजी राज, पृ0 95
9. सिंह, महेन्द्र प्रताप–उत्तर प्रदेश में किसान आन्दोलन, पृ0 65
10. सिंह, महेन्द्र प्रताप–उत्तर प्रदेश में किसान आन्दोलन, पृ0 65
11. नेहरू जवाहर लाल–मेरी कहानी, पृ0 74–75
12. Siddigui, Mazid - Agrarian Unreart in North India, 1920-22
13. Reeves PD. Land lords of Govt in Uttar Pradesh, P- 134, 83
14. Leader, 18 June 1920
15. आज, 3 अक्टूबर 1920, कुमार कपिल, किसान विद्रोह, कांग्रेस एवं अंग्रेजी राज, पृ0 116
16. वही, पृ0 116

WRITERS VIEW
An Interdisciplinary, bilingual, bi-annual, a peer review or refereed International Journal
Vol. 3 No. 1&2 APRIL & OCTOBER Year 2018

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

16

पूर्वोत्तर भारत में उग्रवाद : एक अध्ययन

परमजीत राम
शोध छात्र, रक्षा एंव स्त्रातजिक अध्ययन विभाग
श्री गणेश राय पी. जी. कालेज, डोभी, जौनपुर, उ. प्र.

पूर्वोत्तर भारत भारतीय संघ के उत्तर पूर्व कोने पर स्थित है, जो तीन तरफ से अंतरराष्ट्रीय सीमाओं से जुड़ा हुआ है। भौगोलिक रूप से यह 22 डिग्री और 29 डिग्री उत्तर अक्षांश और 89.46 और 97.5 पूर्वी देशांतर पर स्थिति है। यह लगभग 255083 के क्षेत्रफल में फैला हुआ है। रणनीतिक रूप से देखें तो क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति बहुत ही महत्वपूर्ण है। और चीन, म्यांमार, भूटान, बांग्लादेश से तीन तरफ से घिरा हुआ है। यह शेष भारत से एक 22 किमी चौड़े संकरे कारीडोर से सिलीगुड़ी, पश्चिम बंगाल से जुड़ा हुआ है। राजनीतिक रूप से यह क्षेत्र आठ इकाइयों असम, नागालैंड, मणिपुर, त्रिपुरा, मेघालय, अरूणाचल प्रदेश, मिजोरम में बंटा हुआ है। हालांकि भूगोल, इतिहास और परंपराएं, राजनीतिक सीमाओं से परे, पूरे क्षेत्र को एकल भू–राजनीतिक ईकाई के रूप में प्रस्तुत करता है। पूर्वोत्तर भारत में न केवल मंगोल बसे हैं, बल्कि इंडो आर्य भी हैं। खासी और जैन्तिया को छोड़कर जो कि आस्ट्रिक भाषाई समूह (अब बर्मा का मोन्खमर सांस्कृतिक समूह) ज्यादातर पहाड़ी जनजातियां तिब्बती–चीनी भाषाई परिवार और तिब्बती–बर्मन उप परिवार से जुड़े हैं। इस क्षेत्र में गैर आर्य भाषाएं ही प्रमुख हैं। क्षेत्र में 125 से ज्यादा प्रमुख समूह हैं और सभी की अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान है। परिधीय स्थिति, भौगोलिक अलगाव और लैंड लाक चरित्र पूर्वोत्तर भारत की पहचान है। जो चारों ओर से बांग्लादेश, म्यांमार, चीन से घिरा हुआ है, और जिनका रवैया भारत के प्रति उग्र रहा है। उग्रवाद के मामले में इनका विशेष भू राजनीतिक महत्व है। यह उग्रवादी गतिविधियों में वृद्धि में अहम भूमिका निभाता है।[1]

यह क्षेत्र देश के 8 प्रतिशत भू–भाग में फैला है और इसमें राष्ट्रीय आबादी का लगभग 4 प्रतिशत हिस्सा निवास करता है। लगभग 5,484 किमी. की इसकी संपूर्ण सीमा, बांग्लादेश (1,880 किमी.), म्यांमार (1,643किमी.) चीन (1,346 किमी), भूटान (516 किमी.) और नेपाल (99 किमी0) के साथ लगी अंतरराष्ट्रीय सीमा है।[2] विद्रोह की ज्वाला जिसने मैदान और पहाड़ दोनों की सामान्य और शांत जिंदगी में भूचाल ला दिया है, वह आर्थिक पिछड़ेपन और राजनीतिक अलगाव के कारण उठी। वहॉ की जनजातीय आबादी को देश

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

की मुख्यधारा से अलग–थलग कर दिया गया। उनका आर्थिक पिछड़ापन, प्राकृतिक संसाधनों का दोहन न होने, अपर्याप्त ढांचागत विकास, भीषण भ्रष्टाचार क्षेत्र में राजनेता, ठेकेदार और विद्रोहियों में मजबूत गठजोड़ के कारण ही बढ़ा है। उनका संघर्ष अलगाव के लिए विद्रोह से स्वायत्तता के लिए विद्रोह की ओर बढ़ा है। प्रायोजित आतंकवाद से जातीय संघर्ष में बदला है।

विष्लेशणात्मक अध्ययन में पाया गया है कि पूर्वोत्तर के पहाड़ी जनजातियों के साथ–साथ मैदानी जनजातियों की आकांक्षाएं और मांग दोनों वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य को पूरी तरह से प्रभावित कर रहे हैं। टी.के. भट्टाचार्य जी के शब्दों में, ''कभी–कभी ये सशस्त्र विद्रोह सम्प्रभु राज्य के निर्माण की मांग का रूप धारण कर लेता है और यह अलगाववाद कहलाता है। कभी–कभी ये प्रयास बीच रास्ते में ही भारतीय संघ में ही स्वायत्त राज्य की मांग में बदल जाती है।''[3]

पूर्वोत्तर के आन्दोलन धीरे–धीरे राजद्रोह या विप्लवकारी युद्ध (Insurgency) में परिवर्तित होते गए तो उसके पीछे विदेशी शक्तियों का हाथ भी है। भारत के कई पड़ोसी राष्ट्रों से इन विप्लवकारी शक्तियों को मदद मिलती रही है। सुबीर भौमिक के अनुसार, ''स्वतंत्रता के बाद से ही पूर्वोत्तर भारत में हिंसात्मक आन्दोलन, सतत् अलगाववादी विप्लव, नृजातीय दंगे और राज्य द्वारा उसकी कड़ी प्रतिक्रिया ने भारी रक्तपात को जन्म दिया है। इस क्षेत्र ने बड़े पैमाने पर विप्लवकारी हिंसा, सशस्त्र गुटों का नृजातीय आधार पर अथवा अपने समूह का नेतृत्व के लिए संघर्ष तथा बड़े स्तर पर सुरक्षा बलों की तैनाती देखी है। अनवरत सशस्त्रीकरण ने यहॉ नागरिक समुदाय के विकास में लगातार बाधा उत्पन्न की है।''[4]

आज पूर्वोत्तर भारत का राजनीतिक परिदृश्य भारत की राष्ट्रीय अखण्डता के लिए खतरा उत्पन्न कर रहा है। भट्टाचार्यजी के शब्दों में ''आज पूर्वोत्तर का राजनीतिक परिदृश्य राजनीतिक पर्यवेक्षकों के आकर्षण का केन्द्र बन चुका है। यहॉ नृजातीय चेतना ने अन्य सभी समूहों को पीछे कर दिया अतः केन्द्र विरोधी शक्ति (Certrifuglism) आज की विशेषता बन चुकी है।[5]

उपनिवेशोत्तर भारत में पूर्वोत्तर भारत एक ऐसा क्षेत्र है जहॉ विप्लवकारी युद्ध भारत के किसी भी अन्य क्षेत्र से अधिक होते रहे हैं। यह भी सच है कि स्वतंत्र भारत में इसकी शुरूआत भी यही से हुई। यहॉ की जनजातियों और नृजातिय समूहों के लिए सशस्त्र विद्रोह समस्या के समाधान के लिए अन्तिम नहीं वरन् पहला विकल्प होता है।[6]

वास्तव में विप्लव को परिभाषित करते हुए उसे एक असंतुष्ट समूह की हिंसात्मक गतिविधि कहा जा सकता है जो अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए करता है।[7] यह एक

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

सशस्त्र डकैतों व चोरों का समूह न होकर कुछ निश्चित विचारों पर आधारित होता है। यह विचार किसी विशेष समूह जनजाति, समुदाय धार्मिक या धर्मनिरपेक्ष की हो सकता है। एक विप्लवकारी समूह हमेशा ही शक्ति के प्रयोग के लिए तत्पर रहता है यदि उसके लक्ष्य का विरोध किसी अन्य समूह या शक्ति के द्वारा किया जाता है। यह शासकीय प्राधिकारियों के विरूद्ध भी अपनी शक्ति का प्रयोग करने के लिए तत्पर रहते हैं।

के0 आनन्द का विचार है कि ''विप्लवकारी आमतौर पर जनसमुदाय को इस बात को समझाने का प्रयास करते हैं कि उनके युद्ध का कारण न्याय संगत और जनहितकारी है। उनके द्वारा जो सशस्त्र कार्यवाहियाँ सम्पन्न की जा रही है वे वास्तव में स्थापित कुशासन और अन्याय की समाप्ति के लिए आवश्यक है।''[8]

ये विद्रोह सत्ता संस्थानों के समानान्तर अपनी सरकार, सेना व संगठन खड़ा करते हैं तथा युवकों को भर्ती कर उन्हें सैनिक प्रशिक्षण देते हैं। अपने देश के विरोधी देशों से भी सम्पर्क साधकर हथियार, गोलाबारूद एवं आवश्यकता होने पर शरण भी प्राप्त करते हैं। वे अपने विचारधारा तथा मांगों का अन्तर्राष्ट्रीयकरण करने का प्रयास करते हैं जिससे कि उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय सहायता भी प्राप्त हो सके।

अधिकतर विद्रोही समूह छापामार युद्ध की रणनीति को ही अपनाते हैं। वो अधिकांशतः घात लगाकर या अचानक आक्रमण द्वारा अपने शत्रु को अधिकतम क्षति पहुँचाने का कार्य करते हैं। कई बार शासकीय भवनों और सम्पत्ति को नुकसान पहुँचाने का प्रयत्न भी करते हैं। ऐसा करते समय वो रेल लाइनों, स्टेशनों, डाकघरों, पुलिस थानों, स्कूलों, बसों आदि को नुकसान पहुँचाते हैं। वे प्रमुख राजनीतिक नेताओं तथा शासकीय अधिकारियों को भी अपना निशाना बनाते हैं। इन सबका उद्देश्य आतंक और भय पैदा करना होता है।

सशस्त्र विद्रोह धीरे–धीरे आतंकवाद और तानाशाही में परिवर्तित हो जाता है। अपने प्रारम्भिक चरण में विद्रोही अपने आदर्शों को राष्ट्रीय या क्षेत्रीय भावनाओं से जोड़ते हैं वे सार्वजनिक जीवन व सम्पत्ति को नुकसान पहुँचाने से बचते हैं, परन्तु जब उन्हें यह महसूस होता है कि उनकी मॉगों पर कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा है तो वे हिंसा पर उतारू हो जाते हैं। जन आतंक और हिंसा सशस्त्र विद्रोह की विकसित अवस्था है। जब आतंकवादियों को लगता है कि उनकी योजनाएं असफल हो चुकी है। ऐसी अवस्था में वे हिंसा का सहारा लेकर प्राधिकारियों और जनता में भय फैलाना चाहते हैं जिससे कि वे उनसे अपनी मांगे मनवा सके। इस प्रकार आतंकवादी एक तरफ अपने लक्ष्य और आदर्शों को प्राप्त करना चाहते हैं तो दूसरी ओर वे हिंसा का सहारा लेकर जनता को भय ग्रस्त करना चाहते हैं। व्यवहार में आतंकवादी अपने दूसरे पक्ष हिंसा पर ही अधिक

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

जोर देते हैं।[9] सीमा की दूसरी ओर या देश के अन्य भागों से लोगों का उस क्षेत्र में लगातार बढ़ते प्रवास से भी संघर्ष बढा है। उस क्षेत्र में संघर्ष को निम्न श्रेणियों में बांट सकते हैं।

- राष्ट्रीय संघर्षः अलग राष्ट्र के रूप में एक अलग होमलैंड की अवधारणा के शामिल हो जाने और उस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए संघर्ष
- जातीय संघर्ष : थोड़ी सी संख्या में कम प्रमुख जनजातीय समूहों को राजनीतिक और सांस्कृतिक रूप से वर्चस्ववाले जातीय समूहों के खिलाफ शामिल करना। असम में यह स्थानीय और प्रवासियों के बीच तनाव का रूप ले चुका है।
- उप क्षेत्रीय संघर्ष : इस आंदोलन में वे लोग शामिल हैं उप क्षेत्रीय पहचान की आकांक्षा पाले हैं। इनका ज्यादातर सीधा टकराव राज्य सरकार या स्वायत्त परिषद के साथ होता है। महत्वपूर्ण आर्थिक संसाधनों पर नियंत्रण के उद्देश्य से आपराधिक गतिविधियों को विस्तार देने वाले आपराधिक लोगों को छोड़ दिया जाए तो यह संघर्ष का एक अलग ही रूप है।

पूर्वोत्तर भारत में विद्रोह की जड़ें क्षेत्री की सामाजिक–राजनीतिक, भू–आर्थिक और ऐतिहासिक विरासत में छिपी हुई है। औपनिवेशिक काल में ब्रिटिश शासकों ने क्षेत्र के लोगों को मुख्यधारा से अलग थलग रखा। इसे उन लोगों ने क्राउन कालोनी का नाम दिया, जिसे कूपलैंड योजना कहा जाता था। इसके पीछे उद्देश्य यही था कि जरूरत के समय भारत, बर्मा और चीन के खिलाफ इसे लांच पैड के रूप में इस्तेमाल किया जाए।

इसके अलावा ब्रिटिश औपनिवेशिक नीति में अपवर्जित क्षेंत्र, आंशिक अपवर्जित क्षेत्र, अंतः रेखा नियामक आदि भी बना रखा था। इसके तहत पहाड़ और मैदान के लोगों के बीच सामाजिक और राजनीतिक आवाजाही पर रोक लगा रखी थी। लेकिन समय बीतने के साथ–साथ और आधुनिकता आने के साथ जीवनशैली और सामाजिक स्वभाव में परिवर्तन आने के अलावा राजनीतिक अवधारणा भी बदली। पहाड़ और मैदान के लोगों के बीच परस्पर अविश्वास की भावना ने जन्म लिया।

मैदान के मानते थे कि मिजो या नगा या खासी घुमंतू और असभ्य होते हैं। दूसरी ओर पहाड़ के लोग भी मैदान के लोगों को अविश्वास की नजर से देखते थे। क्योंकिं उन्हें ढकार (खासी), वैस (मिजो), मयांग (मणिपुरी) कहकर उन्हें उपेक्षा की नजर से देखा जाता था। दोनों ही तरफ के लोगों का एक दूसरे के प्रति इस रवैये ने लोगों के बीच दोस्ताना संबंधों में विष का काम किया। इसके कारण दोनों के बीच शत्रुता बढ़

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

गई। पहाड़ी घाटियों (इसे मैदान पढ़े) का विरोधाभास लोगों के रहने के भू राजनीतिक क्षेत्र पर निर्भर था। इन तिब्बतों बर्मी लोगों ने अपने जातीय और सांस्कृतिक अंतर को राष्ट्र की मुख्यधारा से जोड़ने के लिए तेज जागरूकता का दमन थामा। भौगोलिक बाधाओं, भौगोलिक अलगाव, क्षेत्र की परिधीयता, गहरी संवादहीनता, लंबे समय तक उपेक्षा, कठिनाइयों के प्रति राष्ट्र की उदासीनता, इस रणनीतिक क्षेत्र में अपने हमवतन की चिंता, अव्यावहारिक सरकारी नीतियां, जनजातीय लोकाचार की घोर उपेक्षा ने उन्हें बर्मा की शान और काचिन तथा बांग्लादेश के चिटगॉव पहाड़ी रास्ते की ओर मुड़ने के लिए मजबूर कर दिया।

दूसरी तरफ असम और त्रिपुरा में बांग्लादेश से निरंतर घुसपैठ ने वहॉ के सामाजिक ढॉचे की नींव हिलाकर रख दी। जिससे असम के लोगों के बीच एकजुटता की भावना ने जन्म निया। स्वदेशी असामिया और स्वदेशी जनजातियों के बीच भी समन्वय बढ़ा। इसने असंख्य असमियों की शिक्षा और आर्थिक आकांक्षाओं को प्रभावित किया। उनकी राजनीतिक आकांक्षा भी बढ़ी। लेकिन तमाम चीजों के प्रति उपेक्षा से उनमें अलगाववाद की भावना पनपी। यह असंतोष व्यापक स्तर पर भाषा, शिक्षा और रोजगार की नीति को लेकर था। जनसांख्यिकी विरूपण से भी यह समस्या उठ खड़ी हुई। केंद्र और राज्य सरकारों दोनों ने उनकी उपेक्षा की।

यहॉ तक छठी अनुसूची जो कि जनपद परिषद के रूप में सामने आई, उससे भी अपेक्षित लक्ष्य प्राप्त नहीं किया जा सका, क्योंकि उसे पर्याप्त अधिकार ही नहीं मिले थे। इसके बाद नगा समझौता (1960), शिलांग समझौता (1975), असम समझौता (1985), मिजोरम समझौता (1986) भारतीय राज्य और विद्रोही नेताओं के बीच हुआ। इसका उद्देश्य क्षेत्र की जनजातियों की विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान को संरक्षित करना था और क्षेत्र का तेज विकास करना था, लेकिन इनमें से किसी भी समझौते को गंभीरतापूर्वक लागू ही नहीं किया गया। इतना ही तेज मौद्रिक अर्थव्यवस्था के विकास में जनजातियों की आजीविका के प्राचीन तौर तरीके बेकार हो गए। आधुनिक अर्थव्यवस्था की दौड़ में वे काफी पीछे हो गए।[10]

इस दूर दराज के क्षेत्र में प्राचीन और अविकसित कृषि, तेजी से बढ़ती बेरोजगारी, भीषण भ्रष्टाचार, शिक्षा स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी, जरूरत से ज्यादा कीमतें और आवश्यक वस्तुओं का अभाव ने पूर्वोत्तर के लोगों को सोचने के लिए मजबूर कर दिया। यहॉ के युवा उग्रवादी गतिविधियों में लिप्त होने लगे। पूर्वोत्तर भारत के तमाम राज्यों में विद्रोह के ठिकाने बना लिए। पूर्वोत्तर क्षेत्र में उग्रपंथियों के तमाम ठिकाने राज्य की सीमा से परे भी चले गए। उन्हें बांग्लादेश और पाकिस्तान से बढ़ावा मिला। उन्हें बांग्लादेशी

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

या पाकिस्तान आई.एस.आई. ने प्रशिक्षित करना शुरू कर दिया। बांग्लादेश के जन्म तक नगा और मिजो विद्रोही वित्तीय और सैन्य सहायता के लिए नियमित रूप से ढ़ाका का दौरा करते थे। आज भी बांग्लादेश की सेना चिटगॉव पहाड़ी क्षेत्र में उन्हें प्रशिक्षण देती है। जबकि गंगा जल बंटवारा होने के बाद भी बांग्लादेश अपनी हरकतों से बाज नहीं आ रहा है।[11]

भौगोलिक स्थितियों और जातीय एकरूपता का लाभ होकर बांग्लादेश तमाम उग्रवादी समूहों को अपने यहॉ के जंगलों में संरक्षण दे रखा है। यूनाइटेड लिबरेशन फ्रंट आफ असम (यू.एल.एफ.ए.), पीपल्स लिबरेशन आर्मी (पी.एल.ए.), नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल आफ नागालैंड (एन.एस.सी.एन.), मेघालय यूनाइटेड लिबरेशन आर्मी (एम.यू.एल.ए.), नेशनल डेमोक्रेटिक फ्रंट ऑफ बोडोलैंड, मिजो नेशनल फ्रंट आदि को इसने संरक्षण दे रखा है। इसी तरह कुछ साल पहले एन.एस.सी.एन. अध्यक्ष एस.एस. खापलैंग और नेशनल फ्रंट अध्यक्ष जान्ह खाउ किन थैंग के बीच व्यापक विद्रोह के लिए समझौता हुआ था। इसमें भारत बर्मा क्षेत्र में सक्रिय सहयोग काचिन इंडेपेंडेंट आर्मी का मिला था। इसी तरह क्षेत्रीय आतंकी ठिकानों में मजबूत गठजोड़ सामने आया है।

कुछ साल पहले एन.एस.सी.एन. (के.), उल्फा और यू.एल.एल.एफ ने इंडो बर्मा रिवोल्यूशनरी फ्रंट (आई.बी.आर.एफ.) का गठन किया था। इसका उद्देश्य भारतीय बलों के साथ संयुक्त रूप से कारवाई करनी थी, लेकिन आई.बी.आर.एफ. का प्रभाव कम होने से वे अपने मकसद में सफल नहीं रहे। विद्रोहियों की शीर्ष समिति में अप्रैल 2003 में बदलाव किया गया, जब आई.बी.आर.एफ. का नया नाम बदल कर इंडो बर्मा लिबरेशन फ्रंट (आई.बी.एल.एफ.) कर दिया गया। भारत बर्मा सीमा क्षेत्र का रणनीतिक महत्व है। यह गुरिल्ला युद्ध के लिए बहुत मुफीद दे। मौजूदा जातीय समानताओं के कारण वे आसानी से सीमा पार कर जाते हैं। और अंडरग्राउंड आंदोलन के लंबे अनुभव ने एन. एस.सी.एन. (आई–एम.) को इतना ताकतवर बना दिया है कि आज के समय में क्षेत्र में संचालित सभी विद्रोही गतिविधियों का वह केंद्र बिंदु हो गया है। मेघालय यूनाइटेड लिबरेशन आर्मी (एम.यू.एल.ए.) पीपल लिबरेशन आर्मी (पी.एल.ए.), आल त्रिपुरा ट्राइबल फोर्स (ए.टी.टी.एफ.), नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल आफ नगालैंड (एन.एस.सी.एन.) मुइवा गुट और मिजो नेशनल फ्रंट (एम.एन.एफ.) की संयुक्त बैठक ढाका में हुई थी। एम.यू.एल.ए. मेघालय से सभी गैर जनजातियों को हटाना चाहता है। उसने मिमेनांगि, जैनतियापुर (सिलहट) के पास सेंक्चुरी और जोएदेबपुर (ढ़ाका) में निलफामेरी आर्मी कैंप स्थापित किया है। पी.एल.ए., मणिपुर की स्वतंत्रता के लिए लड़ रहा है। इसके प्रमुख ठिकाने छोटाधमाई, नया पट्टन, लोंगना, रामनगर, अंबारखाना, आदमपुर, सोनरूप टी इस्टेट और

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

भानुगाछ (सभी मौलाबी बाजार, सिलहट जिला) में है। इसी तरह ए.टी.टी.एफ. त्रिपुरा में जनजातियों की स्वायत्तता के लिए लड़ रहा है।[12] इसकी गतिविधियां चिटगांव हिल क्षेत्र रेजा, रसालांग, मियानी रिजर्व फारेस्ट जोपई और थैंगनैंग से संचालित होती हैं। एन.एस. सी.एन. की मुइवा नेता गुट चिटगॉव हिल क्षेत्र के बंदरबन में सलोपी और चचेंग सेंक्चुरी से अपनी गतिविधियां संचालित करता है। एल.पियांगगेस के नेतृत्व वाले एम.एन.एफ. का एक असंतुष्ट गुट मिजोरम में विद्रोह को पुनर्जीवित करने का प्रयास कर रहा है। इस गुट का कैंप चिटगांव हिल क्षेत्र के अलडिडाम क्षेत्र में है। उल्फा जो कि सबसे खतरनाक आतंकी समूह माना जाता है। इसने छह कैंप स्थापित किए हैं, जो मिमेनसिंग, जैनतियापुर, जोएदेबपुर, आदमपुर, भानुगढ़ और श्रीमंगल में है।

बोडो सिक्योरिटी फोर्स निलफारमरी और गेबंधा आर्मी कैंपस से जुड़ा है। खुफिया रिपोर्टों के मुताबिक ऐसा पता चला है कि मुस्लिम यूनाइटेड लिबरेशन टाइगर्स और असम के बड़ी संख्या में मुस्लिम वालंटियर्स ने बांग्लादेश सीमा पार कर लिया है। प्रशिक्षण और विनाशकारी गतिविधियों के लिए इस्लामिक देशों द्वारा इन्हें फाइनेंस भी किया जा रहा है। दि इस्लामिक रिवोल्यूशनरी फ्रंट (आई.आर.एफ.), अन्य मुस्लिम आतंकी समूह जिसमें मणिपुर और बांग्लादेश के पांगला मुस्लिम हैं जो नार्थ कूचबिहार और असम के रिहबकंज जिले में बसे हैं, सक्रिय हैं। जिन्हें पाकिस्तान की खुफिया इकाई आई.एस.आई. संरक्षण दे रही है। ये बांग्लादेश से अपनी गतिविधियां चला रही हैं।

इन सबके अलावा क्षेत्र में तेजी से उग्रवादी आंदोलन के लिए सामाजिक आर्थिक और भू–राजनीतिक तत्व जिम्मेदार हैं। सत्ता में क्षेत्रीय संभ्रांत वर्ग के नेता (राजनीतिज्ञ) और आतंकवादियों में जबर्दस्त गठजोड़ है। ये सत्ताधारी पार्टियां क्षेत्र को अशांत रखकर न केवल अपनी स्थिति मजबूत करती हैं, बल्कि राजनीतिक सुरक्षा भी इसके माध्यम से हासिल होता है। ध्यान रहे नब्बे के दशक की शुरूआत में समझौते के लिए उल्फा और केंद्र सरकार के बीच कई दौर की वार्ता हो चुकी थी, मामला भी लगभग निपटने वाला था, लेकिन समय में सत्ताधारी पार्टी के मुखिया हितेश्वर सैकिया ने उसमें पलीता लगा दिया था। इस तरह सत्ताधारी पार्टियों के नेता वहॉ समस्या का समाधान चाहते ही नहीं थे, बल्कि फूट डालो और राज करो की नीति अपना कर केवल अपना स्वार्थ पूरा कर रहे हैं।[13]

पूर्वोत्तर राज्यो में सुरक्षा की स्थिति, जो नृजातीय समूहों और विभिन्न आतंकवादी संगठनों की भिन्न–भिन्न प्रकार की मांगों के कारण काफी समय से जटिल रही है, में वर्ष 2017 में काफी सुधार हुआ। इस क्षेत्र में वर्ष 2016 की तुलना में विद्रोह संबंधी घटनाओं में 36 प्रतिशत से अधिक की कमी (2016–484, 2017–308) आई। वर्ष 1997

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

के बाद से वर्ष 2017 में विद्रोह संबंधी घटनाओं की संख्या सबसे कम देखी गई। इसी प्रकार, इस क्षेत्र में सुरक्षा बलों के हताहत होने की संख्या 17 (2016) से कम होकर 37 (2017) हो गई। इस क्षेत्र में वर्ष 2017 में विद्रोह–रोधी अभियानों के परिणामस्वरूप 57 उग्रवादियों को ढेर किया गया, 995 उग्रवादियों को गिरफ्तार किया गया और 432 हथियार बरामद किए गए। अपहरण की घटनाओं की संख्या में 40 प्रतिशत (2016–168, 2017–102) की कमी आई। वर्ष 2013 की तुलना में वर्ष 2017 में विद्रोह की घटनाओं में 58 प्रतिशत नागरिकों के हताहत होने में 66 प्रतिशत सुरक्षा बलों के हताहत होने में 34 प्रतिशत और अपहरण की घटनाओं में 67 प्रतिशत की कमी आई। विगत छह वर्षों के दौरान पूर्वोत्तर क्षेत्र में हिंसा की स्थिति नीचे दी गई है–

वर्ष 2012 से पूर्वोत्तर क्षेत्र में सुरक्षा की स्थिति[14]

वर्ष	घटनाएं	गिरफ्तार किए गए उग्रवादी	मरे गए उग्रवादी	बरामद किए गए/समर्पण किए गए हथियार	प्राण की आहुति देने वाले सुरक्षा बल क्रमिक	मारे गए आम नागरिक	आत्मसमर्पण करने वाले उग्रवादी	अपहृत व्यक्ति
2012	1025	2145	222	1856	14	97	1195	329
2013	732	1712	138	1596	18	107	640	307
2014	824	1934	181	1255	20	212	965	369
2015	574	1900	149	897	46	46	143	267
2016	484	1202	87	698	17	48	267	168
2017	308	995	57	432	12	37	130	102

वर्ष 2017 में सिक्किम, मिजोरम और त्रिपुरा राज्यों में विद्रोह संबंधी हिंसा की कोई घटना नहीं देखी गई। वर्ष 2016 की तुलना में वर्ष 2017 में असम (56 प्रतिशत),

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

नागालैण्ड (67 प्रतिशत), मणिपुर (28 प्रतिशत) एवं मेघालय (59 प्रतिशत) में विद्रोह की घटनाओं की संख्या में कमी आई। वर्ष 2017 में अरूणाचल प्रदेश में हिंसा घटनाक्रम में वृद्धि हुई।

पूर्वोत्तर में उग्रवाद से निपटने के लिए सरकार द्वारा उठाए गए कदम[15]

अलग–अलग जातीय दलों और क्षेत्र में परिणामी जटिल परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, केन्द्र सरकार ऐसे दलों के साथ वार्ता/बातचीत करने के लिए एक नीति का अनुसरण कर रही है, जो हिंसा छोड़ने तथा हथियार त्यागने को तैयार हैं और भारत के संविधान के ढॉचे के अंदर शांतिपूर्ण तरीके से अपनी समस्याओं के समाधान की मांग करते हैं। इसके परिणामस्वरूप अनेक संगठन सरकार से वार्ता करने के लिए सामने आए हैं और कार्रवाई स्थगन (एस.ओ.ओ.) समझौते किए हैं, कुछ संगठनों ने समझौता ज्ञापन (एम.ओ.एस.) पर हस्ताक्षर किए हैं और कुछ समूहों ने अपना विघटन कर दिया है। जिन संगठनों ने वार्ता नहीं की है, उन पर विद्रोह–रोधी कार्यवाइयों के माध्यम से केंन्द्रीय सशस्त्र पुलिस बलों, सैन्य बलों और राज्य पुलिस द्वारा कारवाई की जा रही है।

भारत सरकार, राज्य सरकारों, सुरक्षा बलों और संबंधित संगठनों के प्रतिनिधियों वाले संयुक्त निगरानी समूहों द्वारा इन विद्रोही दलों के सहमत बुहनयादी नियमों के कार्यान्वयन की समय–समय पर समीक्षा की जाती है।

पूर्वोत्तर राज्यों के विद्रोही समूहों द्वारा अपहरण, जबरन धन वसूली, हत्या, सशस्त्र काडरों की भर्ती और प्रशिक्षण तथा विस्फोट करने और अवसंरचनात्मक संस्थापनाओं पर हमलों जैसी अवैध और गैर–कानूनी गतिविधियों को नियंत्रित करने के लिए, विधि–विरुद्ध क्रियाकलापों (निवारण) अधिनियम, 1967 के तहत 16 विद्रोही संगठनों को ''विधि–विरुद्ध संगठन'' और ''आतंकवादी संगठन'' के रूप में घोषित किया गया है।

पूर्वोत्तर में सशस्त्र विद्रोह से निपटने के लिए सम्पूर्ण मणिपुर राज्य (इम्फाल नगर पालिका क्षेत्र के अलावा), नागालैंड और असम 'सशस्त्र बल विशेष शक्तियां अधिनियम' (ए.एफ.एस.पी.ए.) के अधीन हैं। अरूणाचल प्रदेश में असम के साथ साझा सीमा वाले 11 पुलिस स्टेशन और तीन जिले, तिरप, चांगलांग तथा लांगंडिंग इस अधिनियम के तहत ''अशांत क्षेत्र'' है। मेघालय में, असम के साथ साझा सीमा वाले 10 किमी. के हिस्से को इस अधिनियम के तहत 'अशांत क्षेत्र'' घोषित किया गया है। मणिपुर और असम को 'अशांत क्षेत्र'' के रूप में घोषित किए जाने की अधिसूचनाए संबंधित राज्य सरकारों द्वारा निकाली गई हैं। 01 जनवरी 2017 की पिछली अधिसूचना में, मेघालय में ए.एफ.एस.पी. ए. के अधीन क्षेत्रों में, असम–मेघालय सीमा पर 20 किलोमीटर क्षेत्र को घटाकर 10 किलोमीटर कर दिया गया और अरूणाचल प्रदेश में तिरप, चांगलांग एवं लांगडिंग जिलों

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

के अतिरिक्त अरूणाचल प्रदेश–असम सीमा पर 14 पुलिस स्टेशन/पुलिस चौकी क्षेत्र को घटाकर 11 पुलिस स्टेशन/चौकी क्षेत्र कर दिया गया है।

केन्द्र सरकार ने विद्रोह रोधी कार्रवाई करनें और असुरक्षित संस्थानों तथा संस्थापनाओं को सुरक्षा उपलब्ध कराने में राज्य प्राधिकारियों की मदद के लिए केन्द्रीय सशस्त्र पुलिस बल (सी.ए.पी.एफ.) तैनात किए हैं। नेपाल, भूटान, चीन, बांग्लादेश, और म्यांमार के साथ लगी अंतरराष्ट्रीय सीमाओं पर सीमा रक्षा के कर्तव्य के लिए केद्रिय सशस्त्र पुलिस बलों की 413 कंपनियां तैनात की गई है। पूर्वोत्तर राज्यों में आंतरिक सुरक्षा और विद्रोह–रोधी अभियानों के लिए सी.ए.पी.एफ. की 469 कंपनियों और 18 कोबरा दलों को तैनात किया गया है।

भारत सरकार उग्रवाद से निपटने के लिए राज्य सरकारों के पुलिस बलों का संवर्धन और उन्नयन करने के लिए उनकी मदद कर रही है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए, सिक्किम सहित पूर्वोत्तर राज्यों हेतु 51 इंडिया रिजर्व बटालियनों (आई. आर. बटालियनों) की मंजूरी प्रदान की गई है। इनमें असम के लिए 09, त्रिपुरा के लिए 09, मणिपुर के लिए 09, नागालैंड के लिए 07, अरूणाचल प्रदेश और मिजोरम में प्रत्येक के लिए पॉच–पॉच, मेघालय के लिए 04 तथा सिक्किम के लिए 03 बटालियनें शामिल हैं।

पूर्वोत्तर राज्यों में षांति प्रक्रिया की स्थिति[16]

1– असम

- यू.पी.डी.एस. (यूनाइटेड पीपुल्स डेमोक्रेटिक सालिडैरिटी) ने 25 नवम्बर 2011 को समझौता ज्ञापन (एमओएस) पर हस्ताक्षरी किए और बाद में अपना विघटन कर लिया।
- डी.एच.डी. (दीमा हलम दओगाह) ने 01 अक्टूबर 2012 को समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए और बाद में अपना विघटन कर लिया।
- उल्फा (यूनाइटेड लिबरेशन फ्रंट ऑफ असम) से वार्ता चल रही है। कार्रवाई स्थगन समझौता 03 सितम्बर 2011 से वैध है और अनिश्चित समय तक जारी है।
- एन.डी.एफ.बी. (पी.) (नेशनल डेमोक्रेटिक फ्रंट ऑफ बोडोलैंड) (प्रगतिशील) ने 01 जून 2005 को कार्रवाई स्थगन समझौते पर हस्ताक्षर किए और वह वर्तमान में 30 जून 2018 तक वैध है।

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

- एन.डी.एफ.बी. से अलग हुए समूह एन.डी.एफ.बी. (आर.डी.) नेशनल डेमोक्रेटिक फ्रंट आफ बोडोलैंड (रंजन डाइमेरी) ने 29 नवम्बर 2013 को कारवाई स्थगन समझौते पर हस्ताक्षर किए थे। कार्रवाई स्थगन 30 जून 2018 तक वैध है।
- कार्बी लांगरी एनसी हिल्स लिबरेशन, फ्रंट (के.एल.एन.एल.एफ.) को इस समय 11 फरवरी 2010 से असम सरकार के साथ कार्रवाई स्थगन समझौता है जो 30 अप्रैल 2018 तक वैध है।
- पॉच आदिवासी संगठनों सहित 9 उग्रवादी संगठनों ने 24 जनवरी 2012 को आत्म समर्पण किया।

2– मेघालय

- भारत सरकार मेघालय राज्य सरकार और ए.एन.वी.सी. (अचिक नेशनल वालंटियर काउंसिल) तथा ए.एन.वी.सी./बी. के बीच 24 सितम्बर 2014 को समझौता ज्ञापन (एम.ओ.एस.) पर हस्ताक्षर किए गए थे। ए.एन.वी.सी. ने 15 दिसम्बर 2014 को अपना विघटन कर लिया।

3– मणिपुर

- दो समूहों (यूनाइटेड प्रोग्रेसिव फ्रंट यू.पी.एफ.–8 और कुकी नेशनल आर्गेनाइजेशन के.एन.ओ.–15) के तहत कुल 23 भूमिगत संगठन इस समय सरकार के साथ अगस्त, 2008 से कार्रवाई स्थगन के अधीन हैं। के.एन.ओ. और यू.पी.एफ. के साथ कारवाई स्थगन करार 31 अगस्त 2018 तक वैध है। इन समूहों के साथ राजनीतिक वार्ता जून 2016 में शुरू हुई।

4– नागालैंड

- नेशनल सोसलिस्ट काउंसिल ऑफ नागालैंड (नेयोपाओ कोन्याक किटोवी) और एन.एस.सी.एन. (रिफार्मेशन) के साथ हस्ताक्षरित युद्ध विराम करार को 27 अप्रैल 2018 तक आगे बढ़ा दिया गया है। एन.एस.सी.एन. (इसाक मूइवा) ने अनिश्चित अवधि के लिए युद्ध–विराम करार पर हस्ताक्षर किए हैं। एन. एस.सी.एन. (आई–एम.) के साथ 03 अगस्त 2015 को एक ढांचागत करार पर हस्ताक्षर किए गए थे।

पूर्वोत्तर में उग्रवादियों के आत्मसमर्पण-सह पुनर्वास संबंधी योजना[17]

गृह मंत्रालय भ्रमित युवाओं और उन खूंखार उग्रवादियों को, जो उग्रवाद में भटक गए हैं और बाद में उसमें फंसा हुआ पा रहे हैं, उससे छुटकारा दिलाने के लिए 01 जनवरी 1998 से पूर्वोत्तर में उग्रवादियों के आत्मसमर्पण–सह–पुनर्वास संबंधी एक योजना

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

कार्यान्वित कर रहा है। इस योजना में यह भी सुनिश्चित किया जाता है कि आत्मसमर्पण करने वाले उग्रवादी दोबारा उग्रवाद में शामिल होने के लिए आकृष्ट न हों। इस योजना में संशोधन किया गया है और यह छः पूर्वोत्तर राज्यों (सिक्किम और मिजोरम को छोड़कर) के लिए 01 अप्रैल 2018 से प्रभावी होगी। संशोधित नीति के अन्तर्गत आत्मसमर्पणकर्ताओं को निम्नलिखित लाभ प्रदान किए जाऐगे।

1. प्रत्येक आत्मसर्मणकर्ता को 4 लाख रूपए कर तत्काल अनुदान, जिसे 3 वर्षों की अवधि के लिए सावधि जमा के रूप में आत्मसमर्पणकर्ता के नाम से बैंक में रखा जाएगा। इस धनराशि का प्रयोग आत्मसमर्पणकर्ता द्वारा स्वरोजगार हेतु बैंक से ऋण हासिल करते समय मार्जिन मनी के रूप में किया जा सकता है।
2. तीन वर्ष का अवधि के लिए प्रत्येक आत्मसमपर्णकर्ता को 6,000 रू. प्रतिमाह वजीफे का भुगतान।
3. उग्रवादियों द्वारा आत्मसमर्पित हथियारों/गोलाबारूद के लिए विक्रय प्रोत्साहन।
4. पुनर्वास कैंपों के निर्माण के लिए निधियां।
5. पूर्वोत्तर राज्यों को आत्मसमर्पणकर्ताओं के पुनर्वास पर हुए कुल व्यय के 90 प्रतिशत की प्रतिपूति एसआरई स्कीम के तहत की जाएगी।

निष्कर्ष

इन सभी तथ्यों के अध्ययन से स्पष्ट है कि पूर्वोत्तर भारत में उग्रवाद का प्रमुख कारण क्षेत्र की नृजातीय समस्याए है जिनका उचित समाधान ढंढ़ना आवश्यक है। अतः यह आवश्यक है कि विकास, राष्ट्रीय सुरक्षा, जनहित, राजनय, विदेशनीति तथा आन्तरिक सुरक्षा नीतियों के मध्य समुचित समन्वय स्थापित हो। वर्तमान सरकार इस दिशा में तेजी से प्रयास कर रही है, यही कारण कि पूर्वोत्तर में उग्रवाद की धार कुन्द पड़ रही है। पूर्वोत्तर के सामाजिक, सांस्कृतिक संसाधनों के समुचित उपयोग सांस्कृतिक नीति, शिक्षा, बेरोजगारी की समाप्ति और सामुदायिकता की भावना को शक्तिशाली बनाने के लिए किए जा रहे प्रयासों से भी उग्रवाद का प्रभाव कम दिखाई दे रहा है। लेकिन भविष्य में भी इसी तरह की प्रगति बनी रहेगी यह कहना अभी सही नही है। इसलिए आवश्यक है कि सरकार जिस प्रकार के कार्यों को कर रही है उसमें अधिक तीव्रता लाना आवश्यक है जिससे पूर्वोत्तर भारत से उग्रवाद को सदा के लिए समाप्त किया जा सके।

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

संदर्भ सूची

1. डोना गांगुली, ''भूगोल, राजनीति और आतंक का खेल पूर्वोत्तर भारत का मामला'',वर्ल्ड फोकस, मई 2016, पृष्ठ–95
2. गृह मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट, वर्ष 2017–18, पृष्ठ–21
3. टी0 के0 भट्टाचार्य जी ''द इंटीग्रेशन इन नार्थ–ईस्ट ए लैफ्ट व्यू'' बी0 सी0 भुअन (एडीटेड) ''पालिटिकल डेवलपमेंट आफ द नार्थ–ईस्ट, पार्ट–II'' न्यू देलही, ऑसंस पब्लिकेशन, 1992, पेज–133
4. सुबीर भौमिक ''ट्रबल्ड पेरीफेरी : क्राइसिस ऑफ इण्डियाज नार्थ ईस्ट'' सेज पब्लिकेशन इण्डिया प्राइवेट लिमिटेड, न्यू देलही, 2009, पेज–88
5. टी0 के0 भट्टाचार्य जी, पूर्वोद्धृत, पेज–134
6. सुबीर भौमिक, पूर्वोद्धृत, पेज–89
7. डॉ0 चन्द्रिका सिंह ''नार्थ–ईस्ट इण्डिया पालिटिक्स एण्ड इंसरजेंसी'' मानस पब्लिकेशन, न्यू देलही, 2009, पेज–29
8. सुबीर भौमिक, पूर्वोद्धृत, पेज–89
9. डॉ0 राजेश कुमार सिंह तथा चन्द्रशेखर सिंह ''पूर्वोत्तर अलगावाद एवं आतंकवाद की समस्या तथा समाधान'' हरी शरण तथा विनोद कुमार सिंह (सम्पा0) ''भारतीय सुरक्षा साम्प्रतिक चुनौतियॉ'' मोहित पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2014, पृष्ठ–17
10. डोना गांगुली, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ–95
11. वही, पृष्ठ–96
12. वही, पृष्ठ–97
13. वही, पृष्ठ–98
14. गृह मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट, वर्ष 2017–18, पृष्ठ–21
15. वही, पृष्ठ संख्या– 22
16. वही, पृष्ठ संख्या– 23
17. वही, पृष्ठ संख्या– 24

WRITERS VIEW
An Interdisciplinary, bilingual, bi-annual, a peer review or refereed International Journal
Vol. 3 No. 1&2 APRIL & OCTOBER Year 2018

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

17

दक्षिण एशिया का भू-स्त्रातजिक तथा सामरिक महत्व

डॉ. शुभ्रांशु शेखर सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर, रक्षा एवं स्त्रातजिक अध्ययन विभाग,
श्री मुरली मनोहर टाउन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बलिया

अपनी भौगोलिक, सांस्कृतिक, सामरिक व राजनैतिक विशिष्टताओं के कारण दक्षिण एशिया प्राचीन काल से ही विदेशी शक्तियों का आकर्षण–क्षेत्र रहा है। जहां एक ओर हिमालय की विशाल पर्वत श्रेणियां इस क्षेत्र को उत्तर, उत्तर–पश्चिम व उत्तर–पूर्व में एशिया के अन्य क्षेत्रों से पृथक करती हैं वहीं ''सातों समुद्रो की कुंजी'' के रूप में सुविख्यात हिंद महासागर इस क्षेत्र की व्यापारिक व सामरिक महत्ता में निर्णायक भूमिका अदा करता है। दक्षिण से उत्तर फैला आसेतु हिमालय प्रदेश हिमालय की गोद से प्रारंभ होकर हिंद महासागर तक तिकोने रूप में धंसता चला गया है और पूर्वी तथा पश्चिमी पार्श्वों पर क्रमशः बंगाल की खाड़ी व अरब सागर फैले हुए हैं। हिमालय की पूर्वांचल श्रेणियों के पार म्यांमार के अराकान योमा द्वारा यह क्षेत्र, दक्षिण पूर्वी एशिया से तथा समुद्र में निकोबार द्वीप द्वारा सामुद्रिक दक्षिण पूर्व एशिया से पृथक होता है। हिमालय की पर्वतमालाएं तथा हिंद महासागरीय समुद्रोन्मुखता इस क्षेत्र के भौगोलिक–सांस्कृतिक विशिष्टता के प्रमुख कारक है। इस भौगोलिक स्थिति ने इसके इतिहास, संस्कृति और भू–राजनीतिक परिवेश को प्रचुर रूप से प्रभावित किया है। द्वितीय महायुद्ध तथा सन् 1941–45 के जापानी आक्रमण के पश्चात दक्षिण पूर्वी एशियाई कमाण्ड (SEAC) की स्थापना की गई। फलतः दक्षिण एशिया में भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, मालदीव गणतन्त्र तथा हिमालय के राज्य नेपाल व भूटान सम्मिलित हो गये। गिन्सवर्ग द्वारा प्रतिपादित एशिया के पॉच परिमण्डलों में दक्षिणी एशिया एक है।[1] वर्तमान समय में अफगानिस्तान का सार्क संगठन का सदस्य बनने के कारण अफगानिस्तान को भी इस क्षेत्र के अन्तर्गत माना जाने लगा है। साथ ही कुछ विद्वान म्यांमार को भी इसी क्षेत्र का अंग समझते है। इस परिमण्डल का विस्तार 4^0 उत्तरी अक्षांश से $37^0 6'$ उत्तर तथा 61^0 पूरब– 97^0 20′ पूर्वी 47′′ देशान्तर के मध्य स्थित है इस क्षेत्र का लगभग कुल क्षेत्रफल 44896611 वर्ग किलोमीटर है। इस भूखण्ड की बाध्य प्राकृतिक सीमा, सांस्कृतिक एकता तथा शक्ति संतुलन की क्षमता आज भी अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में अपना विशेष महत्व रखती है।[2]

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

जिसका अपना इतिहास और अपना भूगोल हो और जिसमें एक पास आने और साथ रहने की आंकांक्षा हो उसे क्षेत्र कहा कहा जाता है। रसेट के अनुसार एकरूपता अन्तनिर्भरता अस्थाई रूप से एक दूसरे का विरोध भी करते हो, जो सत्ता पर प्रभावी नियंत्रण रखे हुए है और जिसमें शक्ति का विकेन्द्रकरण हो। उनके अनुसार ऐसे क्षेत्र वे सामान्य और भौगोलिक क्षेत्र है जिनमें सामाजिक और आर्थिक विकास की योजनाए बनाई जाती हो और उनको कियान्वित किया जाता हो।[3] यदि हम सम्पूर्ण विश्व को एक इकाई मानकर अध्ययन करें तो क्षेत्र एक उप–क्षेत्र होगा। इस सब सिस्टम के भीतर स्थानघात प्रतिघात एक दूसरे को प्रभावित करने के प्रयास चलते रहेंगे और विश्व राजनीति इस सब–सिस्टम को प्रभावित करने या नियंत्रित करने का प्रयास करेगी।[4] डी. सी. हैलमान के अनुसार उपक्षेत्र मूल क्षेत्रों का एक सम्बन्ध है जो नियमित रूप से एक–दूसरे को प्रभावित करते रहते है जिनमें यह ज्ञान होता है कि वे एक क्षेत्र के है[5] माइर्कल ब्रेकर किलयोनार्ट बाइंडर लुई जे. केन्यरी के अनुसार विश्व राजनीति में बड़ें राष्ट्रों का वर्चस्व रहता है। ये बड़ी प्रमुख की प्रणाली स्थापित करती है। अन्य छोटे राष्ट्र जो इन बड़े राष्ट्रों के अनुसार अपनी विदेश नीतियॉ स्थापित करते है अधीनस्थ प्रणाली की स्थापना करते है। ये अधीनस्थ प्रणालियॉ जातिगत, भाषागत, सांस्कृतिक, सामाजिक और ऐतिहासिक समानताओं से जुड़े होते है।[6] माइकेल ब्रेकर के अनुसार दक्षिण और दक्षिण पूर्व एशिया एक राजनैतिक और भौगोलिक क्षेत्र है। यह एक भौगोलिक और राजनैतिक विचार है।[7] सम्पूर्ण दक्षिण एशिया सैनिक और सुरक्षा की दृष्टि से एक है। यदि यह पूरा क्षेत्र अपना सुरक्षा संगठन को एक विशेष स्वरूप न दे तो यह क्षेत्र आक्रमणकारियो का अपनी भू–स्त्रातजिक महत्ता के कारण शिकार हो सकता है।

यह क्षेत्र भौगोलिक, आर्थिक, सांस्कृतिक व राजनीतिक विविधाओं से परिपूर्ण है। दक्षिण एशिया के केन्द्र में स्थित भारत के जम्मू–कश्मीर राज्य में पाकिस्तान, रूस, (अब ताजिकिस्तान) चीन व अफगानिस्तान की अंतर्राष्ट्रीय सीमाएं मिलने के कारण सामरिक दृष्टि से यह (दक्षिण एशिया) सर्वाधिक संवेदनशील क्षेत्र है। भारत के उत्तर में हिमालयी राज्य के रूप में विख्यात नेपाल व भूटान स्थित है। जिनमें भूटान तो पूर्णतः दुर्गम पहाड़ी क्षेत्र है तथा यही पर डोकलाम त्रि–जक्शन स्थित है। नेपाल के दक्षिणी भाग का तराई क्षेत्र भारत के विशाल मैदान का ही अंश है। 1947 में भारत से ही पृथक हुई राजनैतिक ईकाइयों के रूप में पश्चिम में पाकिस्तान व पूर्व में बांग्लादेश स्थित है। भारत व पाकिस्तान दोनों की अधिकांश आबादी विस्तृत मैदानी भागों में मिलती है। जबकि बांग्लादेश तो पूर्णतः नदियों से आच्छादित है। श्रीलंका का अधिकांश क्षेत्र मैदानी है उसके दक्षिण मध्य भाग में कृषि की जाती है। हिमालय की गोद में स्थित राज्य अधिकांशतः पहाड़ी, दुर्गम,

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

वनाच्छादित व कृषि के लिए अनुपयुक्त हैं जबकि पाकिस्तान का अधिकांश क्षेत्र पहाड़ी व पर्वतीय, दुर्गम व कृषि के लिए अनुपयुक्त तथा अधिकांशतः मरू है किंतु बांग्लादेश का अधिकांश क्षेत्र उपजाऊ है। इसी तरह 3200 किलोमीटर चौड़े में विस्तृत भारत क्षेत्रफल की दृष्टि से विश्व में सातवां, जनसंख्या की दृष्टि से द्वितीय तथा कृषि की दृष्टि से तृतीय स्थान रखता है। प्राकृतिक, आर्थिक सामाजिक, धार्मिक व सांस्कृतिक दृष्टि से भारत दक्षिण एशिया में अद्‌भुत स्थान रखता है।

दक्षिण एशिया क्षेत्र में प्रकृति ने आधुनिक औद्योगिककीकरण हेतु अपेक्षित कृषि, पशु–प्राप्त व कच्चे पदार्थो के अतिरिक्त लोहा, कोयला, अभ्रक व मैगनीज आदि खनिज–पदार्थो को उपलब्ध तो कराया ही है साथ ही रेल, सडक, नदी मार्ग, समुद्री मार्गो व बंदरगाहों की उपलब्धता एवं सघन जनसंख्या के कारण इसे विश्व के बड़े बाजार का दर्जा दिया है। यह औद्योगिक इकाई संबद्ध रूप से सभी संसाधनों व यातायात सुविधा की दृष्टि से आत्मनिर्भर है फिर भी विभिन्न राजनैतिक ईकाइयों के पारस्परिक विवाद इस क्षेत्र के विकास में बाधक बने हुए हैं। सांस्कृतिक रूप से संपूर्ण क्षेत्र सुसंबद्ध है तथा पाकिस्तान, नेपाल, बांग्लादेश व भूटान आदि देशों की मुस्लिम व बौद्ध–ईसाई जनता भारतीय रीति–रिवाज, जीवन–वृत्त व समन्वयवादी दर्शन से काफी हद तक प्रभावित हैं। भाषा, धर्म व सामाजिक मान्यताओं आदि की दृष्टि से भी दक्षिण एशिया के सभी देशों में पारस्परिक संबद्धता दिखाई पड़ती है।

भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश में संसाधन–प्राकृतिक, खनिज, कृषि अधिक है इनका अन्दरूनी बाजार भी विशाल है इसलिए उनके उत्पादित माल का एक बड़ा हिस्सा देश के भीतर ही खप जाता है और वस्तुओं को सीमित मात्रा में निर्यात न कर सकने पर भी उनके सकल घरेलू उत्पाद पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। किन्तु श्रीलंका, नेपाल, भूटान, मालदीव, अफगानिस्तान, विशेषकर भूटान और मालदीव पर यह बात लागू नही होती। यदि वे आवश्यकता से अधिक उत्पादन करें तो वे इस माल को बेच भी नहीं पाते इससे उनका सेल घरेलू उत्पाद प्रभावित होता है। वैसे भी विश्व व्यापार में दक्षिण एशिया क्षेत्र का स्थान बहुत नीचे है और वह विश्व व्यापार का मात्र एक प्रतिशत है।[8]

दक्षिण एशिया की तरह किसी भी क्षेत्र के क्षेत्रीय सुरक्षा परिदृश्य में उस क्षेत्र के राष्ट्रों से सम्बन्धों की प्रकृति एवं स्थिति का बड़ा महत्व होता है। यदि सम्बन्ध मधुर और परस्पर मैत्रीपूर्ण है तो सुरक्षा परिदृश्य शान्त एवं स्थायी होता है। परन्तु यदि सम्बन्ध तनावपूर्ण एवं शत्रुतापूर्ण है तो सुरक्षा परिदृश्य स्त्रातेजिक एवं सामरिक आयामों की दृष्टि से संघर्ष पूर्ण एवं अस्थिर होता है। भारत सदा से ही अपने पड़ोसी राष्ट्रों के साथ मैत्रीपूर्ण एवं सहयोग पूर्ण सम्बन्धों की स्थापना एवं प्रगति में विश्वास रखता है क्योंकि इससे रक्षा

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

एवं सुरक्षा सम्बन्धी चुनौतियों को कम करने का अवसर प्राप्त होता है तथा राजनीतिक एवं अन्य सम्बन्धों को मजबूत करने का काल शुरू होता है। वर्तमान समय में भारत, दक्षिण एशिया में सहयोग बढ़ाने तथा तनावों को कम करने का प्रयास कर रहा है तथा इसके लिए विभिन्न प्रकार के क्षेत्रों की खोज की जा रही है। जिनमें पड़ोसी राज्यों के साथ समान उभनिष्ठ एवं परस्पर हितों का सृजन किया जा सके जिससे क्षेत्रीय स्तर पर एक ऐसे वातावरण का निर्माण किया जा सके जो दक्षिण एशिया क्षेत्र को आर्थिक एवं सैनिक दृष्टि से शक्तिशाली क्षेत्र बनाने में सहायक एवं अनुकूल हो सके। परन्तु विगत वर्षों में जिस तीव्र गति से अन्तर्राष्ट्रीय घटनाक्रम में परिवर्तन हुए है उनका तात्कालीक एवं दीर्घकालिक प्रभाव एशिया पर पड़ा है। अमेरिका द्वारा प्रस्तावित एवं प्रतिपादित वैश्विक आतंकवाद विरोंधी युद्ध जनांहार के आयुधों एवं परमाणु तकनीक तथा सामग्री का अवैध प्रसार, प्रक्षेपास्त्र तकनीकी प्रसार एवं विकास जैसे मुद्दों का सीधा सम्बन्ध दक्षिण एशियाई सुरक्षा के क्षेत्रीय परिदृश्य से है। अफगानिस्तान में अमेरिका की उपस्थिति के बावजूद भी मादक पदार्थों के उत्पादन एवं व्यापार एवं आतंकवादी गुटों एवं समूहों में अपेक्षाकृत कमी नहीं आई है। इसका सीधा प्रभाव दक्षिण एशिया पर पड़ रहा है। पाकिस्तान स्थिति कट्टरपंथी समूहों द्वारा जिस प्रकार से सेना का विरोध किया जा रहा है। उससे स्पष्ट होता है कि भविष्य में इन समूहों द्वारा भारत विरोधी बड़ी कार्यवाही से इंकार नही किया जा सकता है।[9]

दक्षिण एशिया की भू–स्त्रातजिक स्थिति को अधिक स्पष्ट करने के लिए यह आवश्यक है कि इस क्षेत्र के भू–स्त्रातजिक तथा भू–सामरिक महत्व के क्षेत्रों का उल्लेख किया जाए। दक्षिण एशिया ग्लोब पर अपनी अवस्थिति के कारण तो महत्वपूर्ण है साथ ही इस क्षेत्र के कुछ प्रमुख भू–स्त्रातजिक और भू–सामरिक महत्व के कुछ स्थान है, जिनका सुरक्षा एवं स्त्रातजिक दृष्टिकोण से महत्व न केवल दक्षिण एशियाई क्षेत्र तक है वरन ये अपने क्षेत्र के अन्तर्गत सम्पूर्ण एशिया और हिन्द महासागर की सुरक्षा एवं स्त्रातजी को प्रभावित करते है। जिसका प्रभाव पूरे विश्व की सामरिकी एवं स्त्रातजी पर पड़ता है यही कारण है कि वर्तमान समय में दक्षिण एशिया महाशक्तियों की अभिरूचि का प्रमुख केन्द्र के रूप में स्थापित हो रहा है। दक्षिण एशिया के प्रमुख स्त्रातजिक एवं सामरिक महत्व के क्षेत्र में मुख्य रूप से जिन स्थानों का उल्लेख किया जा सकता है वे इस प्रकार है–

1. **सियाचीन का सामरिक महत्व-**

सियाचीन का अर्थ होता है 'गुलाबों का बाग'। पर वहॉ ऐसा कुछ नही, क्योंकि जम्मू–कश्मीर में स्थित सियाचीन हिमालय का सबसे बड़ा ग्लेशियर (47.5 किलोमीटर)

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

तो है ही। यह दुनिया का सबसे बड़ा ग्लेशियर भी है। इसका एक सिरा नूब्रा घाटी के एक कोने पर है, तो दूसरा 23 हजार फुट ऊचे इन्द्र कोल पर जहॉ सिया दर्रा भी है। इसी सिया दर्रे के ठीक ऊपर करीब 24000 फीट ऊॅचा सिया कॉगडी (पर्वत) है। सियाचीन लद्दाख का सामरिक दृष्टि से अत्यन्त संवेदनशील और महत्वपूर्ण भारतीय सीमा क्षेत्र है जो लगभग 21 हजार फीट ऊॅचाई पर स्थित है। 47 किलोमीटर लम्बे इस क्षेत्र की चौड़ाई दो से आठ किलोमीटर तक है।[10] तापमान चूंकि जमाव बिन्दु से 40 से 50 डिग्री नीचे चला जाता है, इसलिए बर्फ गिरती रहती है। इसका सामरिक महत्व इसलिए बढ़ जाता है कि लद्दाख की राजधानी लेह से उत्तर की ओर 800 किलोमीटर लम्बे (इसी ग्लनेशियर के निकट) कराकोरम मार्ग का निर्माण चीन ने पाकिस्तान से गठबंधन करके किया है जिसने चीन के सिक्यांग क्षेत्र को 4530 मीटर ऊॅचे खुजेशव दर्रे के रास्ते पाक अधिकृत कश्मीर में मुजफ्फराबाद का जोड़ दिया है। इतना ही नहीं इसके निकट स्थित चीन ने अक्साई चीन का भाग अपने अधिकार में कर लिया है।[11]

वास्तव में 1962 में चीन ने लद्दाख क्षेत्र के 12 हजार वर्ग किलोमीटर भू–भाग पर अपना अवैध अधिकार कर लेने से सियाचीन क्षेत्र का सामरिक महत्व इसलिए बढ़ जाता है, क्योंकि चीन के पूर्वी मार्ग से कराकोरम दर्जे से होता हुआ एक मार्ग पाकिस्तान और चीन को जोड़ता है। सियाचीन ग्लेशियर एक प्रकार से भारतीय सेनाओं के लिए प्रशिक्षण स्थल है जहॉ से पाक का मुकाबला किया जा सकता है। सियाचीन हिमनद एक नुब्रा नदी है जो कि पूरे लद्दाख क्षेत्र में बहती है, किन्तु 'परतापुर' के आगे सड़क के रूप में दिखाई देती है। सियाचीन पर पाकिस्तानी कब्जे का अर्थ है नुब्रा घाटी पर कब्जा यानि लद्दाख का संकट और इसका मतलब हुआ श्रीनगर पर दबाव[12] सामरिक दृष्टि से सियाचीन, चीन के लिए भी महत्वपूर्ण हैं क्योंकि सियाचीन का कुछ क्षेत्र जो पाकिस्तान के हिस्से में है, वह भी भारत का ही है, इसी में से कुछ हिस्सा पाक ने चीन को दिया है। फलतः आवागमन की सुविधा मिलते ही अक्साई चीन और उत्तरी चीन की दूरी कम हो जाएगी और चीन, पाक अधिकृत कश्मीर तक स्वतन्त्र रूप से आ सकेगा। सियाचीन भारत के लिए नहीं दक्षिण एशिया के लिए इसलिए महत्व रखता है, क्योंकि यही से पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर, चीन के सी–क्यांग प्रान्त, काराकोरम मार्ग और पूर्व सोवियत संघ के एशियाई गणतंत्रों तथा अफगानिस्तान के हिस्सें पर नजर रखी जा सकती है।

2. दियागोगार्शिया का भू-स्त्रातजिक महत्व-

दक्षिण एशिया क्षेत्र के भू–स्त्रातजिक महत्व के क्षेत्र में हिन्दमहासागर में स्थित इस द्वीप का महत्वपूर्ण स्थान है। दियागोगार्शिया एक प्रमुख द्वीप है जो एगमोण्ट द्वीप समूह से 112 किलोमीटर दक्षिण–पश्चिम में स्थित चागोस द्वीप–समूह का दक्षिणी द्वीप

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

है। अमेरिका के नौ सैनिक विशेषज्ञ इसे दक्षिण एशिया ही नही वरन सम्पूर्ण एशिया पर नियंत्रण हेतु एक उपयुक्त स्थान मानते है। यू.एस. नेवल इंस्टीट्यूट प्रोसीडिंग्स मई 1969 (US Naval Institute Proceding May 1969) में सर्वप्रथम राष्ट्र के प्रशान्त क्षेत्र के तत्कालीन एडमिरल मैकेन ने रहस्योदघाटित किया था कि उनके राष्ट्र के लिए हिन्द महासागर पर स्थायी प्रभुत्व करना न केवल तात्कालिक दृष्टि से अनिवार्य है, अपितु सर्वथा आवश्यक भी है। उनके शब्दों में भारत के सुदूर दक्षिणी किनारे पर हिन्द महासागर क्षेत्र में दियागोगार्शिया अपनी केन्द्रीय स्थिति के कारण भू–स्त्रातजिक महत्व का वैसा ही महत्वपूर्ण संचार केन्द्र है जैसा कि द्वितीय विश्व युद्ध में प्रशान्त महासागरीय क्षेत्र में स्थित माल्टा द्वीप था। 23 किमी0 लम्बे एवं 8 किमी0 चौड़े इस द्वीप से भारत की दूरी 2,300 किमी0 है। आज दियागोगार्शिया में आधुनिक संचार तंत्र नवीनतम अस्त्र–शस्त्र प्रक्षेपास्त्र नाभिकीय आयुध हवाई पट्टी तथा नौ सैनिक अड्डा उपलब्ध है जिसके बल पर अमेरिका पूरे एशिया को नियंत्रित कर सकता है।[13] इसलिए दियागोगार्शिया अपनी भू–स्त्रातजिक अवस्थित के कारण इस क्षेत्र के महत्वपूर्ण स्त्रातजिक क्षेत्रों में से एक है।

3. हिन्द महासागर में स्थित द्वीप का सामरिक महत्व-

हिन्द महासागर की आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक गतिविधियॉ सभ्यता के प्रारम्भिक काल से दक्षिण एशिया से जुड़ी है। हिन्द महासागर की सम्पूर्ण तटरेखा का 12.5 प्रतिशत भाग भारतीय तटरेखा है। प्राचीन काल से ही पूर्वी द्वीप समूह तथा एशिया एवं अफ्रीकी देशों के साथ दक्षिण एशिया का राजनीतिक व आर्थिक सम्बन्ध इसी महासागर के माध्यम से स्थापित किए जाते है।[14] भारत के अधीन अरब सागर में लक्ष्यद्वीप में 36 द्वीप है। उनका कुल क्षेत्रफल 32 वर्ग किमी0 है। बंगाल की खाड़ी में अण्डमान निकोबार द्वीप समूह के अन्तर्गत 3000 द्वीप है। इनका कुल क्षेत्रफल 8249 वर्ग किमी0 है। इन द्वीपों का भू–स्त्रातजिक महत्व बहुत अधिक है। फारस की खाड़ी से होकर निकलने वाला तेल लक्ष्यद्वीप के तरफ से होकर जाता है। अण्डमान निकोबार द्वीप समूह विश्व के अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं व्यस्त अन्तर्राष्ट्रीय जल–मार्ग मलक्का जलमार्ग के निकट स्थित है। इन द्वीप समूहों की भौगोलिक स्थिति दक्षिण पूर्व एशिया के निकट है भारत का कुल विशिष्ट आर्थिक क्षेत्र लगभग 3.2 मिलियन वर्ग किमी0 है।[15] भारतीय जलसीमा व जल क्षेत्र का महत्व व उपयोगिता पूरे दक्षिण एशिया के स्त्रातजिक परिदृश्य को प्रभावित करती है अतः यह आवश्यक है कि हिन्द महासागर एवं इसमें दक्षिण एशियाई राष्ट्रों की जल सीमा व जलक्षेत्र को सुरक्षित रखा जाए जिससे इस क्षेत्र में महाशक्तियों एवं अन्य बाहरी राष्ट्रों का हस्तक्षेप कम करके उनके प्रभाव को सीमित किया जाए।

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

दक्षिण एशिया के सम्पूर्ण भू–स्त्रातजिक महत्व के क्षेत्रों का अगर अवलोकन किया जाए तो सियाचीन दियागोगार्शिया तथा हिन्द महासागर में स्थित भारतीय द्वीपों के अतिरिक्त पाकिस्तान का ग्वादर बंदरगाह, म्यांमार का कोको द्वीप, विवादित न्यूमूर द्वीप, भारत के पूर्वोत्तर में स्थित सात राज्य तथा अफगानिस्तान, श्रीलंका, नेपाल, मालदीव जैसे देश भी अपनी भू–स्त्रातजिक एवं सामरिक महत्ता को प्रदर्शित करते है। इन सभी देशों एवं क्षेत्रों की भू–स्त्रातजिक महत्ता महाशक्तियों द्वारा इन क्षेत्रों में प्रदर्शित की गई अभिरूचि एवं हस्तक्षेप से स्पष्ट हो जाती है। दक्षिण एशियाई क्षेत्र का भू–स्त्रातजिक एवं सामरिक महत्व 1979 में उत्पन्न नवीन शीतयुद्ध के प्रारम्भ होने तथा इसका केन्द्र दक्षिण एशिया में होने के कारण बढा।

4. बेल्ट एंव रोड इनिशिएटिव (बीआरआई) का स्त्रातजिक तथा सामरिक महत्व-

वन बेल्ट वन रोड (एक पट्टा सड़क) या बीआरआई चीन द्वारा प्रायोजित एक योजना है, जिसमें पुराने सिल्क रोड के आधार पर एशिया, अफ्रिका और यूरोप के देशों को सड़कों और रेल मार्गों से जोड़ा जाना है। इस योजना से चीन करीब 60 देशों तक सीधा पहुंच जाएगा। दरअसल, आज भी दुनिया में 90 फीसद व्यापार समुद्र मार्ग के जरिये होता है, और इस पर अमेरिका का दबदबा रहा है। परियोजना के तहत पुल, सुरंग और आधारभूत ढांचे पर तेजी से काम किया जा रहा है। अब जबकि अमेरिका ढलान पर है और अपने निर्यात के लिए चीन बड़े और सुगम बाजार की तलाश में है; यह परियोजना चीन को महाशक्ति के रूप में स्वीकारता को भी स्थापित करेगी।[16]

चीन ने पुराने रेशम मार्ग (सिल्क रूट) पर प्रस्तावित 'वन बेल्ट वन रोड' (ओबीओआर) को सदी की परियोजना (प्रोजेक्ट ऑफ द सेंचुरी) करार दिया है। चीन रेशम मार्ग कोष (सिल्क रूट) के लिए 14.5 अरब डॉलर का योगदान करेगा। रेशम मार्ग कोष का गठन 2014 में किया गया, जिसका मकसद बुनियादी ढांचा परियोजनाओं में निवेश करना था। चीन के इस योगदान के साथ इसका आकार 55 अरब डॉलर हो जाएगा। इसके साथ ही 8.75 अरब डॉलर की वित्तिय सहायता 'वन बेल्ट वन रोड' योजना में शामिल देशों को की जाएगी। एशिया, अफ्रीका और यूरोप के बीच व्यापारिक संबंधों के विस्तार के लिए इस योजना का साल 2013 में पहली बार अनावरण किया गया था।

भारत ने बुद्धिमत्ता दिखाते हुए ओबीओआर और इस सम्मेलन से दूर रहने का फैसला किया। 2013 में चर्चा में आई ओबीओआर का खाका चीन की सामरिक पहुंच बढ़ाने तथा तदुपरांत उसके प्रभाव को उसकी सीमाओं के पार पहुंचाने की गरज से तैयार किया गया है। सैन्य लिहाज से भी ओबीओआर चीन के लिए पुरसुकून अहसास कराने

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

वाली परियोजना है क्योंकि इससे उसे अपने इर्द–गिर्द के देशों में पीएलए दस्तों की संख्या बढ़ाने में मदद मिलेगी। कुछ–कुछ ऐसा ही होगा जैसा गिलगिट–बाल्टिस्तान में हो चुका है। सीपीसी के नेतृत्व को उम्मीद है कि ओबीओआर 2049, इसके स्वतंत्र होने के एक सदी पश्चात, तक एशिया–प्रशांत क्षेत्र में चुनौती विहीन आर्थिक और सैन्य शक्ति के रूप में उभरने में महत्त्वपूर्ण योगदान करेगा। 4.4 ट्रिलियन डॉलर की यह पहल चीन की मुख्यभूमि में स्थित विनिर्माण संकुलों को सड़क मार्ग के जरिए एशिया और यूरोप स्थित बाजारों से जोड़ देगी। इसके अलावा, चीन को मिनरल खदानों जैसे प्राकृतिक संसाधन बहुल इलाकों के साथ भी जोड़ देगी। परियोजना के तहत नई सड़कों के निर्माण या मौजूदा सड़क मार्गों में सुधार किया जाएगा। इसके तहत चीन की समुद्री सिल्क रूट संबंधी पहल के अंग के रूप में समूचे एशिया–प्रशांत क्षेत्र में पत्तन या बंदरगाहों का निर्माण किया जाएगा। स्वाभाविक है कि ये पत्तन सामरिक महत्त्व के ठिकाने होंगे, जिससे पीएलए नेवी को इनके क्षेत्रों में परिचालन का विस्तार करने में मदद मिलेगी। समय आने पर इन पत्तनों का उच्चीकरण करके उन्हें नौसेना बेस में बदला जा सकेगा।[17]

विशेषज्ञों का मानना है कि सिल्क रूट के जरिये चीन पूरी दुनिया पर घेरा बनाना चाहता है। विश्व के एक तिहाई सकल राष्ट्रीय उत्पाद (जीएनपी), 70 प्रतिशत जनसंख्या और 75 प्रतिशत ज्ञात ऊर्जा भंडारों को समेटने की क्षमता वाली यह योजना वास्तव में चीन द्वारा भूमि एवं समुद्री परिवहन मार्ग बनाने के लिए है, जो चीन के उत्पादन केंद्रों को दुनिया भर के बाजारों एवं प्राकृतिक संसाधन केंद्रों से जोड़ेंगे।[18] साथ ही साथ इससे चीन की अभी तक सुस्त पड़ी अर्थव्यवस्था, श्रमशक्ति एवं बुनियादी ढांचा–तकनीक भंडारों को भी प्रोत्साहन मिलेगा, ताकि उसे आवश्यक प्रतिफल मिले। इसमें सीमाओं को नई दिशा देने और चीन के पड़ोस में यथास्थिति को परिवर्तित करने जो इसने दक्षिण एशिया में करना पहले ही शुरू कर दिया है– की क्षमता है और भारत पर इसका सीधा और प्रतिकुल प्रभाव होगा। इस पहल में भू राजनीतिक एवं राजनयिक उद्देश्य तो है ही, बेहद शक्तिशाली घरेलू एजेंडा भी है।[19]

5. **स्ट्रींग ऑफ पर्ल्स की सामरिकी-**

हिंद महासागरीय क्षेत्र में अपनी उपस्थिति को सुदृढ़ व प्रभावशाली बनाने का ही परिणाम है कि चीन ने अपनी 'String of Pearls'[20] की नीति के अंतर्गत (ग्वादर) पाकिस्तान, (हम्बनटोटा) श्रीलंका, (चटगांव) बांग्लादेश, म्यांमार में (Sittive, Coco Island, Hianggi, Kyaukpyn, Mergui o Zaddetkyi), थाईलैण्ड में (Laem Chabang) तथा कंबोडिया में (Sihanoukville) में सामुद्रिक व सैन्य सुविधाएं अर्जित करके अपनी सामुद्रिक सेना हेतु

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

'अग्रिम संक्रियात्मक आधार' (FOB-Forward Operating Bases)[21] स्थापित कर लिया है जो न केवल हिंद महासागर में उसके सामुद्रिक व्यापारिक हितों की रक्षा करेंगे अपितु तटवर्ती क्षेत्रों में उसकी राजनैतिक प्रभुत्व के रणनीतिक विस्तार में भी सहायक होंगे।

हिंद महासागर में अपने सामरिक–संजाल को विस्तृत व प्रभावी करने हेतु चीन द्वारा सन् 2011 में सिचेल्स (Seychelles) में सैन्य आधार की स्थापना से यह पुष्ट हो रहा है कि वह सामुद्रिक वर्चस्व हेतु कितना व्यग्र हैं। यद्यपि सिचेल्स की सरकार ने यह दावा किया है कि उसकी अनुमति व इच्छानुसार चीन इस क्षेत्र में सामुद्रिक डकैती को रोकने हेतु यहां सैन्य आधार निर्मित कर रहा है।

वास्तव में, सिचेल्स में नौसैन्य आधार की स्थापना चीन द्वारा हिंद महासागरीय क्षेत्र (IOR) के संकटकालीन 'चोक–प्वाइंटस' (Crucial Choke Points)[22] पर नियंत्रण करने की रणनीति का ही हिस्सा है जिसके द्वारा वह इन क्षेत्रों में सामरिक उपस्थिति द्वारा अपने आर्थिक हितों की रक्षा करने हेतु प्रयत्नरत है। उल्लेखनीय है कि चीन के तेल का लगभग 80 प्रतिशत हिस्सा मलक्का स्ट्रेट से ही होकर गुजरता है। अतएव, हिंद महासागर व दक्षिण चीन सागर में अपनी सामुद्रिक उपस्थिति द्वारा न केवल वह अपने हितों को सुरक्षित करना चाहता है अपितु वह सम्पूर्ण दक्षिण एशिया पर नियंत्रण रखने की भी इच्छा संजोए हुए हैं।

हिंद महासागरीय क्षेत्र में चीन की बढ़ रही रणनीति–गतिविधियों से ऐसा लगता है कि सन् 2020 तक वह सामरिक व राजनैतिक दृष्टि से इतना प्रभावशाली राष्ट्र हो जाएगा जो इच्छानुसार जब जैसा चाहे इसके तटीय देशों में हस्तक्षेप करने की स्थिति में होगा। चीन द्वारा 10 अगस्त, 2011 को अपने प्रथम एअर क्राफ्ट कैरियर के जलवतण एवं अद्भुत सामर्थ्य से वह इस क्षेत्र में 'गनबोट कूटनीति' (Gun Boat Diplomacy) का प्रदर्शन करके दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय राष्ट्रों के हितों पर कुठाराघात कर सकता है।

6. डोकलॉम पठार के भू-राजनीतिक महत्व

डोकलॉम, चीन में डोंगलंग के रूप में भी जाना जाता है, एक पठार और एक घाटी है, जो चीन के (तिब्बत) चुम्बी घाटी के उत्तर में स्थित है, पूर्व में भूटान की हा घाटी और पश्चिम में भारत का सिक्किम राज्य हैं। यह क्षेत्र हिमालय क्षेत्र में व्यापार गतिविधियों के बहुत सुन्दर अतीत का हिस्सा है क्योंकि यह चुम्बी घाटी के केंद्र में स्थित है, जहॉ तिब्बत में अंग्रेजो द्वारा स्थापित ऐतिहासिक रूप से तीन व्यापारिक एजेंसियों–यॉटंग, ग्यांट्स और गारटोक थीं। भारत की सरॅटंग ट्रेडिंग एजेंसी तक पहुॅच है, जो चुंम्बी घाटी के डोकलाम क्षेत्र के सबसे करीब है। इसके बाद चीन द्वारा तिब्बत

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

के कब्जे के बाद इसकी पहुँच खो गयी। वर्तमान में, डोकलाम पठार, चीन और भूटान के बीच एक विवादित क्षेत्र है, लेकिन चीन और भूटान के साथ भारत के लिए रणनीतिक रूप से महत्वपूर्ण है। यह भारत के संवेदनशील मुर्गी की गर्दन या सिलीगुड़ी कॉरिडोर को बड़ा उभयरोध प्रदान करता है। सिलीगुड़ी कॉरिडोर भारत के पश्चिम बंगाल राज्य में, नेपाल और बांग्लादेश के बीच 24 किलोमीटर चौड़ा भूमि का एक अत्यंत संकीर्ण मार्ग है।

यह उत्तर–पूर्वी राज्यों के साथ भारत के मध्य भाग को जोड़ता है यह चुम्बी घाटी से 100 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। सिलीगुड़ी कॉरिडोर भारत की रणनीतिक भेद्यता या जोखिमता है। यह थिंपू के लिए भी महत्वपूर्ण हैं क्योंकि इसमें भूटान के क्षेत्र में मुख्य आपूर्ति मार्ग हैं। चुम्बी घाटी और सिलीगुड़ी, सिक्किम और तिब्बत के बीच व्यापार मार्ग का एक हिस्सा थे और नई दिल्ली, थिम्पू और बीजिंग के लिए एक महान सामरिक महत्व है। भूटान ने 1961 से डोकलॉम पठार पर दावा किया है जबकि चीन ने डोकलाम क्षेत्र सहित पूरी चुंबी घाटी के क्षेत्र पर दावा किया है। दोनों देशों ने डोकलाम क्षेत्र सहित क्षेत्रीय विवादों को हल करने के लिए 24 दौरों की बातचीत की है। फिर भी, चीन ने डोकलाम क्षेत्र में दाकोलर से जोमलीरी में भूटान आर्मी शिविर की ओर एक सड़क का निर्माण करना शुरू किया, जो जमफेरी रिज के नजदीक है। दोनों, भारत और भूटान ने इसे राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए खतरा माना। जहॉ तक भारत का संबंध है, उसने भूटानी दावे का समर्थन किया।[23]

चीन ने भूटान के साथ भारत के राजनीतिक–सैन्य संबंधों की गणना नहीं की और विवादित क्षेत्र में अपनी राष्ट्रीय सुरक्षा सुनिश्चित करने और सामरिक हितों की रक्षा के लिए भारत के दृढ़ संकल्प का आकलन नहीं किया। जब चीन ने अपने मीडिया के माध्यम से ग्लोबल टाइम्स, सिन्हुआ न्यूज एजेंसी, चाइना डेली और अन्य के माध्यम से मनोवैज्ञानिक युद्ध की शुरूआत की, चीन के विदेश और रक्षा मंत्रालय के प्रवक्ताओं ने भारत के खिलाफ वांछित परिणाम प्राप्त करने के लिए धमकी देने, निराश करने और दबाव बनाने के लिए आक्रामक भाषा का प्रयोग किया। उन्होंने भारत को सीधे विवादित क्षेत्र से अपने सैनिकों को वापस लेने या 1962 की हार से भी बदतर परिणामों का सामना करने की धमकी दी। फिर भी, भारत ने चीन द्वारा इसके विरूद्ध शुरू किए गए मनोवैज्ञानिक युद्ध के बारे में परेशान न होकर बातचीत के जरिए गतिरोध को हल करने के अपने दृढ़ संकल्प को दिखाकर एक 'मापित' और 'संतुलित' प्रतिक्रिया दी। चीन की तुलना में भारत डोकलॉम क्षेत्र में लाभप्रद स्थिति में रणनीतिक रूप से था क्योंकि इसने ऊँचाइयों पर कब्जा कर लिया था। यहॉ तक कि सीमा के कई अन्य हिस्सों में, भारत

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

को लाभप्रद रणनीतिक स्थिति मिली हुयी है। ऐसी स्थिति में, चीन इस तथ्य से अवगत था कि वह युद्ध में निर्णायक विजेता नहीं हो सकता। इसके अलावा, सैन्य साधनों के माध्यम से इस मुद्दे को हल करने का कोई भी प्रयास इसके 'शांतिपूर्ण वृद्धि' को तर्क को खारिज कर देता। इसलिए, सैन्य गतिरोध का समाधान, बातचीत और कूटनीति के माध्यम से प्राप्त हुआ, न कि सैन्य साधनों के माध्यम से, जो भारत को एक नैतिक, सामरिक और कूटनीतिक जीत प्रदान करता है। भारत, भूटान की कमजोर सैन्य शक्ति का शोषण करके विवादित क्षेत्र में यथाशक्ति को बदलने के लिए चीनी एकात्मवाद को रोकने में सफल रहा। भारत अपने पड़ोस में और एशियान देशों में अपने भागीदारों के बीच अपनी विश्वसनीयता स्थापित करने में सक्षम रहा है, जहॉ वह खुद को एक प्रमुख खिलाड़ी और 'शुद्ध सुरक्षा प्रदाता' के रूप में स्थापित कर लेता है।[24]

7. **मादक द्रव्य व्यापार का क्षेत्र -**

मादक द्रव्यों का व्यापार सबसे ज्यादा दक्षिण एशिया क्षेत्र से होता है क्योंकि विश्व के दो प्रमुख मादक द्रव्य उत्पादक क्षेत्र दक्षिण एशिया से ही जुड़े है पहला, स्वर्णिम अर्द्धचन्द्र जिसमें अफगानिस्तान, पाकिस्तान तथा ईरान शामिल है। दूसरा, स्वर्णिम त्रिभुज जिसमें म्यांमार, थाईलैंड एवं लाओस आतें है।[25] अगर देखा जाए तो दक्षिण एशिया के दोनों सिरे के राष्ट्र इसमें शामिल है जिसके कारण यह पूरा क्षेत्र मादक द्रव्य उत्पादन व्यापार का केन्द्र के रूप में स्थापित हो चुका है। इन दोंनों मादक द्रव्यों के उत्पादन क्षेत्रों के लिए अन्य दक्षिण एशियाई राष्ट्र पारगमन का कार्य करते है। अफीम मादक द्रव्य का राजा है। इस धरा पर बहुत ही कम ऐसे पौधे है जिनका ऐतिहासिक एवं आधुनिक महत्व रहस्यमय प्रभाव तथा अपराधिक कुख्यात के साथ–साथ अति उत्कृष्ट औषधीय उपयोग अफीम जैसा हो। दक्षिण एशिया में मादक द्रव्य के अन्तर्गत अफीम, मार्फीन, हेरोइन, हशीश, कोकीन, चरम, गांजा, भांग तथा अन्य तम्बाकू उत्पादों का सेवन होता है। मादक द्रव्यों का व्यापार विश्व का दूसरा सबसे बड़ा व्यापार है। जिसके कारण इसमें होने वाले लाभ का बहुत बड़ा हिस्सा आतंकवाद तथा अन्य संगठित अपराध में प्रयोग होता है। इसके कारण ही दक्षिण एशिया में आतंकवादी गतिविधियों दिनोदिन बढ़ती जा रही है। मादक द्रव्य व्यापार से जुड़ा हुआ होने कारण दक्षिण एशिया का भू–स्त्रातजिक और सामरिक महत्व भी बहुत ही अधिक हो जाता है।

इन सभी क्षेत्रो के भू–स्त्रातजिक एवं सामरिक महत्व से यह बात तो साफ स्पष्ट हो जाती है कि द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति के बाद से दक्षिण एशियाई क्षेत्र के देशों का भू–स्त्रातजिक एवं सामरिक महत्व दिनो–दिन बढ़ता ही जा रहा है। जिससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि आने वाले दिनों में इस संघन आबादी एवं विरल

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

संस्कृति वाले क्षेत्र का प्रभाव मात्र केवल दक्षिण एशिया या एशिया तक सीमित न रह कर सम्पूर्ण विश्व पर दिखाई देगा।

संदर्भ सूची

1. विनोद कुमार सिंह ''दक्षिण एशिया में शीतयुद्ध एवं भारतीय सुरक्षा'' अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, वर्ष 1988, पृष्ठ–4
2. वही
3. बी. एम. रसेट, ''इंटरनेशनल रीजन्स एंड इंटरनेशनल सिस्टम'', शिकागो, 1967, पृष्ठ–2–5
4. अर्नेस्ट हाज ''दि स्टडी ऑफ रीजनल इंटीग्रेशनः रिपलेक्शन्स आन दि जाय एण्ड एंग्विश आफ प्री प्योराइजिंग'' इन्टर नेशनल आर्गेनाइजेशन, बोस्टन भाग–24 नं04, 1970, पृष्ठ–612
5. डी. सी. हेलमान ''दि इमर्जेंस आफ एन ईस्ट एशियन इंटरनेशनल सब सिस्टम'' इंटरनेशनल स्टडीज क्वार्टली, मिशिगन, भाग–13 नं04, दिसम्बर 1969, पृष्ठ–412–22
6. लुई जे केटोरी एण्ड स्टीवन एल स्पीगेल ''इन्टरनेशनल रीजन्स ए कॅम्परेटिव एप्रोच टू फाइव सबार्डिनेट सिस्टम'' इंटरनेशनल स्टडीज क्वार्टली, भाग–13 नं0–4, दिसम्बर 1969 पृष्ठ–362
7. माइकेल ब्रेका, ''दि सबार्डिनेट स्टेघ्ट सिस्टम आफ सदर्न एशिया'' वर्ल्ड पालिटिक्स, भाग–15 न.0–2, जनवरी 1963, पृष्ठ–219–20
8. वही, पृष्ठ –213
9. सिंह, टण्डन, अग्रवाल, ''स्वतन्त्र भारत की युद्धकला (कश्मीर से कारगिल तक)'' शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2009, पृष्ठ– 47
10. डॉ0 राकेश चन्द्र सिंह कुंवर ''भारत–पाक विवाद के तीन बिन्दु'' तूणीर, वर्ष–5, 15 अगस्त 2008, पृष्ठ–12
11. प्रो लल्लन जी सिंह ''भारतीय युद्ध कला 1947 से अब तक'' प्रकाश बुक डिपो बरेली, 2004, पृष्ठ–20
12. वही, पृष्ठ–21
13. रजनीश कुंवर ''हिन्द महासागर का भू–राजनीतिक महत्व एवं भारत की सुरक्षा'' डॉ. विजेन्द्र सिंह तथा धीरेन्द्र द्विवेदी (सम्पा0) ''भारत की आन्तरिक सुरक्षा समस्याए'' अध्ययन पब्लिशर्स, दिल्ली, 2001, पृष्ठ–90
14. डॉ. नर्वदेश्वर शुक्ल तथा डॉ. अवतार सिंह ''हिन्द महासागर का सैन्यीकरण व भारतीय सुरक्षा'' तूणीर, अंक–5, 15 अगस्त 2008, पृष्ठ–78
15. डॉ. विनोद मोहन मिश्र ''हिन्द महासागर में बढ़ती सैन्य प्रतिस्पर्धा एवं भारतीय सुरक्षा'' डॉ. ए. पी. शुक्ल तथा डा. राहुल मिश्र (सम्पा0) ''राष्ट्रीय सुरक्षा की समस्याए' राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2006, पृष्ठ–137

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

16. ''वन बेल्ट वन रोड'' राष्ट्रीय सहारा, हस्तक्षेप, 20 मई 2017, पृष्ठ–01
17. http://www.amarujala.com/india-news/india-on-obor-we-support-connectivity-but-our-position-on-the-issue-is-well-known
18. https://navbharattimes.indiatimes.com/india/support-connectivity-but-it-has-to-be-open-equitable-india-on-obor/articleshow/61282776.cms
19. ''वन बेल्ट वन रोड'' राष्ट्रीय सहारा, हस्तक्षेप, 20 मई 2017, पृष्ठ–01
20. वी0 पी0 मलिक एण्ड जे0 शुल्ज (एडिटेड) ''द राइज ऑफ चाइनाः प्रस्पेक्टिव फार्म एशिया एण्ड यूरोप'' पेंटागन प्रेस, न्यू देलही, 2008, पृष्ठ–171
21. रंजीत गुप्ता ''म्यांमार इन द चाइना इण्डिया इक्यूएशन'' एशिया स्ट्रेटजिक रिव्यू, 2008, पृष्ठ–319
22. स्टेन टेन्नेसान एण्ड अशिल्द कोल्स ''एनर्जी सिक्योरिटी इन एशियाः चाइना, इण्डिया, आयल एण्ड पीस'', इण्टरनेशनल पीस रिसर्च इन्स्टीट्यूट, ओस्लो, अप्रैल 2006, पृष्ठ–26
23. डॉ. सुनील कुमार, ''डोकलॉम पठार पर भारत–चीन सैन्य गतिरोध और इसका रणनीतिक प्रभाव'', वर्ल्ड फोकस, जनवरी 2018, पृष्ठ– 95, 96
24. वही, पृष्ठ–100, 101
25. डॉ. संजय ''आन्तरिक सुरक्षा चुनौतियॉ', हरी शरण तथा हर्ष कुमार सिन्हा (सम्पा0) ''आन्तरिक सुरक्षा विचार, विमर्श और विकल्प'', प्रत्युष पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2012, पृष्ठ–132

WRITERS VIEW
An Interdisciplinary, bilingual, bi-annual, a peer review or refereed International Journal
Vol. 3 No. 1&2 APRIL & OCTOBER Year 2018

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

18

Philosophy of Non-Dualism in Raja Rao's The Serpent and The Rope

Dr. Meeta
Assistant Regional Director, IGNOU, Regional Centre Patna, Bihar

Abstract

The novel *The Serpent and the Ro*pe reflects the life story of the novelist Raja Rao. The novel was published after a long gap of twenty-two years after the publication of his first great novel *Kanthapura.* Both the novels reflect the novelist's great learning in the realm of philosophy. The former is mostly related to Hindu's religious traditions and faiths as well as rituals, but the latter talks much of the philosophy of non-dualism where the serpent that appears to be true is nothing, but mere illusion. Raja Rao views that the world is either real or unreal- the serpent or the rope. There is no-between the two, and all that is in-between is poetry, is sainthood. Both the thought and analogy of the rope here are taken from the non-dualistic philosophy of Sankaracharya. It is the serpent that is no real existence because it is illusion in the sense that it appears that the serpent is, but in reality there is no existence of it. Whatsoever exists and whatsoever is seen from the disillusioned eyes is the rope only. The rope is the reality. It reflects Rao's vast wisdom related to the philosophy of non-dualism and other ancient religious scriptures.

Key Words: Non-dualism, illusion, self-knowledge, self-fulfillment, Protagonist, transcendental consciousness, holy vagabond

---

*The Serpent and the Ro*pe is regarded as the spiritual auto-biography of the great novelist Raja Rao whose faith in the Sankara's philosophy of non-dualism has been unshakable. The novel reflects the life story of the novelist Raja Rao. The story of Ramaswami, the protagonist of the novel, resembles

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

with the life history of Raja Rao. That is why Ramaswamy, the hero of the novel, who represents Raja Rao, declares: "I am not telling a story here, I am writing the sad and uneven chronicle of a life, my life, with no art or decoration, but with the 'objectivity', the discipline of the 'historical sciences' for my test and tradition I am only an historian."[1] *The Serpent and the Rope* "came as a result of spiritual fulfillment- that is to say it was born after I (Raja Rao) had met my Guru."[2] Rao believes in the Advaitic truth of "*Shivoham;* I am *shivoham",* as Sankara says. The novel was published after a long gap of twenty-two years after the publication of his first great novel *Kanthapura.* He wrote the novel when his thought had fully matured. This work is a meritorious work of art of the novelist's maturity and at once he was held a pioneer in the realm of Indian English fiction. It is said that the novel *Kanthapura* is the Ramayana of Raja Rao while *The Serpent and the Rope* is his Mahabharta. Both the novels reflect the novelist's great learning in the realm of philosophy. The former is mostly related to Hindu's religious traditions and faiths as well as rituals, but the latter talks much of the philosophy of non-dualism where the serpent that appears to be true is nothing, but mere illusion. Once one is disillusioned with the help of one's learned spiritual guru, realization soon comes that the serpent which appears to be true is only the reflection of the rope that is real. Serpent is illusion that appears due to ignorance. It is like waves and water of a sea. Waves which are seen having separate existence are reflection of water. It emerges from water and merges into water. So long as the wave is in existence, it has the identity. Once it merges into water, there is no wave, but water only. Like that, the world where we live has its origin in Supreme God; it resides and develops in God's power and ultimately merges into God's eternity. The identity of the world and universe is not permanent.

Observing the philosophical significance of Raja Rao's two novels- *Kanthapura* and *The Serpent and the Rope*, Srinivasa Iyengar says, "If *Kanthapura* is Raja Rao's Ramayana, *The Serpent and the Rope* is his Mahabharta. If *Kanthapur*a has a recognizable epic quality, *The Serpent and The Rope* is more than a miniature epic- it is almost encyclopedia in its scope"[3] M.K. Naik says, "If *Kanthapura* is the Indo-Anglian history as modern *Sathala*

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

Purana, or legendary history of a place, *The Serpent and The Rope* – a far more complex work- is the novel as a modern Indian Mahabharta in miniature"[4]

The Serpent and the Rope is highly complex and many sided work of art, "being at once the tragic story of a marriage of minds which drift apart, the spiritual autobiography of a learned, sensitive and imaginative modern Indian intellectual- and a saga of his quest for self-knowledge and self-fulfillment ; a memorable statement of the prime values of both the East and the West and a drama enacting their impact on each other ; a sustained piece of symbolism and a re-creation of a valuable ancient Hindu myth; and a conscious attempt both to create a truly Indian novel with its roots firmly embedded in native tradition and to forge an Indian English style through which alone could its complex vision be authentically and adequately presented**."**[5] The story of the novel is simple, no doubt, but the theme that it contains is highly complex due to its philosophical nature. There are a number of characters among them Ramaswamy, the protagonist, Madeline, the first wife of Rama, Savitri, the beloved of the hero Rama and Little Mother and Saroja, his step mother and step-sister respectively are the most figuring characters and they leave imperishable imprint on the mind of a reader. The hero Ramaswamy (Rama) is a young man of great literary cultures. He knows Kannada, Sanskrit, English, French and Indian. He is a vastly read and widely traveled man. He is a 'wanderer on earth' or a holy vagabond.' He understands Catholicism, Catharism, Darwinism, Marxism, Conceptualism, Existentialism, Surrealism, Zoroastrianism, Islam, Taoism, Confucianism, Hinduism, Vedantism, Buddhism, Jainism, Yoga, Lingayats and Tantrics. The famous scholars of the world from ancient, medieval and modern period are well known to him. Being a product of many cultures, Rama's mind is seething whirlpool of cultural currents. Unlike the simple story-teller in *Kanthapura*, who knows only Indian myths and legends, Rama is familiar with myths and legends of different civilizations and he has the ability to discern parallels between them and forge a link between the past and the present by comprehending the essential concerns of history.

The theme of the quest for self-knowledge is the base of the novel, *The Serpent and the Rope.* As Raja Rao observes: "The main theme is the futility

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

and barrenness of man in human existence when man (for woman) has no deep quest, and a thirst for the ultimate. Man's life here in *sansara* is an august mission to find the absolute. The Absolute, according to the Indian traditions is being incarnate in the Guru."[6] In the Indian religious scriptures emphasis has been laid down to apply all possible efforts by the human beings to liberate their soul from the bondage of Maya Shakti. All the creatures have been wandering from life to life and facing pains in the life due to ignorance. Among them the man is the only creature who is reasonable enough to know what is Maya and what is the Bondage of Maya. Maya is illusion in which unreality appears like reality. It is Maya that has darkened the light of human soul. Once this cover is removed with the help of a perfect Guru , the soul illuminate and reality is apprehended.

Raja Rao views that the world is either real or unreal- the serpent or the rope. There is no-between the two, and all that is in-between is poetry, is sainthood. He says:

> You may go on saying all the time, "No, no, it's the rope, and stand in the serpent. And looking at the rope from the serpent is to see paradise, saints, avtaras, gods, heroes, universes. For whosoever you go , you see only with the serpent's eyes. Whether you call it duality or modified duality, you invent a belvedere to heaven, you look at the rope from the posture of the serpent, you feel you're the serpent- you are, the rope is. But in true fact, with whatever eyes you see there is no serpent, there never was a serpent, you gave your own eyes to the falling evening and cried, "Ayya! Oh! It's the serpent! You run and roll and lament, and have compassion for fear of pain , others', or your own. You the serpent and in fear you feel you are it, the serpent, the saint. One- the Guru- brings you the lantern; the road is seen, the long white roads, going with the statutory stars. It is only the rope. He shows it to you. And you touch your eyes and know there never was a serpent."[7]

Both the thought and analogy of the rope here are taken from the non-dualistic philosophy of Sankaracharya. Sankara says: "Just as owing to one's ignorance of the rope, the rope appears to be the serpent, the self is regarded as the individual soul, owing to the absence of the true knowledge of the self. As

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

the word of reliable person, the illusion disappears and what seemed to be a serpent is now seen as a rope. Even so after being instructed by the inceptor, I find myself not the individual soul but Shiva himself."[8] It is the serpent that is no real existence because it is illusion in the sense that it appears that the serpent is, but in reality there is no existence of it. Whatsoever exists and whatsoever is seen from the disillusioned eyes is the rope only. The rope is the reality. The rope is the *Brahm*. The rope is the absolute cause of everything. The serpent that appears as true for the moment is also from the rope. But the normal human mind has been accustomed to see only whatsoever is seen from the naked eyes or from the eyes of ignorance. Once the third eye of knowledge is opened with the help of the Guru, the illusion soon disappears as the darkness is over soon after rising of the sun. Swami Prabhananda says:

The world according to Sankara "is and is not". Its fundamental unreality can be understood only in relation to the ultimate mystical experience, the experience of an illumined soul. When the illumined soul passes into transcendental consciousness, he realizes the self as pure bliss and pure intelligence, the one without a second. In this state of consciousness, all perceptions of multiplicity ceases, there is no longer any sense of 'mine' and 'thine', the world as we ordinarily know it has vanished. Then the self shines forth as the One, the Truth, the Brahman, the basis of the apparent world …When the truth is known we are no longer deluded by the appearance- the snake- appearance vanishes into the reality of the rope, the world vanishes into Brahman … Thus, according to Sankara, the world of thought and matter has a phenomenal or relative existence, and is superimposed upon Brahman, the unique absolute reality. As long as we remain in ignorance, we shall continue to experience this apparent world, which is the effect of a super-imposition. When transcendental consciousness is achieved, superimposition ceases."[9]

This doctrine of non-dualism is also indicated in the epigraph to the novel. It says, "Waves are nothing but water. So is the sea." Novelist's Guru, Atmananda explains that the individuals soul (jivas) are like waves that rise and fall and struggle against each other. Striking against the seashore, waves recede, tired and worn out, seeking rest and peace. Like that jivas, too, seek rest and peace by merging into the Supreme . Waves' existence is on water, so jivas

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

existence is in Supreme. Relation of jivas with Supreme is like *Sat, Cit* and *Anannda* (truth, existence and bliss). Realization of waves that their source of origin and base of existence is sea, they settle at rest. So when jivas realize that their existence is not independent, rather they are particles of Supreme, their all illusion disappear. They soon realize that the identity what they possess is not separate from God. Jivas identity merges with identity of God because there is no duality, but non-duality. Duality is *aviday (*ignorance) and illusion. It has been said: "Water can be reached straight way from wave by following the direct path. If the way through sea is taken, much more time is needed."[10].

In Indian philosophical thinking, a spiritual guru who has realized the ultimate truth and knows the path of reality has great significance. Raj Rao knows it well. The basic theme of the novel, *The Serpent and the Rope* is quest for self-knowledge or self-fulfillment. Ramaswami, the hero of the novel is in search of that. So he calls himself 'holy vagabond' and he wanders in search of self-knowledge. In that course of wandering he happens to meet Madeleine, Lakshmi, Saroja, Savitri and others. In search of truth through love he falls in love with them and continues relations, but not permanent. He leaves them all and goes ahead in search of self-realization. His journey and search continue till he visualizes the Guru and gets his blessing. There are two ways of self-realization. One is the way of the denial of life, of renunciation and asceticism which is chosen by Madeleine. The other way is the way of active involvement in human life and human activity. This is the way chosen by Ramaswami. According to Khan H.U, "he is involved in different kinds of human relationships. He is a son, brother, friend, lover and husband, and through his involvement in these relationships, he seeks to achieve self-knowledge which can be achieved only when the ego is destroyed. Rama rises above self and achieves a higher degree of self-discipline and self-realisation."[11] But notable fact is that he achieves higher degree of self- realization and self-discipline when he comes to the contact of his spiritual Guru.

In the Indian spiritual advancement Guru who is supposed to be greater than even Brahma, Vishnu and Mahesh, is not only the religious preceptor but also equivalent to God because he is the embodiment of absolute knowledge. It is he who knows what is God and how to realize Him. The *Mundaka Upnishad*

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

declares: "If you would know the eternal, humbly approach a Guru devoted Brahman." It is believed that the seeker of the Absolute Truth must submit humbly to the competent Guru who may lead the path of salvation. Springtail advancement is a complex journey to reach the Supreme God that needs guide, and it is the competent Guru only who is capable of leading the truth-seeker to God. Guru is the light and he illumines the path that becomes visible and teaches the ways to achieve the mission. A Guru who himself has realized the Absolute Truth may initiate the disciple into secrets of spiritual enfoldment. There are two ways of Diksha or initiation- *Sambhavi* and *Mantric.* In the former the Guru directly passes insight onto the disciple and in the former he gives him the Mantra (sacred words of formula) which constant and recitation with devotion enables the seeker to realize truth gradually.

Rama, the hero of the novel, wanders a lot and in that course of wandering he comes in contact with Madeleine, Lakshmi and Savitri who gives him momentary pleasure of the life. But in the end finds most of his worldly ties cut off as his mission is different. In the beginning, he is involved into worldly affairs establishing relationship with Madeleine and Savitri. He also thinks of enjoying the life adopting the profession of teaching along with his wife and children. But all these thinking disappear from his mind and the thing that is left is the quest of self-realization. Hence, his dream of having a perfect Guru and meeting his Guru changes the path of his life. He asks himself, "Do I long for God? No, not a God, but a Guru is what I need. Lord, Lord my Guru come to me, tell me; give me thy touch, vouchsafe, I cried, the vision of Truth. Lord my Lord."[12] Thereafter, the vision of the Guru comes:

> I knew his face as one knows one's face in deep slip. He called me, and said, "It is so long, so long my son. I have awaited you Come, we go." I went…. And I will not return I have gone whence there is no returning… Do you… need a candle to show the light of the sun. Such a sun I have seen. it is more splendid than million suns…. It sits as the formless form of Truth, it walks without walking, speaks without speaking moves without gesticulating, shows without naming, reveals without knowing…. I kissed the perfume of its Holy Feet and called myself a disciple.[13]

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

Thus, it is evident that the hero, Ramaswami who is the seeker of the truth wanders and searches truth but he does not get it until he meets the Guru. At the lotus feet of his Guru he avails the opportunity to obtain permanent peace that is tranquility where there is neither noise nor whisper, neither time nor space, neither mine nor thine, neither longing, nor repentance. If there is something, it is mountain of illumination, sea of consciousness and vast ocean of *Permananda* (eternal bliss). Rama achieves all these attributes by renouncing all what he gets in his mundane life. Now he is not a son, brother, father and husband. He is disciple of his Guru who led him towards the light removing all the darkness and illusion. He is not in the grip of the serpent because the serpent has conversant into the rope.

The novel, *The Serpent and the Rope* has widely been appreciated for the arts, symbols, styles, language and architecture of Raja Rao. It is the novel that constructs not only the beautiful plot and story, but along with that it also presents India's past glories and significance. It reflects Rao's vast wisdom related to the philosophy of non-dualism and other ancient religious scriptures. The manner in which he has presented the philosophic knowledge is highly appreciable. The basic purpose of Raja Rao to write the novel was to highlight the ancient Indian culture and philosophy. It talks a lot about Sankara's philosophy of Vedanta that has no relevance to the present. Yes, it may be said that the novel is a book of sentiments as it has been said by the Indian critic.

The novel, *The Serpent and the Ro*pe, with all its limitations achieved the status of great piece of Raja Rao's work which reflects mysticism, Vedantic philosophy, wisdom, complexity, subtlety, and maturity. It has plot, story, characters, language, art, symbols and, style. To conclude with Naik's words, "Its philosophical profundity and symbolic richness, its lyrical beauty and descriptive power, and its daring experimentation with form and style are of the stuff classic are made of…"[14]

End-Notes

1. Raja Rao, *The Serpent and the Rope*, Orient Paperbacks, 1995, p. 229.
2. S.V. V., "Raja Rao, *The Illustrated Weekly of India*, 5 January 1964, p. 44.

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

3. K. R. Srinivas, Iyanger, 1993, *Indian Writing in English* (reprint) New Delhi, sterling Publishers, p. 397
4. Naik, M.K., "The Serpent and the Rope: The Indian-Anglian Novel as Epic Legend", *Critical Essays on Indian Writing in English,* p. 257
5. Naik, M. K., 1982, Raja Rao, Blackie & Son, Bombay, pp. 76-77.
6. A Letter of Raja Rao to Naik, M.K.
7. Raja Rao, *The Serpent and the Rope*, Orient Paperbacks, 1995, p. 333.
8. *Advaitapancartnam, Stvanakusumanjali*, Mysore, 1955, p. 290, translated by M.K. Naik.
9. Swami Prabhananda, 1962, *The Spiritual Heritage of India,* London, pp. 283-86.
10. Shri Krishna Menon-Atmananda, 1946, *Atam Darshan: At the Ultimate*, Tiruvannamalal, p. 8.
11. Khan, H. U., "The Serpent and the Rope: A reappraisal" in Rajeshwar Mittapalli & Pier Paolo Piciucco, Eds. *Raja Rao*, op. cit., pp. 139-40.
12. Raja Rao, *The Serpent and the Rope*, Orient Paperbacks, 1995, pp. 400-401.
13. Ibid. p. 401.
14. Quoted in Naik, M.K., *Raja Rao*, op. cit. p.111.

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

FORM IV

Statement about ownership and other particulars about newspaper (……..) to be published in the first issue every year after the last day of February

1. Place of publication	**GORAKHPUR**
2. Periodicity of its publication	**BI-ANNUAL**
3. Printer's Name	**DR. AJAY KUMAR SINGH**
Nationality	**INDIAN**
Address	**Q-133 RESERVE POLICE LINE, INFRONT OF ATTA CHAKKI, GORAKHPUR UP 273009**
4. Publisher's Name	**DR. AJAY KUMAR SINGH**
Nationality	**INDIAN**
Address	**Q-133 RESERVE POLICE LINE, INFRONT OF ATTA CHAKKI, GORAKHPUR UP 273009**
5. Editor's Name	**DR. AJAY KUMAR SINGH**
Nationality	**INDIAN**
Address	**Q-133 RESERVE POLICE LINE, INFRONT OF ATTA CHAKKI, GORAKHPUR UP 273009**

6. Names and addresses of individuals who own the newspaper and partners or shareholders holding More than one per cent of the total capital.

I, **DR. AJAY KUMAR SINGH** hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

AJAY KUMAR SINGH
Signature of Publisher

Date- October 2018

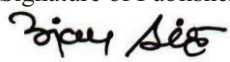

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

Author's Guidelines

- A Research paper should contain sufficient detail and references to the work.
- The authors should ensure that they have submitted their original works, and if the authors have used the work of other's then that has been appropriately cited.
- All those who have made significant contributions should be reported as co-authors. Where there are others who have participated in certain substantive aspects of the research should be acknowledged as contributors.
- When an author notices inaccuracy in his own published work, it is the author's duty to promptly notify the editor or publisher and cooperate with the editor to retract or correct the paper.

Guidelines

1. **Subjects:** Authors are requested to send only original and unpublished articles.
2. **Plagiarism:** Authors are requested to send their original work with a conclusive result. We normally permit not more than 25% plagiarism.
3. **General Format, Page Layout and Margins:** Standard A4 (210mm x 297mm) portrait page set-up should be used. Margins should be 1.78cm at left and right with top and bottom margin set to 2.54cm. Do not use any headers, footers or footnotes. No page numbers. All main text paragraphs, including the abstract, must be fully (left and right) justified. All text, including title, authors, headings, captions and body, will be in Times New Roman Font, in case of English or Kurtidev010, in case of Hindi. Paper text must be in two columns of 89 cm width each, with 0.51 cm spacing between the columns, font Size: 12 Line spacing 1.5.
4. **Title:** Time New Roman Font, in case of English or kurtidev010, in case of Hindi, 14, bold, centre, first alphabet capital.
5. **Author:** Author name are to be written in 12 pt. Bold & centre in font followed by designation, organization, address including state & country name.
6. **Abstract:** First page, top left column, title bold-left aligned, text from next line, 10 font, Italics and 150-200 words. The text must be fully left justified.
7. **Key words:** The keywords section begins with the world, "keyword" in 10pt, bold italics. There may be up to few keywords separated by commas.
8. **Section & Sub Section Heading:** 12 fonts, bold, centre, roman numbered in block capital letters, text after double space (eg. SECTION III) Sub heading: number small alphabetic within bracket 10font, text single spacing (eg. (a)Classification). Sub

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

Heading ; should be left aligned number small new roman within bracket 10 font, text single spacing (eg. (iii) characteristics). Introduction and conclusion must be included as separate sections ensure that introduction and literature survey is not more than 15% of total article size.

9. **Figures and Tables:** All inserts, figures, diagrams, photographs and tables must be centre- aligned, clear and appropriate for black/white or gray scale reproduction. Figures (eg.Fig No.1) must be numbered consecutively, 1, 2, etc, from start to finish of the paper, ignoring sections and subsections. Tables (eg. Table No.1)are also numbered consecutively,1,2 etc. (Close to text where mentioned).Figure number should appear below the figure. Table no. should appear above the table.
10. **Reference:** The Reference section begins with the world, "Reference" in 12 pt., bold, first letter bold and remain in small & should be numbered. Name of Author starting with surname with year of publication in bracket, then Topic, Name of Journal/Book in Italics, Volume Number, issue number in bracket, separated by Name of Journal in italics with colons, Name of publisher and page number.

Samples of Complete References

Printed Book

Gandhi, M. (1955) My experiment with Truth, Navajivan Publishing House, Ahmedabad, pp.125-130

Magazine Article

Essinger, J. (1991, May 28). Just another tool of your trade. Accountancy 108, pp. 91-125.

Journal Article

Armstrong, P. and Keevil, S. (1991). Partition of India. British History Journal 303(2), 105-109.

Interview

Santosh Shukla. (1996, January 10) Professor, Sanskrit Department, JNU - Delhi, 3:00 pm, Delhi, India.

World Wide Web Address

Burke, J. (1992, January/February). Children's research and methods: What media researchers are doing, Journal of Advertising Research, 32, RC2-RC3. [CDROM]. Available: UMI File: Business Periodicals Ondisk Item: 92-11501.

FTP

Watson, L, and Dallwitz, M.J. (1990, December). Grass genera of the world-interactive identification and information retrieval. Flora Online: An Electronic Publication of TAXACOM (22). [Online]. Available FTP: huh.harvard.edu, Directory: pub/newsletters/flora.online/issue22, File:022gra11.txt.

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

Review Process and Policy

As a publisher, we try to adhere to the norms and guidelines formulated by various scholarly societies and UGC to achieve international standards by maintaining quality in publication and by updating our publication system. We expect and encourage all the concerned people associated with the journal. In order to maintain transparency in publication, we encourage all—authors, editors, reviewers and other person/parties involved in the publication process, to avoid any form of conflicts of interest. The corresponding author is responsible for sending us the Conflict of Interest document agreed to and signed by other authors.

1. **Generation Information**
    a. Research Papers, Articles, Technical Reports, Analysis, Resources, Reviews, Perspectives, Progress articles and Insight articles will be peer-reviewed at the discretion of the editors.
    b. If other contributed articles present technical information, may be peer-reviewed at the discretion of the editors.
    c. About the peer-review process, we encourage reviewers to contact us through email.
2. **Criteria for Publication**
    We are constantly trying to raise the standards of our publications. We expect the same kind of commitment from authors to conform to the ethical norms by following our guidelines. Research paper should meet following general criteria:
    a. Quality of Research work and unpublished nature.
    b. Provides strong evidence for its conclusions.
    c. Novel, Innovative and Meaningful to specific field.
    d. Ideally, interesting to researchers in other related disciplines.
    e. In general paper should represent an advance in understanding likely to influence thinking in the field. There should be a discernible reason why the sent work deserves publication.
3. **Plagiarism Policy**
    Authors submitting with us are expected to have proper understanding about the plagiarism issues. Nothing should be copied in any form without proper acknowledgement or legal permission in any way that may violate other's intellectual rights. While they should include acknowledgement to

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

other's works, they should also take permission for using any material from the concerned persons themselves. The journal will not initiate any process nor will remain responsible for any kind of copyright violation.

4. **The Review Process**

   All submitted manuscripts are read by the editorial board. The article is subjected to plagiarism check with software available and rejected if plagiarism is beyond 25%. Editor may decide to get article reviewed by more than one levier. Only those papers that seem most likely to meet our editorial criteria are sent for formal review.

5. **Post Review/ Re review Process**

   We try to evaluate the strength of the arguments raised by each reviewer and by the authors. Our primary responsibilities are to our readers and to the intellectual community at large, and in deciding how best to serve them, we must weigh the claims of each paper against the many others also under consideration.

   We may return to reviewers for further advice, where the authors believe they have been misunderstood on points of fact. We therefore ask that reviewers should be willing to provide follow-up advice as requested.

   When reviewers agree to assess a paper, we consider this a commitment to review subsequent revisions. However, editors will not send are submitted papers back to the reviewers if it seems that the authors have not made a serious attempt to address the criticisms.

   We take reviewers' criticisms seriously; in particular, we are very reluctant to disregard technical criticisms. In cases where one reviewer alone opposes publication, we may consult the other reviewers as to whether s/he is applying an unduly critical standard. We occasionally bring in additional reviewers to resolve disputes, but we prefer to avoid doing so.

6. **Selection of Peer Reviewers**

   We choose reviewers on many factors, including expertise, reputation, specific recommendations and our own previous experience. We check with potential reviewers before sending them manuscripts to review.

ISSN-: 2456-3579
Impact Factor
4.584 SJIF

7. **Access to the Literature by Peer Reviewers**
   If a reviewer does not have access to any published paper that is necessary for evaluation of a submitted manuscript, the journal will supply the reviewer with a copy.
8. **Review Report**
   The primary purpose of the review is to provide the editors with the information needed to reach a decision but the review should also instruct the authors on how they can strengthen or improve their paper to the point where it may be acceptable. As far as possible, a negative review should explain to the authors the major weaknesses of their manuscript, so that authors can understand needs to be done to improve the manuscript. Confidential comments to the editor are welcome.
9. **Timing**
   We are committed to rapid editorial decisions and publication, and we believe that an efficient editorial process is a valuable service to our contributors or authors. We therefore ask reviewers to respond promptly within the number of days agreed.
10. **Anonymity**
    We do not release referees' identities to authors or to other reviewers unless a referee voluntarily signs their comments to the authors. Our preference is for referees to remain anonymous throughout the review process and beyond.
11. **Peer–Review Publication Policies**
    All submitted Research papers are sent for peer review. Authors are welcome to suggest suitable independent reviewers and may also request that the journal excludes one or two individuals. The journal sympathetically considers such requests and usually honors them, but the editor's decision on the choice of referees is final.
    Editors, authors and reviewers are required to keep confidential all details of the editorial and peer review process on submitted manuscripts. Reviewers should be aware that it is our policy to keep their names confidential and that we do our utmost to ensure this confidentiality. We cannot, however, guarantee to maintain this confidentiality in the face of a successful legal action to disclose identity.